विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ
प्रथम संस्करण
१९६४

मूल्य १५.०० रु०

मुद्रक :
अवध प्रिंटिंग वर्क्स
९२, गौतम बुद्ध मार्ग, लखनऊ

कृतज्ञता-प्रकाश

श्रीमान् सेठ सुभकरन जी सेकसरिया ने लखनऊ विश्वविद्यालय की रजत जयन्ती के अवसर पर बिसवाँ सुगर फैक्ट्री की ओर से बीस सहस्र रुपये का दान देकर हिन्दी विभाग की सहायता की है। सेठ जी का यह दान उनके विशेष हिन्दी अनुराग का द्योतक है। इस धन का उपयोग हिन्दी में उच्च कोटि के मौलिक एवं गवेषणात्मक ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए किया जा रहा है जो श्री सेठ सुभकरन सेकसरिया जी के पिता के नाम पर 'सेठ भोलाराम सेकसरिया स्मारक ग्रन्थमाला' में संग्रथित हो रहे हैं। हमें आशा है कि यह ग्रन्थमाला हिन्दी साहित्य के भंडार की समृद्धि करके ज्ञानवृद्धि में सहायक होगी। श्री सेठ सुभकरन जी की इस अनुकरणीय उदारता के लिए हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

दीन दयालु गुप्त
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी तथा
आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय।

विषय-प्रवेश

अवतरणिका

हिन्दी साहित्य एवं भाषा-विज्ञान में अलग-अलग एम० ए० करने के उपरान्त सन् १९६१ में इस अनुसंधान-कार्य में प्रवृत्त हुआ था। शेखावाटी मेरी मातृ-भू रही है, उसके प्रति मेरा स्नेह सहज था। भाषा-विश्लेषण की क्षमता होने पर तो इस बोली में मुझे अलौकिक आनन्द मिलने लगा। यह शोध-कार्य उसी को मूर्तिमान करने का एक बौद्धिक प्रयास है। सन् १९६४ ई० में लखनऊ विश्वविद्यालय ने इस पर पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान कर लेखक को पुरस्कृत किया ; आज उसका ही यह संशोधित एवं यथावश्यक परिवर्द्धित स्वरूप आप लोगों के सामने है।

सर्वेक्षण के लिए चुना गया क्षेत्र, यद्यपि, सीमित है पर शेखावाटी हिन्दी के आदियुग से ही एक सांस्कृतिक इकाई रहा है। ऐसी सुगठित इकाइयों के अध्ययनों की उपयोगिता कम नहीं है। जिस प्रकार यदा-कदा हस्तगत हो जाने वाले प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की प्राप्ति से साहित्यिक परम्परा कीविशृंखलित कड़ियाँ जुड़ती हैं, उसी प्रकार जनपदीय बोलियों के अध्ययन से हम हिन्दी की एक प्रामाणिक ऐतिहासिक भाषा-संघटना में सफल हो सकते है। हिन्दी-भाषा तथा हिन्दी-प्रदेश की जानकारी प्राप्त कराने में यदि लेखक की यह कृति थोड़ा भी योगदान कर सकी तो वह अपने को कृतार्थ समझेगा।

मैं अपने पूज्यपाद गुरुणां गुरु डॉ० दीन दयालु जी गुप्त का आजीवन ऋणी हूँ। वे मेरे ही नहीं, अनुसंधान के क्षेत्र में, न जाने कितनों के प्रेरणा-केन्द्र रहे हैं। साथ ही, श्रद्धेय गुरुवर डा० सरयू प्रसाद जी अग्रवाल का भी चिर कृतज्ञ हूँ जिनके समय-समय पर मिलने वाले अमूल्य व्यावहारिक परामर्शों के विना मेरी यह शोध-नौका किनारे न लग पाती। प्रबंध-निर्देशक परमादरणीय डा० रामेश्वर प्रसाद जी अग्रवाल का विनत आभार मानता हूँ, ज्ञान के इस क्षेत्र में गति-मति-रति प्रदान करने का सम्पूर्ण श्रेय उन्हीं को जाता है। भाषा-सर्वेक्षण काल में कविवर श्री परमेश्वर 'द्विरेफ' भूतपूर्व सदस्य, राजस्थान राज्य साहित्य-अकादमी का विशेष सहयोग मिला, लेखक उनके समक्ष भी विनत है।

लेखक लब्ध-प्रतिष्ठ भाषातत्वज्ञ डॉ० सुकुमार सेन तथा डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, निदेशक हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार का भी आभारी है जिन्होंने प्रबंध को पी-एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत कर शोध-साधना में सिद्धि की मोहर लगा दी।

विषय-सूची

परिशिष्ट



संक्षिप्तांश

अ० पु०	अन्य पुरुष
आ० भा० आ०	आधुनिक भारतीय आर्यभाषा
ई० पू०	ईसा पूर्व
उ० पु०	उत्तम पुरुष
ए० व०, एक व०, एक०	एक वचन
पुं०	पुल्लिंग
ब० व०, बहु० व०, बहु०	बहुवचन
भा० आ०	भारतीय आर्यभाषा
म० पु०	मध्यम पुरुष
म० भा०	मध्यकालीन भारतीय
मू०	मूल
वा० प०	वाक्य पदीय
वि०	विकारी
स्त्री०	स्त्रीलिंग
सं०	संस्कृत
सम्बो०	सम्बोधन
हि०	हिन्दी

१. विषय-प्रवेश

१. १. शेखावाटी प्रदेश—इतिहास व नामकरण :

१. १. १. शेखावाटी वीरभूमि राजस्थान के पूर्वोत्तरी भूखण्ड का नाम है। यों तो सारा का सारा राजस्थान अपने दुर्धर्ष एवं दुर्दान्त योद्धाओं एवं प्रातः स्मरणीया क्षत्राणियों की अमर शूर-वीरता एवं स्वामिधर्म के कारण प्रख्यात है * किन्तु उसका यह प्रदेश (शेखावाटी) कितना 'वीर-रसाप्लावित' रहा होगा जहाँ नरसों के लिये 'प्रलयदिन' शब्द प्रचलित था, क्योंकि न जाने कब प्रलयकालीन स्थिति समुपस्थित हो जाये। अतएव दो दिन कल और परसों ही शान्ति-कालीन वेला मानी गई। आज भी 'प्रलयदिन' का विकसित शब्द-रूप 'परलै दिन' नरसों के लिए बहु-प्रचलित है।

१. १. २. "रामायण काल में यह प्रदेश 'मरुकांतरि' के और महाभारत काल में 'मत्स्य देश' के अंतर्गत गिना जाता था, उन दिनों इस प्रदेश की राजधानी होने का गौरव वर्तमान समय के वैराठ† को प्राप्त था। तत्परवर्ती चौहाणों के शासन-काल में इस प्रांत का सपादलक्ष‡ एवं अनंत ** नाम होना पाया जाता है" ††।

१. १. ३. "जो प्रदेश (इस समय) राजपूताना (अब राजस्थान) कहलाता है, वह रामायण काल के पूर्व समुद्र जल से ढका हुआ था। भूगर्भवेत्ता भी इस बात से सहमत है, क्योंकि अब तक यहाँ पर सीप, शंख, कौड़ी आदि सामुद्रिक पदार्थ मिलते हैं। महाभारत के समय में राजपूताने का उत्तरी भाग (नागौर, बीकानेर आदि)

---

* "There is not a petty State in Rajasthan that has not had its Thermopylae and scarcely a city that has not produced its Leonidas"—James Tod 'Annals and Antiquities of Rajasthan'.

† "वैराठ का ही प्राचीन नाम विराट नगर है"—पं० झावरमल शर्मा 'शेखावाटी के शिलालेख' 'पृथ्वीराज रासो की विवेचना' ग्रंथ में प्रकाशित निवन्ध, पृ० ६७४।

‡ राजपूताने के विभिन्न भागों के प्राचीन नाम—डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृ० ५।

** हर्ष के पहाड़ का शिलालेख, श्लोक १६ वां (एपिग्राफिया इंडिया, भाग २)।

†† शेखावाटी के शिलालेख—पं० झावरमल शर्मा, पृथ्वीराज रासो की विवेचना में प्रकाशित निवंध, पृ० ६७४।

मध्यप्रदेश और पूर्वी भाग (जयपुर, अलवर आदि) मत्स्य देश कहलाता था। और यहीं पर पाण्डवों ने गुप्त वेष में एक वर्ष व्यतीत किया था*। किन्तु श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य ने अपने 'महाभारत मीमांसा' नामक ग्रंथ में लिखा है—"कुरुक्षेत्र के दक्षिण की ओर चलने पर हमें पहिले शूरसेन देश मिलता है। इसकी राजधानी मथुरा यमुना के किनारे प्रसिद्ध ही है। इसके पश्चिम की ओर मत्स्य देश था, जो जयपुर अथवा अलवर के उत्तर में था। जब पाण्डव अज्ञातवास के लिये निकले, तब वे गंगा के किनारे से नैऋत्य की ओर गये। वे आगे यमुना के दक्षिण तीर के पर्वत और अरण्य को छोड़कर पांचाल देश के दक्षिण की ओर से और दशार्ण देश के उत्तर की ओर से यकृल्लोम और शूरसेन देश में शिकार करते हुये और यह कहते हुए कि हम बहेलिये हैं, विराट देश को गये।"

१. १. ४. श्री जगदीश सिंह गहलोत की उद्धृत पूर्व पंक्तियों से स्पष्ट है कि मत्स्य देश में जयपुर तथा अलवर राज्य सम्मिलित थे† जबकि श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य की उक्त पंक्तियों में मत्स्य देश जयपुर अथवा अलवर के उत्तर में तथा शूरसेन देश के पश्चिम में कहा गया है। दोनों की बातों में विरोध होते हुए भी यह यहाँ निस्संकोच कहा जा सकता है कि शेखावाटी मत्स्य देश के अन्तर्गत ही स्थित था क्योंकि जैसा वैद्य जी ने स्पष्ट किया है कि पांडव बहेलिये बने विराट देश को गये जो कि मत्स्य देश में स्थित था। पं० झाबरमल शर्मा का कथन पहले उद्धृत किया जा चुका है जिसमें उन्होंने बताया है कि शेखावाटी प्रदेश की राजधानी होने का गौरव वर्तमान समय के बैराठ को प्राप्त था। फिर बैराठ पर टिप्पणी लिखते हुए उनका कथन है कि बैराठ का ही प्राचीन नाम विराट नगर है। इसके अतिरिक्त वैद्य जी ने मत्स्य देश को शूरसेन देश के पश्चिम में तथा जयपुर अथवा अलवर के उत्तर में कहा है। शेखावाटी प्रदेश की स्थिति सचमुच ऐसी ही है। फिर ऊपर इस तथ्य की पुष्टि के लिए पं० झाबरमल शर्मा एवं श्री जगदीश सिंह गहलोत के कथन भी उद्धृत किये जा चुके हैं। प्रागैतिहासिक काल में कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पांचाल एवं शूरसेन देश ब्रह्मर्षि देश कहलाते थे और ब्रह्मावर्त से भिन्न समझे जाते थे‡।

१. १. ५. इस प्रदेश के बैराठ नगर से प्राप्त शिलालेखों से "मौर्यवंश के प्रसिद्ध राजा चन्द्रगुप्त और उसके पौत्र सम्राट् अशोक का पता चलता है जिनका राज्य इस

---

* राजपूताने का इतिहास—जगदीश सिंह गहलोत, पृष्ठ ३।

† जयचन्द्र विद्यालंकार का कथन इस संबंध में उल्लेखनीय है "कुरु के दक्षिण और चेदि के पश्चिमोत्तर जमना के दाहिने तरफ शूरसेन (मथुरा प्रदेश) और मत्स्य (मेवात अलवर-जयपुर प्रदेश) भी वैसे ही पुराने राष्ट्र थे।" भारतीय इतिहास की रूप-रेखा, जिल्द १, पृ० २६५, द्वितीय संस्करण।

‡ कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पंचालाः शूरसेनकाः।
एषः ब्रह्मर्षि देशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः॥ २. १९ (मनुस्मृति)।

प्रदेश पर भी था। जयपुर* राज्य के बैराठ (विराट) कस्बे से अशोक के दो शिलालेख, वि० सं० पूर्व १९३ (ई० सन् से २५० वर्ष पूर्व) के मिले हैं†।"

१. १. ६. लगभग ७ वीं शताब्दी से ११ वीं शताब्दी तक राजपूतों के कई वंश प्रसिद्धि में आये, जिन्होंने अपने बाहुबल से यहाँ के आदि निवासियों व विदेशियों को हटाकर अपने पृथक-पृथक राज्य स्थापित किये। १० वीं शताब्दी में मुसलमानों के आक्रमण के समय इन्हीं राजपूत राज-वंशों के राज्य राजपूताने में फैले हुए थे‡।

१. १. ७. शेखावाटी जैसा कि राजस्थान के एक भूखण्ड का नाम है, चार या पाँच शताब्दी पूर्व इस नाम का कोई अस्तित्व न था। महाराज शेखा के नाम से उनके वंशज शेखावत और उनका आवास-स्थान शेखावाटी कहलाता है** ।

१. १. ८. राव शेखा जी का जन्म सम्वत् १४९०, राज-सिंहासन सं० १५०२ तथा मृत्यु सं० १५६५ माना गया है††। शेखावाटी नामकरण और ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि के संबंध में पं० रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री कृत 'शेखावाटी प्रकाश' पुस्तक में सविस्तार वर्णन किया गया है जिसे संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है:

१. १. ९. "इस प्रदेश का शेखावाटी नाम क्यों प्रसिद्ध हुआ इस (प्रश्न का उत्तर) राव शेखा जी के वंशधर कछावे शेखावत हैं, इनका इस प्रदेश पर शासन होने से शेखावाटी प्रसिद्ध हुआ (२ प्रश्न) राव शेखा जी कौन थे, यह मूल राज्य आम्वेर नाथ राजा उदयकर्ण जी के प्रपौत्रये इन्हीं से शेखावत सृष्टि की उत्पत्ति होकर राव महाराव राजा राव राजा और ठाकुर उनके इस स्थान के अधीश्वर स्वामी हैं, क्या समस्त देश मूल राज आम्वेर की भूसम्पत्ति है, नहीं, इस भूभाग में अनेक सामन्त उपसामन्तों का राज्य तथा चौहाण, सांखला, सोनगरा, चालुक्य, सोलंखी, निर्वाण, तुवँर, मोर, जोड़ और बड़गूजर इत्यादि थे उनसे क्रमानुसार दो सौ वर्ष में ए भू भाग शेखावत सृष्टि ने अपने अधिकार में करके स्वतंत्र राज्य करते रहे। इस सृष्टि के राजा राय

---

* "शेखावाटी जयपुर राज्याधीन एक प्रांत है। वहाँ आम्बेर जयपुर के कछवाहा राजवंश की एक वलिष्ठ एवं वहु संख्या विशिष्ट शेखावत शाखा का अधिकार है"—पं० झावरमल शर्मा--'शेखावाटी के शिलालेख', 'पृथ्वीराज रासो की विवेचना में प्रकाशित निबंध'।

† राजपूताने का इतिहास—जगदीश सिंह गहलोत, पृ० ६।

‡ राजपूताने का इतिहास—जगदीश सिंह गहलोत, पृ० ६।

** आदर्श नरेश, भूमिका—डा० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, पृ० १।

†† शेखावाटी प्रकाश—पं० रामचन्द भगवती दत्त शास्त्री।

शाल जी का कुल मुख्य राजपद पर प्रतिष्ठित हुए और राजशलोत शाखा बल-विक्रम में उत्कृष्ट होकर राज्य का विस्तार किया है* ।"

१. १. १०. "ए शेखावाटी सृष्टि उपरोक्त प्रदेश भाग पर कालान्तर से विजय प्राप्त करके स्वाधीन स्वभाव से स्वतंत्र शासन करने लगी और मुगल सम्राट् के करद सामन्तर है और अकबर के समय में इस भूभाग में ही भूवृत्ति प्राप्त किये और प्राचीन सामन्तों को निज पराक्रम और सम्राट् की आज्ञा से वंचित कर दिये । प्राया पूर्व सामन्त सृष्टि विलुप्त तथा यवनधर्म में सम्मिलित हो गये अब उनको खोजने पर भी चिन्ह नहीं मिलते† ।" इस सम्बन्ध में संदर्भ-रूप में आगे यह भी कहा गया है कि "इनमें प्रायः विशेष चौहाण थे, कायम-खानी भी चौहाण थे । परंच फिरोजशाह के समय में (सं० १३८६ में) कर्म सिंह मुसलमान होकर कायम खाँ नाम पाया । इसके वंशधर लोग कायम खानी चौहाण राजपूत थे‡ ।"

१. १. ११. "भारत साम्राट् यवन दिल्ली प्रभु: महमद शाह के समय में अकबरी सिंहासन चलायमान हुआ और नादर शाह ईरानी के आगमन के पश्चात् महाराज सवाई जयसिंह जी के समय में शेखावत सृष्टि कांशाली के अधीश्वर राव दीपसिंह जी प्रथम करद सामंत श्रृणी में मूल और वरिष्ट कांड आम्बेर की आधीनता की माला धारण किये ; पश्चात् तीस वर्ष के भीतर ही समस्त शेखावत स्वतंत्रता तथा यवन सम्राट की अधीनता का परित्याग करके आम्बेर नाथ महाराज सवाई ईश्वरी सिंह जी तथा माधव सिंह जी को यथार्थ स्वरूप अपना स्वामी स्वीकार किये** ।"

१. १. १२. "समस्त शेखावत सामन्त उपसामन्त आम्बेरनाथ को प्रतिवर्ष कर देते हैं और ए अपने अधिकारी भूमि पर सम्पूर्ण प्रकार से आधिपत्यता तथा सुशासन और प्रजोन्नति और रक्षा का भार लिये हैं, ठाकुर से लेकर राजा तक सरल स्वभाव स्वतंत्र हैं तथा बृटिश केशरी के आधीन और अनुगत समस्त राजपूताने के राजा महाराजा हैं। शेखावाटी के नेताओं से कर प्रतिवर्ष में ३ बार लिया जाता है अर्थात् आम्बेर के खजाने में कोई भेजते हैं विशेष कर देने वालों को जैपुर में भेजना पड़ता है†† ।"

१. १. १३. महाराज शेखा जी, जिनके नाम से राज्य का नाम शेखावाटी पड़ा, बड़े बलिष्ठ एवं स्वतंत्रता प्रेमी थे । इस तथ्य का सविस्तार उल्लेख पं० झाबरमल शर्मा

---

* शेखावाटी प्रकाश—पृ० ४–५ ।

† शेखावाटी प्रकाश—पृ० ५ ।

‡ शेखावाटी प्रकाश—पृ० ५ ।

** शेखावाटी प्रकाश—पृ० ५ ।

†† शेखावाटी प्रकाश—पृ० ५ ।

कृत 'सीकर का इतिहास' ग्रंथ में है। कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं—'शेखा जी के बाबा के जमाने में आमेर की ओर से यह लाग थी कि नया बछेरा भेंट दिया जावे। उस लाग का शेखा जी ने निर्वाह नहीं किया इस कारण चन्द्रसेन जी ने उन पर चढ़ाई की। ६ बार लड़ाई हुई। अन्तिम लड़ाई में शेखावत के साथ नरुका भी हो गये किन्तु आमेर जाने पर आपस में सुलह हो गई*। ठीक ऐसा ही उल्लेख पं० रामचन्द्र भगवतीदत्त शास्त्री कृत 'शेखावाटी प्रकाश' में भी मिलता है।

१. १. १४. महाराज शेखा जी के पश्चात् शेखावाटी प्रदेश की राजनीतिक उथल-पुथल की ओर संकेत करते हुए पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा जी का कथन है "मुगल साम्राज्य के उन्नति काल में शेखावत सरदार शाही मनसब्दार थे। उक्त साम्राज्य की रक्षा और विस्तार के लिये अनेक बार युद्धों में भाग लेकर उन्होंने वीरता प्रदर्शित की थी, जिसके फलस्वरूप उनका अधिकार उनके अधिकृत प्रदेश पर बना रहा। मुगलों की अवनति के दिनों में आम्बेर (जयपुर) के महाराजा सवाई जयसिंह ने शेखावतों की स्वतंत्रता नष्ट कर उन्हें अपना खिराज गुजार सामन्त बनाया†।"

१. १. १५. शेखावतों का अधिकार स्थापित होने के अनन्तर ही इस प्रदेश का नाम 'शेखावाटी' प्रसिद्ध हुआ। 'वाटी' पट्टी का नामान्तर है। उदयपुर वाटी, झुंझनू-वाटी, नरहड़वाटी, सिंघानावाटी, सीकरवाटी, फतेहपुरवाटी इत्यादि वाटियों या पट्टियों के भिन्न भागों का एक सामूहिकता सूचक नाम "शेखावाटी" है‡।

१. २. शेखावाटी प्रदेश का क्षेत्र-विस्तार एवं जन-संख्या :

१. २. १. शेखावाटी प्रदेश की भौगोलिक सीमाएँ इस प्रकार हैं उत्तर में राजस्थान के चूरू जिले का भूभाग और पंजाब का हरियाना क्षेत्र है, दक्षिण में जयपुर जिला और पूर्व में हरियाना क्षेत्र का कुछ भूभाग और अलवर जिला है तथा पश्चिम में नागौर और चूरू जिलों के कुछ भूभाग हैं अर्थात् उत्तर में पिलानी, सूरतगढ़ से लेकर दक्षिण में उदयपुर तहसील और सीकर तक तथा पश्चिम में फतेहपुर से लेकर पूर्व में खेतड़ी-सिंघाने तक बोली जाने वाली भाषा शेखावाटी है। इस भाषा या बोली का सम्भवतः सर्वप्रथम उल्लेख रेवरेंड जी० मैकेलिस्टर** महोदय ने 'शेखावाटी' नाम से

---

* सीकर का इतिहास, पृ० १०।

† आदर्श नरेश, प्रस्तावना, पृ० १।

‡ शेखावाटी के शिलालेख—पं० झाबरमल शर्मा, "पृथ्वीराज रासो विवेचना" ग्रंथ में प्रकाशित निबंध।

** Survey of the Dialects spoken in the State of Jeypore, Published in 1899.

सन् १८९९ में किया है। तदन्तर सर जार्ज ग्रियर्सन ने भी अपने भाषा-सर्वेक्षण में इसी नाम से उल्लेख किया है* ।"

१. २. २. शासन की सुविधा के लिए अब जिलों का जो विभाजन हुआ है उसके अनुसार शेखावाटी बोली दो जिलों झुंझनू एवं सीकर की भाषा ठहरती है। किन्तु दक्षिण में जो तोरावाटी का भूखण्ड जोड़ा गया है, वहां की बोली तोरावाटी अपनी कुछ विशिष्टताओं के कारण पृथक समझी जाती है† (देखिये परिशिष्ट में दिये गये मानचित्र) यद्यपि शेखावाटी से कोई बहुत अधिक विभेदक बोली नहीं है किन्तु फिर भी उस पर ढुंडारी (जयपुरी) का पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। (इस सम्बन्ध में परिशिष्ट भाग में दिये गये मानचित्र और वाक्य-सूची दृष्टव्य हैं) इसका मुख्य कारण यह रहा है कि दक्षिण में सिंघाने से सांभर तक फैला हुआ अरावली पहाड़ का मुख्य सिलसिला शेखावाटी प्रदेश को तोरावाटी क्षेत्र से अलग करता है।

१. २. ३. शेखावाटी प्रदेश प्रसार की दृष्टि से लगभग पांच हजार वर्ग मील में परिव्याप्त है और सन् १८९१ की जन-गणना के अनुसार इस प्रदेश की जन-संख्या ४,८८,०१७ (चार लाख अठासी हजार सत्रह) थी‡ । किन्तु सन् १९४१ की जन-गणना के अनुसार यह संख्या बढ़कर लगभग दस लाख हो गई। सन् १९५१ की जन-गणना के अनुसार सीकर और झुंझनू जिलों की आबादी १२,६५,४२८ (बारह लाख पैंसठ हजार चार सौ अट्ठाइस) ठहरती है** ।

१. ३. राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता†† :

१. ३. १. प्राचीनकाल कुछ थोड़े से दिनों या वर्षों का न था, और उस समूचे काल में भारतवर्ष के भौगोलिक विभाग और प्रदेशों के नाम भी एक से न थे। राज-

---

* "Immediately to the east of the Bikaner State, lies the Shekhawati tract of Jaipur. The Language of Shekhawati bears the same name as the tract in which it is spoken". Page 130, "Linguistic Survey of India", Vol. IX, central Group, Part II.

† Linguistic Survey of India, Vol. IX, Central Group, Part II.

‡ लिंग्विस्टिक सर्वे आव इंडिया, जिल्द ९, सेन्ट्रल ग्रुप, पार्ट २, सर जार्ज ग्रियर्सन।

** फैक्ट्स अबाउट राजस्थान—पं० प्रेमस्वरूप शर्मा, पृ० ५।

†† विस्तृत अध्ययन के लिये उल्लेखनीय ग्रंथ-हमारा राजस्थान—पृथ्वी सिंह मेहता, राजपूताना इतिहास—डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, राजपूताना इतिहास—पं० मथुरालाल शर्मा, राजपूताने का इतिहास—जगदीश सिंह गहलोत, राजस्थान का इतिहास--जेम्स टाड, अनुवादक : पं० बलदेवप्रसाद मिश्र, राजस्थान की कला—राजस्थान सरकार, फैक्ट्स अबाउट राजस्थान--पं० प्रेमस्वरूप शर्मा।

नीतिक और जातिकृत परिवर्तनों के अनुसार भौगोलिक संज्ञाएँ और परिभाषाएँ भी बदलती रही हैं। आरम्भ में शेखावाटी प्रदेश के इतिहास व नामकरण पर विचार करते समय हमने इस कथन की सत्यता देखी है।

१. ३. २. राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से शेखावाटी प्रदेश का किन-किन प्रदेशों से कैसा-कैसा सम्बन्ध रहा है, इसे "भाषा-भूगोल" अध्याय में भाषा-तात्विक रेखाओं की परिव्याप्ति पर विचार करते समय देखा जायेगा क्योंकि भाषा-तत्वों के वितरण में ये तीनों (राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक) सम्पर्क बड़े महत्व के हैं।

यहां संक्षेप में इन तीनों प्रकार की एकता के आधार पर शेखावाटी बोली के अस्तित्व पर प्रकाश डाला जा सकता है :

१. ३. ३. राजनीतिक दृष्टि से शेखावाटी का सम्बन्ध राजस्थान के पश्चिमोत्तर भाग से रहा है, क्योंकि शेखावतों का राज्य आधुनिक बीकानेर और चुरू जिलों पर भी रहा है और यह भाग कालान्तर में सौगात रूप में दे दिया गया था*। साथ ही साथ जयपुर राज्य से भी अटूट राजनीतिक सम्बन्ध रहा है क्योंकि पहले कहा जा चुका है कि आम्बेर नरेश के शेखावत राजा करद रहे हैं। राजनीतिक सम्पर्क से भी एक भाषा या बोली दूसरी भाषा से प्रभावित होती है और यही कारण है कि शेखावाटी बोली जयपुर एवं बीकानेर राज्यों के मध्य होने से दोनों से प्रभावित देखी जाती है। किन्तु फिर भी यहां कहा जा सकता हैं कि शेखावाटी बोली तथा बीकानेर-राज्य की मारवाड़ी भाषा में जितनी अधिक समानता है, उतनी जयपुर राज्य की ढुंढारी या जयपुरी से नहीं। एक अपरिचित व्यक्ति बीकानेर राज्य की मारवाड़ी तथा शेखावाटी बोलियों में परस्पर भेद स्थापित नहीं कर सकता। अधिकांश विद्वानों ने तो मारवाड़ी को ही शेखावाटी प्रदेश की बोली कहा हैं†। इतना होते हुए भी तुलना में मारवाड़ तथा शेखावाटी वस्तुत: दो (पृथक-पृथक) बोलियां हैं। राजस्थान की अन्य बोलियों की तुलना में दोनों (मारवाड़ी और शेखावाटी) में परस्पर समानता की मात्रा अधिक है, यह बात दूसरी है और यही कारण है कि मारवाड़ी के विस्तार और साहित्यिक समृद्धि के कारण उसे भी मारवाड़ी के अंतर्गत ही समझ लिया गया है। इसके विपरीत भाषाविदों

---

* इस सम्बन्ध में द्रष्टव्य पुस्तकें :—(१) शेखावाटी का इतिहास—ठा० भूरसिंह।
(२) शेखावाटी प्रकाश—पं० रा० भ० शास्त्री।

† (१) राजस्थानी भाषा और साहित्य—पं० मोतीलाल मेनारिया, पृ० ४।
(२) राजस्थानी साहित्य, एक परिचय—प्रो० नरोत्तमदास स्वामी, पृ० १।
(३) फैक्ट्स अबाउट राजस्थान--पं० प्रेमस्वरूप शर्मा, पृष्ठ २८, ११६।

की दृष्टि में उन दोनों का पारस्परिक भेद छिपा न रहा और उन्होंने शेखावाटी को पृथक बोली स्वीकार किया * ।

१. ३. ४. सामाजिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान भी किसी बोली या भाषा को प्रभावित करते हैं। यों तो सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से समस्त राजस्थान को एक समझा जाता है, किन्तु फिर भी शेखावाटी प्रदेश सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से पश्चिमी राजस्थान अर्थात् बीकानेर राज्य के अधिक निकट रहा है। मारवाड़ी और शेखावाटी दोनों की पारस्परिक समानता के आधिक्य का कारण यह भी हो सकता है। साथ ही जयपुर राज्य से भी थोड़ी बहुत सामाजिक तथा सांस्कृतिक एकता अवश्य रही है जिसमें जयपुर राज्य के तोरावाटी प्रदेश से विशेषतः परिशिष्ट भाग में दिये गये मानचित्रों और तोरावाटी एवं जयपुरी के वाक्यों को देखने से विदित होता है कि तोरावाटी बोली शेखावाटी और जयपुरी बोलियों के मध्य की कड़ी है। भाषा के ऐतिहासिक पक्ष पर दृष्टि डालने से यह भी संभव है कि इन सब बोलियों के क्षेत्र में पहले एक ही प्राकृत भाषा का प्रसार रहा हो और उसी से कालान्तर में ये बोलियां विकसित हुई हों और फिर राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक एकता ने इनमें बहुत अधिक भेद न पैदा होने दिया हो। इसीलिए इनमें पारस्परिक विचार विनिमयता की मात्रा अधिक है। अतः ऐतिहासिक दृष्टि से कहा जा सकता है कि एक जननी से उत्पन्न ये सारी बहनें हैं।

१. ४. शेखावाटी बोली का विकास :

१. ४. १. शासन की एकता का प्रभाव भाषा के विकास में सहायता पहुँचाता है और जिसका विस्तार भाषा के ऐतिहासिक विकास के साथ समानान्तर चलता है। प्रागैतिहासिक सामग्री के अभाव में भाषा का स्पष्ट विकास दिखाना सम्भव नहीं। साहित्यिक प्राकृतों एवं अपभ्रंशों से प्राप्त सामग्री इतनी अल्प है कि पूर्ण एवं स्पष्ट भाषा-विकास नहीं देखा जा सकता है। साथ ही अत्यधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि आरम्भ में क्षेत्रीय बोलियों या उनके विभिन्न कथ्य-रूपों को लिखित रूप देने की प्रवृत्ति नहीं रही या रही भी होगी तो वह सामग्री हमें आज प्राप्त नहीं है। पूर्ण सामग्री के अभाव के कारण विद्वानों में इस बात पर पर्याप्त मतभेद है कि किस क्षेत्रीय बोली ने साहित्यिक पाली को जन्म दिया। निस्संदेह शेखावाटी प्रत्यक्षतः राजस्थानी बोलियों

---

* (१) सर्वे आव दि डायलेक्ट्स स्पोकेन इन दि स्टेट आव जयपुर—रेवरेण्ड जी० मैकेलिस्टर।

(२) लिंग्विस्टिक सर्वे आव इंडिया, जिल्द ९, सेन्ट्रल ग्रुप, पार्ट २, पृ० १७।

(३) राजस्थानी भाषा—डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, पृ० ८, ९।

(मारवाड़ी, ढूंढ़ारी, मेवाती, मालवी आदि) से सम्बन्धित है। राजस्थानी बोलियों का (विशेषतः शेखावाटी का) संयोग, उत्पत्ति की दृष्टि से, उत्तर भारत की किस क्षेत्रीय भाषा से है इस पर विचार करना शेखावाटी और राजस्थानी के इतिहास का प्रथम और सबसे जटिल प्रश्न है। वैदिककाल में समय-समय पर राजस्थान की क्षेत्रीय बोलियाँ क्या रही होंगी, यह निश्चित करना दुसाध्य है और इसीलिए कुछ सामान्य कारण ही रखे जा सकते हैं। किन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि प्रागैतिहासिक वैदिक बोलियाँ ही व्यक्ति-देश-काल-भेद के अनुसार विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के रूप में प्रतिष्ठित हुई हैं।

१. ४. २. भारतीय आर्यभाषाओं का ऐतिहासिक विकास तीन कालों में विभाजित करके देखा जा सकता है :

(१) संस्कृत काल—१५०० ई० पू० ... ५०० ई० पू०। यह महात्मा बुद्ध के पूर्व का काल है और इस काल में छांदस तथा संस्कृत ही साहित्यिक भाषाएँ थीं। भाषाशास्त्रियों ने आर्यों की प्राचीनतम भाषा को 'छांदस' नाम से अभिहित किया है जिसमें ऋग्वेद से लेकर उपनिषदों तक की विरचना हुई। यह साहित्यिक भाषा मानी जा सकती है जिसका प्राचीनतम स्वरूप ऋग्वेद में सुरक्षित है। ऋग्वेद की भाषा में विभिन्न स्थानीय बोलियों का सम्मिलन परिलक्षित होता है। ऋग्वेद संहिता के सूक्तों की रचना पंजाब प्रदेश में हुई तत्कालीन पंजाब की भाषा 'उदीच्य' नाम से जानी जाती थी और यही 'आदर्श भाषा' का रूप थी। इसी में आर्य भाषा का प्राचीनतम रूप सुरक्षित है। इस भाषा (छांदस) का निरन्तर क्रमिक विकास संहिताओं, ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों, उपनिषदों में होता गया। वैदिक साहित्य के अन्तिम अंश उपनिषदों और सूत्रों की भाषा व्याकरण रूपों की सरलता के कारण 'संस्कृत' के समीप है।

साहित्यिक भाषा 'छांदस' के अतिरिक्त ऐसी भी अनेक भाषायें या बोलियां थीं जो विविध सामान्य जनता द्वारा व्यवहृत होती थी। किन्तु खेद है कि उनका कोई साहित्य उपलब्ध न होने से आज हम उनके तत्कालीन स्वरूप से परिचित नहीं हो सकते। सदैव सर्वत्र एकाधिक भाषायें या बोलियाँ रही हैं। उनमें किन्हीं एक-दो को साहित्यिक सम्मान मिलने से शेष सामान्य जन-भाषाओं के रूप में ही रह जाती हैं और कालान्तर में हम उनके स्वरूप से परिचय पाने के लिये साहित्यिक सामग्री संकलित नहीं कर पाते। ऊपर ऋग्वेदकालीन जिस भाषा के रूप-परिवर्तन की बात कही गयी है उसके उस परिवर्तन के कारण काल-परिवर्तन और स्थान-परिवर्तन तो रहे ही हैं, साथ ही, जन-भाषाओं या बोलियों का प्रभाव भी। इन समस्त प्रभावों का समीकरण व एकीकरण ही वैदिक भाषा के रूप को क्रमशः सरल बनाता गया और फल स्वरूप एक सुव्यवस्थित तथा विशुद्ध भाषा का प्रादुर्भाव हुआ जिसको सर्वप्रथम

'रामायण' में 'संस्कृत' कहा गया है। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का वह रूप, जिसका विवेचन 'अष्टाध्यायी' में महामुनि पाणिनि द्वारा हुआ, 'संस्कृत' कहलाया। पाणिनि के व्याकरण की आदर्श (स्टैंडर्ड) भाषा 'उदीच्य' ही थी। 'अष्टाध्यायी' के सूत्रों ने संस्कृत को इस प्रकार बांधा की संस्कृत सदा के लिये बंध कर स्थिर हो गई।

(२) प्राकृत काल : ५०० ई० पू० ...... १००० ई०। पालि, विविध प्राकृतें तथा अपभ्रंश इस काल की साहित्यिक भाषायें रहीं; यद्यपि संस्कृत भी शिष्टों के मध्य प्रयुक्त हो रही थी। लौकिक भाषा का संस्कृत रूप स्थिर हो जाने पर जन साधारण द्वारा अपनी भाषा के विकास का कार्य होता रहा और इस प्रकार रूप परिवर्तन होता चला गया। ये जनता की बोल-चाल की भाषायें जनता के लिए जब साहित्यकारों द्वारा साहित्य में प्रयुक्त होने लगीं। ये नवविकसित बोलियाँ या भाषाएँ 'प्राकृत' नाम से प्रसिद्ध हुई। कालक्रमानुसार ये 'प्राकृत' भाषायें विद्वानों के द्वारा दो भागों में विभाजित की गईं—प्रथम प्राकृतें एवं द्वितीय प्राकृतें। प्रथम प्राकृतों का प्रतिनिधित्व पालि तथा अर्धमागधी करती हैं जिनमें बौद्ध एवं जैन—ग्रंथ लिखे गये हैं।

प्रथम प्राकृत-काल (५०० ई० पू० से २०० ई० पू०) का नामकरण भारत के राजनीतिक इतिहास में 'महापद्म-नन्द-काल' रूप में हुआ। इस काल में महात्मा गौतम बुद्ध ने अपने उपदेशों का माध्यम स्थानीय भाषाओं या बोलियों को बनाया। सम्राट् अशोक ने 'लोक-भाषा और लोक-मत' इन दो तथ्यों को अपने शासन-संचालन का आधार बनाया। देश भर में विकीर्ण 'अशोक के शिलालेख' तत्कालीन जन-भाषाओं के प्रामाणिक नमूनों के रूप में ग्रहण किये गये हैं*।

साहित्यिक पालि का आधार विवादास्पद है। वस्तुतः पालि में जनबोली तथा साहित्यिक रूप का मिश्रण है। इसीलिये सिंहली—परम्परा में यह 'मागधी' कहलाती है। ऐसी प्रतीति हो सकती है कि बुद्ध भगवान ने अपने उपदेशों के लिये इस भाषा या बोली विशेष को ही अपनाया हो, किन्तु पालि की व्याकरणिक संरचना हमें इसे 'मध्य-देशीया' कहने को विवश करती है†।

---

* "The Ashokan inscriptions are the oldest and best contemporary records of M. I. A."—Dr. Sukumar Sen—The comparative Grammar of Middle Indo-Aryan, Page 5.

† (१) बुंदेली का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन—डा० रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल, पृ० ८, ९।

(२) सामान्य भाषा विज्ञान—डा० बाबूराम सक्सेना, पृ० ३११।

(३) 'दि ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट आव दि बंगाली लैंग्वेज'—डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, पृ० ५२।

(४) 'भारतीय इतिहास की रूप-रेखा'—जयचन्द्र विद्यालंकार, पृ० ३७३।

डा० सुनीति कुमार चटर्जी के शब्दों में "ईसा के पूर्व के समय के मध्य देश की प्राचीन प्राकृत का परिचय मिलता है पाली से, ईसा के पूर्व की द्वितीय शती के कलिंग के महाराज खारवेल की लिपि से, और ईस्वी द्वितीय शतक में बौद्ध दार्शनिक धर्म-गुरु तथा संस्कृत के महाकवि अश्वघोष के लिखे हुये कुछ संस्कृत नाटकों से। पाली, दरअसल मध्य देश ही की भाषा का साहित्यिक रूप है, मगध की बोली के आधार पर पाली नहीं बनी। यद्यपि चालू तौर पर अभी तक ज्यादा विद्वानों का विश्वास है कि पाली और प्राचीन मागधी प्राकृत एक ही बोली है* ।"

प्राकृत-काल का द्वितीय चरण—२०० ई० पू० से ६०० ई० तक माना गया है। भारतीय इतिहास में यह काल 'हिन्दू-संस्कृति-निर्माण-काल' के नाम से प्रसिद्ध है। महात्मा गौतम बुद्ध ने निरर्थक कर्म-कांड का घोर विरोध किया और प्रतिक्रिया स्वरूप आचार-प्रधान धर्म का प्रसार करके आर्यावर्त में नया जीवन ला दिया था। पर अब उसमें ह्रास के चिह्न परिलक्षित होने लगे थे। अन्तिम मौर्य राजा जब अपनी कायरता को छिपाने के लिये इस धर्म की आड़ लेने लगे, तब उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया हुई और एक नये पौराणिक धर्म का अभ्युदय हुआ। बौद्ध-धर्म यदि जनता के लिये था तो वैदिक धर्म का यह नूतन स्वरूप भी उससे कहीं आकर्षक बनकर जनता का धर्म होकर सामने आ उपस्थित हुआ† ।

इस काल में शौरसेनी प्राकृत विशेष महत्वपूर्ण थी। महाराष्ट्री इसी की एक विशेष शैली थी। किन्तु प्राकृत वैयाकरणों तथा अन्य प्राचीन विद्वानों ने महाराष्ट्री को ही 'स्टैंडर्ड' (आदर्श) प्राकृत माना। इसी काल में आकर प्राकृत भी साहित्यिक रूप लेने लगी थी। इस काल के कुछ पहले से ही संस्कृत जन-भाषा न रह गयी थी। वह केवल भारत में शिष्ट-सुसंस्कृत जनों के विचार-विनिमय के माध्यम रूप में अवशिष्ट थी और उसका यह रूप १६ वीं सदी तक साहित्यिकों एवं वाङ्मयकारों द्वारा सवाँरा जाता रहा।

प्राकृतों के इस द्वितीय विकास-काल में हमारे सामने एक समृद्ध धार्मिक एवं साहित्यिक भाषा आती है, वह है पालि। पालि में बौद्धों का 'थेरवादी' साहित्य तथा हीनयान शाखा का साहित्य मिलता है। पालि मूलतः मध्य-देश की प्राकृत (शौरसेनी) से विकसित हुई थी, जिसमें अनेक मागधी-तत्व भी सम्मिलित हो गये, यह अब निश्चित प्राय: है‡ । मध्यदेश में स्थित होने के कारण पालि सरलता से प्रान्तीय स्तर

---

* राजस्थानी भाषा—पृ० ४५।

† बुंदेली का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन—डा० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल, पृ० ११।

‡ ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट आव बंगाली लैंग्वेज, जिल्द १, (प्रस्तावना)—डा० सुनीति कुमार चटर्जी, पृ० ५७।

से उठकर भारत की एक व्यापक साहित्यिक भाषा बनने का गौरव-लाभ कर सकती थी। किन्तु उपर्युक्त इस नये धर्मान्दोलन के कारण ऐसा संभव न हो सका। बात यह हुई कि वैदिक धर्म पर आधारित इस नये धर्मान्दोलन को राजाश्रय प्राप्त हुआ जिससे पालि को बड़ी क्षति पहुँची और वह केवल बौद्ध-साहित्य की भाषा बन कर धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित हो गई। वैदिक धर्म की इन परिवर्तित परिस्थितियों के प्रभाव से बौद्ध-धर्म अछूता न रहा। फलस्वरूप 'महायान' बौद्धों का एक अभिनव सम्प्रदाय उठ खड़ा हुआ। इस सम्प्रदाय ने महात्मा बुद्ध की चेतावनी* पर ध्यान न देकर बौद्ध-ग्रंथों के लिये संस्कृत भाषा को प्रश्रय दिया। अतएव संस्कृत-प्रवेश (Infiltration) भी पालि की व्यापकता में व्याघात डालने वाला एक कारण निश्चित रूप से रहा है।

भास, शूद्रक, कालिदास, अश्वघोष प्रभृति नाटककारों के संस्कृत-नाटकों में और विविध प्राकृत-व्याकरण-ग्रंथों में प्रयुक्त प्राकृतों के कथ्य-रूप का विकास अशोक के पहले हो चुका था। इसका कारण यह है कि अशोक के प्रख्यात शिलालेखों के अतिरिक्त साँची तथा भरहुत के प्राकृत-अभिलेख (Inscriptions) २०० ई० पू० तक के हैं। इन प्राकृत अभिलेखों के सम्बन्ध में डा० बूलर का अभिमत है कि इनकी भाषा साहित्यिक पालि से अत्यल्प भिन्नता रखती है और पद-रचना तो पालि एवं गिरनार के शिलालेखों के ही समीप है†। इस कथन से अनुमान लगता है कि आलोच्य क्षेत्र में पालि को जन्म देने वाली क्षेत्रीय प्राकृत विकसित हो रही थी। भारतीय कथा-साहित्य का मूल-स्रोत गुणाढ्य की वड्डकहा (वृहत्कथा) इसी विकसित रूप का ही प्रतिफल माना जा सकता है‡।

पालि के अनन्तर मागधी, शौरसेनी और महाराष्ट्री प्राकृतों के रूप भी साहित्य-क्षेत्र में प्रतिष्ठित हुये। कालान्तर में वैयाकरणों ने प्राकृतों को भी अपने नियमों से स्थिर कर दिया। परन्तु जन-भाषा का विकसन-शील प्रवाह तो बँध सकता नहीं था। अतएव वह जनता के मध्य विकसित होता रहा और लगभग ५०० ई० के आस-पास लोक-भाषा के इस नव-विकसित रूप को साहित्यकार साहित्य में प्रश्रय देने लगे। यह नव विकसित लोक-भाषा 'अपभ्रंश' नाम से अभिहित हुई।

मध्य भारतीय आर्यभाषा (प्राकृत) के विकास का तृतीय सोपान 'अपभ्रंश' काल है। यह ५०० ई० से १००० ई० तक माना गया है। संस्कृत एवं प्राकृत दोनों से

---

* भिक्षुओ, बुद्ध-वचन को छंद में न करना चाहिए। जो करेगा उसे 'दुष्कृत' अपराध लगेगा ... अनुजानामि भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया बुद्धवचनं परियापुणितं (अनुमति देता हूँ, भिक्षुओ, अपनी भाषा में बुद्ध-वचन सीखने की)—पालि महाव्याकरण—भिक्षु जगदीश काश्यप, भूमिका, पृ० ९।

† हिस्टारिकल ग्रामर आव इंस्क्रिप्शनल प्राकृत्स—डा० एम० एम० माहंडले, पृ० १४८।

‡ बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन—डा० रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल, पृ० १२।

भिन्न बताने के लिये उसे 'अपभ्रंश' संज्ञा दी गयी। इस नाम का सर्व प्रथम प्रयोग पतंजलि के महाभाष्य में मिलता है—"एकस्यैव हि शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः तद् यथा गौरित्यस्य शब्दस्य गावी गोणी गोता गोपोतलिकेत्यादयो बहवोऽपभ्रंशाः* ।" यद्यपि पतंजलि ने 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग किसी भाषा विशेष के अर्थ में नहीं किया है। वे तो उन शब्दों या प्रयोगों को अपभ्रंश कहना चाहते है जो पाणिनीय व्याकरण के विरुद्ध तथा असंस्कृत हैं। किन्तु लोक-प्रचलित हैं। वाक्यपदीयकार भर्तृहरि ने भी अपभ्रंश को इसी अर्थ में स्वीकार किया है† । इन्हीं क्षेत्रीय विविध प्रयोगों ने कालान्तर में आधुनिक आर्यभाषाओं—हिन्दी (राजस्थानी, ब्रज, भोजपुरी, अवधी आदि) मराठी, बंगला, गुजराती, पंजाबी आदि को जन्म दिया।

राजनीतिक दृष्टि से यह काल 'विघटन' का काल था। राजसत्ता अनेकानेक राजकुलों के हाथों में बंट गयी, पर गुप्त राजाओं द्वारा सुनियोजित शासन-व्यवस्था लगभग यथावत बनी रही। शासनाधीन ग्रामों और नगरों की पंचायतें स्थानीय प्रबन्ध स्वतंत्रता से करती थीं। साम्राज्य छोटी-छोटी इकाइयों में विभक्त था। इसका प्रमाण हम शेखावाटी और उसके आस-पास के राज्यों के नामकरण से पा सकते हैं। प्रस्तुत अध्याय के आरम्भ में कहा जा चुका है कि सातवीं शताब्दी से ११वीं शताब्दी तक राजपूतों के कई वंश प्रसिद्धि में आये, जिन्होंने अपने पराक्रम से पृथक किन्तु छोटे-छोटे राज्य स्थापित किये। शेखावाटी के दक्षिण में स्थित तोरावाटी, दक्षिण पूर्व में स्थित अहीरवाटी और मेवाटी आदि राज्य स्पष्ट संकेत करते हैं कि इन क्षेत्रों में तँवरों, अहीरों तथा मेवों का बोल-बाला था। शेखावाटी में भी राजपूत नरेश शेखा जी के पूर्वज कछवाहों का आधिपत्य था, किन्तु राज्य का नाम कालान्तर में शेखाजी के नाम से ही प्रसिद्ध हुआ और उनके वंशज शेखावत कहलाये। इस उथल-पुथल के काल में नहीं कहा जा सकता है कि आलोच्य क्षेत्र (शेखावाटी) एक सुगठित इकाई रही थी, क्योंकि ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं। इस काल में राज्यों की सीमायें प्रायः अस्थिर थीं, कभी विस्तृत होती थीं तो कभी संकुचित् होती थीं। यह सब कुछ राजा की शक्ति एवं दूरदर्शिता पर निर्भर करता था। इन राजनीतिक उथल-पुथलों के कारण भाषा की आन्तरिक व्यवस्था में कमाधिक मात्रा में परिवर्तन अवश्य हुये होंगे। देश-काल-भेद के अनुसार भी स्वाभाविक परिवर्तन निरन्तर होते रहे होंगे। इस काल

---

* महाभाष्यः (पस्पशाह्निक)।

† शब्दसंस्कारहीनो यो गौरिति प्रयुयुक्षिते।
तमपभ्रंशमिच्छन्ति विशिष्टार्थनिवेशिनम् ॥

—वा० प० प्रथम काण्ड का० १४८।

[illegible] का [illegible]

[illegible] और [illegible] ने [illegible] के अपभ्रंशों के [illegible] हैं— [illegible] । कुछ अन्य [illegible] ने भी इन [illegible] को— [illegible] अपभ्रंश के [illegible] । [illegible] , [illegible] , [illegible] , [illegible] , [illegible] आदि [illegible] हैं [illegible] , [illegible] , [illegible] , [illegible] आदि [illegible] है । [illegible] अपभ्रंश [illegible] । [illegible] साहित्य [illegible] । [illegible] अपभ्रंश [illegible] साहित्य का [illegible] हुआ और यह [illegible] साहित्य [illegible] । [illegible] राजस्थान [illegible] राजस्थान का ही [illegible] १००० ई० के [illegible] राजस्थानी की उत्पत्ति हुई । [illegible] साहित्य [illegible] राजस्थानी का ही [illegible] है ।

राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति के विषय में यह एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि [illegible] राजस्थानी की उत्पत्ति हुई है, [illegible] अपभ्रंश से [illegible] । [illegible] अपभ्रंश [illegible] हुआ है । [illegible] अपभ्रंश [illegible] है [illegible] । इसी कारण इस [illegible] अपभ्रंश को [illegible] है । इस सम्बन्ध में [illegible] है— [illegible] के [illegible] अपभ्रंश [illegible] सम्बन्ध हुआ [illegible] है कि यह [illegible]

* [illegible]

२ राजस्थानी भाषा, पृ० [illegible]

प्रान्तों से ही आई थी; पर किस राह से आई थी, इसका कोई भी पता अब नही चलता। यह सिंध की राह से आ सकती थी, आज-कल के हिसार, शेखावाटी, जयपुर, अजमेर, उदयपुर की राह से भी आ सकती थी। ऐसे अनुमान के कुछ कारण हैं। पश्चिम-पंजाब की बोली से सौराष्ट्र की बोली का कुछ विशेष मेल अशोक के समय से भी दीख पड़ता है। परवर्ती काल में जब नई-नई विशेषतायें प्रकट हुई, तबसे राजस्थानी-गुजराती में तथा पंजाबी (खास करके पश्चिमी पंजाबी में) साथ-साथ दृष्टिगोचर हुई। आद्य 'द्व' का 'ब' होना, कुछ संयुक्त व्यंजनों में समीकरण का अभाव 'क्ष' का 'छ' भाव, इन सब विषयों में गंधार या 'उदीच्य खण्ड' के शाहबाजगढ़ी और मानसेहरे के अशोक-लेखों की भाषा से गिरनार की भाषा का साम्य नजर आता है। आजकल की पश्चिम-पंजाबी से राजस्थानी (मारवाड़ी तथा जयपुरी बोलियों) का कुछ लक्षणीय मेल है, जैसे भविष्य काल की क्रिया के तिङ्-प्रत्यय, जो संस्कृत 'स्यति स्यतः स्यन्ति' आदि से उत्पन्न हुये है, राजस्थानी और गुजराती तथा पश्चिमी पंजाबी में अपने 'स'-कार की रक्षा करते हुये आज तक चले आये हैं* ।"

कुछ विद्वान 'नागर अपभ्रंश' के स्थान पर 'गुर्जरी अपभ्रंश' को राजस्थान-गुजरात की भाषा कहना पसन्द करते हैं। पं० मोतीलाल मेनारिया का कथन है कि "नागर अपभ्रंश से अभिप्राय नागर जाति की अपभ्रंश से है या नागरिकों की अपभ्रंश से, यह साफ नहीं है। और सौराष्ट्री अपभ्रंश नाम कुछ संकीर्ण है। इससे इसका दायरा केवल सौराष्ट्र (काठियावाड़) ही तक सीमित होना सूचित होता है। हमारे ख्याल से श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी का रखा हुआ नाम 'गुर्जरी अपभ्रंश' अर्थात् गूजर देश की अपभ्रंश अधिक सार्थक है। इस नाम से इसके वास्तविक क्षेत्र का अन्दाजा हो जाता है। क्योंकि प्राचीन समय में गुर्जर देश में आधुनिक गुजरात और आधुनिक राजस्थान दोनों के कुछ अंश सम्मिलित थे जहाँ यह बोली जाती थी। इसी गुर्जरी अपभ्रंश से राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति हुई जिसका एक रूप आगे जाकर डिंगल नाम से विख्यात हुआ† ।" ऊपर 'प्राकृत सर्वस्व' और 'प्राकृत-चन्द्रिका' में वर्णित अपभ्रंश के अनेक भेद-विभेदों को बताया जा चुका है। इनमें गुर्जरी अपभ्रंश का उल्लेख हुआ है। निश्चित है कि इस अपभ्रंश का प्रसार क्षेत्र मूलतः राजस्थान रहा है और उसमें भी अलवर तथा शेखावाटी राज्य, क्योंकि लगभग ६ ठीं-७ वीं शताब्दी से १३वीं-१४वीं शताब्दी तक इन दो राज्यों (अलवर तथा शेखावाटी) में गुर्जरों की एक शाखा बड़गूजर

---

* राजस्थानी भाषा, पृ० ४७-४८।

† राजस्थानी भाषा और साहित्य—पं० मोतीलाल मेनारिया, पृ० ३।

का राज्य रहा* और कछवाहों ने बड़गूजरों से ही राज्य छीना था†। इस काल की झांकी प्रस्तुत करते हुये डा० एल० पी० तेस्सितोरी ने अपनी 'पुरानी राजस्थानी' पुस्तक की भूमिका में यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि "गुजरात और राजपूताना एक ही आर्य कबीले गुर्जरों से आबाद थे। ये गुर्जर पश्चिमोत्तर भारत के प्राचीन सपादलक्ष से चल कर पूर्वोत्तर राजपूताना में आ बसे थे और फिर क्रमशः पश्चिम में फैलते हुये गुजरात में जा पहुंचे। साथ ही उन्होंने अपने देशान्तरण के विभिन्न प्रदेशों पर अपनी भाषा भी लाद दी‡।" डा० भगवानलाल इन्द्र ने अपने 'गुजरात का आरम्भिक इतिहास'** में दिखलाया है कि गुजरात में गुर्जरों का प्रवेश ४००: ६०० ई० के बीच हुआ। इस सम्बन्ध में रैण्ड मैक्नली कृत तथा आर० आर० पामर द्वारा सम्पादित 'एटलस आव वर्ल्ड' दर्शनीय है जिसमें पूर्वी और दक्षिणी एशिया की लगभग ५५० ई० की राजनीतिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुये आधुनिक गुजरात और राजस्थान के भूभाग को गुर्जर राज्य के अन्तर्गत दिखाया गया है (पृष्ठ १२२-१२३)।

इस प्रकार गुर्जरों के आबाद तथा उनका प्रभुत्व होने के कारण राजपूताने से लेकर गुजरात तक बोली जाने वाली भाषा का नामकरण उन्हीं के आधार पर 'गुर्जरी अपभ्रंश' हो गया हो तो विस्मय ही क्या? अतएव शेखावाटी बोली का मूलस्रोत यही गुर्जरी अपभ्रंश मानी जा सकती है। इस गुर्जरी अपभ्रंश से समीपस्थ शौरसेनी अपभ्रंश भी प्रभावित हुई और यहां तक कि शौरसेनी अपभ्रंश के निर्माण में उसका प्रमुख हाथ रहा††। "अब तक जो प्रमाण प्राप्य हैं, उनके आधार पर यह सम्भव नहीं है कि प्राचीन पश्चिमी हिन्दी की पश्चिमी सीमा, प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी की पूर्वी सीमा निर्धारित की जा सके। परन्तु बहुत संभव है कि जिस युग से इस समय हमारा अभिप्राय है, प्राचीन पश्चिमी हिन्दी आज की अपेक्षा पश्चिम की ओर अधिक फैली हुई थी और उसने कम से कम आधुनिक पूर्वी राजस्थानी के क्षेत्र का कुछ भाग अधिकृत कर लिया था। यह इतनी दूर फैल गयी थी कि प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी की सीमा ही इसकी सीमा हो गयी या ये दोनों किसी मिश्रित मध्यवर्ती बोली के रूप

---

* राजपूताना म्यूजियम अजमेर रिपोर्ट, १९१८/१९ पृ० २।

† टाड कृत राजस्थान, भाग १, पृ० १४०, १४१।

‡ पुरानी राजस्थानी—अनुवादक डा० नामवर सिंह, पृ० ४।

** बाम्बे गजेटियर, जिल्द १, भाग १ (१९२६) पृ० २।

†† "जो हो, इतना निश्चित है कि सपादलक्ष से गुर्जर जो भाषा अपने साथ ले आये, शौरसेनी अपभ्रंश के निर्माण में उसका मुख्य हाथ है।" पुरानी राजस्थानी—अनुवादक डा० नामवर सिंह, पृ० ६-७।

से कुछ अलग रह गयी थीं—यह मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। फिर भी इनमें से द्वितीय विकल्प के पक्ष में मेरा झुकाव है*।" यदि इस मध्यवर्ती बोली का अस्तित्व स्वीकार कर लिया जाये तो उसे प्राचीन पूर्वी राजस्थानी कहना युक्ति-युक्त होगा और जिन बोलियों को आजकल ढुंढारी (जयपुरी) और मेवाती की सामान्य संज्ञा के अन्तर्गत रखा जाता है उनका प्राचीन प्रतिनिधित्व करने वाली यही मध्यवर्ती भाषा रही होगी‡।" यहाँ यह संकेत किया जा सकता है कि प्राचीन पूर्वी राजस्थानी के विकास में मध्यदेशीय अपभ्रंश शौरसेनी का भी प्रभाव काम करता रहा है जैसा कि डा० तेस्सितोरी और डा० चटर्जी के उद्धृत कथनों से स्पष्ट है†। यही कारण है कि शेखावाटी राजस्थानी और हिन्दी के बीच की कड़ी जैसी लगती है।

अस्तु कालान्तर में उपर्युक्त अपभ्रंशों की भी वही गति हुई जो पूर्वोक्त प्राकृतों की हुई थी अर्थात् इनमें भी साहित्य-सृजन होने लगा और वैयाकरणों ने इन्हें भी व्याकरण के अस्वाभाविक नियमों में बांधना शुरू कर दिया जिससे इनके दो रूप हो गये। एक रूप तो वह रहा जिसमें साहित्य-सृजन होता था और जिसका जन-साधारण में प्रचार रहा, वह था दूसरा रूप। प्रथम रूप तो व्याकरण के नियमों में बंध कर स्थिर हो गया, जबकि दूसरा सतत् विकसित होता रहा और जैसे प्राकृतें पहले अपभ्रंशों में परिवर्तित हो गयी थीं, उसी प्रकार अपभ्रंश भी आधुनिक आर्य भाषाओं में रूपान्तरित हो गई।

(३) भाषा-काल : आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास अपभ्रंश काल के बाद (१००० ई० से) आरम्भ होता है। भारतीय जन-जीवन में यह युग राजनीतिक चेतना के ह्रास का युग था। ईश्वर पर विश्वास बढ़ गया, जिससे पुरुषार्थ कुण्ठित हो गया। अरबों ने सिन्ध को जीत लिया किन्तु भिक्षुओं की भीड़ तटस्थ दर्शक बन कर देखती रही। मिहिर भोज जैसा प्रतापी राजा मुलतान को केवल इसलिये नहीं ले सका कि वहाँ के मुसलमानों ने धमकी दी थी कि यदि आगे बढ़े तो सूर्य-मन्दिर तोड़ दिया जायेगा। चालुक्य राज जयसिंह भी विजय-प्राप्ति के लिये सिद्धियों

---

* पुरानी राजस्थानी, अनुवादक डा० नामवर सिंह, पृ० ६, ७।

† (क) "पूर्वी राजपूताना की प्राचीन भाषा वह प्राचीन पूर्वी राजस्थानी हो चाहे प्राचीन पश्चिमी हिन्दी, मूल रूप में गुजरात और पश्चिमी राजपूताना की भाषा की अपेक्षा गंगा द्वाब की भाषा के अधिक निकट थी।" पुरानी राजस्थानी, अनुवादक डा० नामवर सिंह, पृ० ७।

(ख) "मालवी तथा पूर्वी राजस्थानी शौरसेनी अपभ्रंश से भी घनिष्ठ रूप से संबद्ध थी।" राजस्थानी भाषा—डा० सुनीति कुमार चटर्जी, पृ० ६४।

‡ पुरानी राजस्थानी, पृ० ७।

पर आश्रित रहे। जब शासक वर्ग का यह हाल था तो जन-साधारण का क्या कहा जाये। १०वीं सदी तक हास कम है, तदनन्तर एका-एक अधिक।

यह काल धर्म-कर्म की दृष्टि से अन्धविश्वासों का काल था। अनेक बाह्या-डम्बरों का बोल-बाला था। इस काल के धार्मिक सम्प्रदायों की संख्या भारत की एक अभूतपूर्व घटना थी। विवेक-शून्यता से सामाजिक जीवन भी पर्याप्त विशृंखलित हो गया। कट्टर जातिवाद, पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, समुद्र-यात्रा-निषेध आदि संकीर्णताएं १०वीं सदी से १६वीं सदी तक उत्तरोत्तर पनपती गयीं।

अस्तु उपर्युक्त विषम परिस्थितियों का प्रभाव समाज को एक सूत्र में बाँधने वाली 'भाषा' पर पड़ना स्वाभाविक है। इस संक्रान्ति-युग (१०वीं से १६वीं सदी तक) की भाषा-विविधता भाषा-शास्त्रियों के लिये एक जटिल प्रश्न बना हुआ है। अतः आधुनिक आर्यभाषा हिन्दी के विकास की भी स्पष्ट दो स्थितियां मानी जा सकती हैं। प्रथम स्थिति में आदि विकास देख सकते हैं, जो १००० ई० से १६०० ई० के लगभग तक माना जा सकता है। हिन्दी का यह प्राचीन रूप हम 'प्राकृत पैंगलम्' तथा उसके साथ ही 'रासो' ग्रन्थों की भाषा में देख सकते हैं। रासो ग्रंथों की भाषा में आधारभूत शब्दावली और व्याकरणिक गठन तो नव्य भारतीय आर्यभाषाओं का मिश्र रहा है, किन्तु प्राकृत अपभ्रंश के शब्दों के बाहुल्य के कारण भाषा में कृत्रिमता की अच्छी-खासी छौंक आ गयी है। षड्भाषा के प्रति कवि की आस्था और हिन्दी के आदि-कालीन निर्विभक्तिक प्रयोगों के कारण 'पृथ्वीराज रासो' की भाषा तो अपभ्रंश के अधिक समीप आ गयी है*।

हिन्दी के विकास की प्रथम स्थिति का प्राचीन रूप सन्त-कवियों द्वारा अपनायी गयी सधुक्कड़ी भाषा में भी देख सकते हैं। यह भाषा का प्राचीन रूप भारत की एक व्यापक काव्य-भाषा का प्रतिनिधित्व करता हुआ दृष्टिगोचर होता है। चाहे महाराष्ट्र के सन्त नामदेव तथा तुकाराम हों या पंजाब के गुरु नानक अथवा पुरबिहा कबीर, सभी ने जिस भाषा का व्यवहार किया है, उसका व्याकरणिक गठन रासो ग्रंथों की भाषा से अधिक भिन्न नहीं कहा जा सकता है। फिर भी खड़ी बोली (हिन्दी) के विशेष पुट एवं प्रान्तीय शब्दावली की प्रचुरता के कारण उन सबका काव्य जन-साधारण के अधिक निकट आ गया है। वस्तुतः यह मिश्रित भाषा परवर्ती स्थिति (१६०० ई० के बाद) की क्षेत्रीय जन-भाषाओं की सूचना ऊँचे स्वर में दे रही है।

---

* पृथ्वीराज रासो की भाषा—डा० नामवर सिंह, पृ० ३३।

† बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन—डा० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल, पृ० १६।

क्षेत्रीय जन-भाषायें : ९वीं सदी से १२वीं सदी तक समय-समय पर भारत में न जाने कितने सामन्ती राज्यों का अभ्युदय हुआ—बुन्देलखण्ड के चन्देले, छत्तीसगढ़ के कलचुरि, अवध के गहरवार, बिहार के पाल, बंगाल के सेन, अजमेर के चौहाण, मालवा के परमार, सौराष्ट्र के चालुक्य और पूर्वी राजपूताने के कछवाहे, शेखावाटी के बड़गूजर, अहीरवाटी के आभीर, तोरावाटी के तँवर इस बात को प्रमाणित करते हैं कि बहुत सी प्राचीन उपजातियाँ एवं गण-गोत्र मिल कर नवोदित जातियों तथा लघुराष्ट्रों का रूप धारण कर रहे थे। इन रजवाड़ों के राज-दरबारों में चाहे कृत्रिम साहित्यिक भाषा को ही प्रश्रय मिला हो, पर जातियों की विभिन्न इकाइयों के आधार पर भाषा—इकाइयों का विकास अवश्य स्वीकार किया जा सकता है। यही कारण है कि इस युग में एक ओर विद्यापति ने मैथिली को, सिद्धों ने मगही को, सूफी सन्तों ने अवधी को, ग्वालियर के चतुरों ने ग्वालियरी को और अमीर खुसरो ने खड़ी बोली को तथा जैन साहित्यकारों ने प्राचीन राजस्थानी* को अपनाया। तथ्यतः यह काल जनभाषाओं के अभ्युदय का काल था।

जनभाषाभ्युदय के इस काल में भी शेखावाटी बोली का स्वतंत्र साहित्यिक विकास नहीं हो पाया। इसका प्रमुख कारण यही जान पड़ता है कि पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) शेखावाटी का साहित्यिक उत्तरदायित्व जो सम्भाल रही थी। इस क्षेत्र में ब्रज एवं हिन्दी भी कवियों के काव्याभिव्यक्ति का माध्यम रही हैं। अतएव शेखावाटी का विशिष्ट रूप निखर न सका।

गुर्जरी अपभ्रंश के पूर्वोत्तरी रूप से शेखावाटी बोली का विकास हुआ है परन्तु इस विषय में कोई ऐसी स्पष्ट सीमा-रेखा नहीं खींची जा सकती जो इन दोनों को स्पष्ट रूप से पृथक-पृथक कर दे। प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी में ही शेखावाटी का प्राचीन रूप देखा जा सकता है। यही पूर्ववर्ती रूप ब्रजभाषा (पिंगल) और मुगलों तथा बाद में अंग्रेजों के आगमन से अरबी, फारसी और अंग्रेजी की शब्दावली आदि को ग्रहण करता हुआ आधुनिक भारतीय आर्यभाषा शेखावाटी के रूप में सामने आया। विदेशी विशेषकर अरबी-फारसी शब्दावली का समावेश शेखावाटी में हुआ अवश्य, किंतु उतना नहीं जितना हो सकता था क्योंकि "दिल्ली के बादशाहों के हमले राजपूताने में लूट-खसोट, मार-काट और फतह का झंडा फहराने की गर्ज से होते थे जिनका असर देश पर स्थायी नहीं रहता था। इसलिए राजपूताने की रियासतें पूर्ववत् अपनी स्वतंत्रता बनाये रखीं†।" किन्तु फिर भी दिल्ली राज्य की समीपता होने के कारण

---

* परम्परा, भाग १२ (राजस्थानी साहित्य का आदि-काल) त्रैमासिक शोध पत्रिका, राजस्थानी शोध-संस्थान, जोधपुर, पृ० १०।

† राजपूताने का इतिहास—श्री जगदीश सिंह गहलोत, पृ० २९।

तथा अबुल-फ़ज़ल कृत 'आइने अकबरी' के अनुसार अकबर आदि बादशाहों के तांबे के सिक्के शेखावाटी प्रदेश के सिंघाना-खेतड़ी नगरों में ढलने के कारण शेखावाटी में बराबर अरबी-फ़ारसी के शब्द आते रहे। शेखावाटी प्रदेश के सिंघाना-खेतड़ी नगरों में ताम्बे की विशाल खानें आज भी उपलब्ध हैं, जहाँ भारत सरकार ने करोड़ों रुपये की लागत की योजना बना कर कार्य आरम्भ करवा दिया है और अब तांबा प्रचुर मात्रा में निकाला भी जा रहा है।

कबीर, नानक, दादू आदि सन्तों ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के बीज बोना आरम्भ कर दिया था। परस्पर आदान-प्रदान की भावना-लता जब अंकुरित हुई तो स्वाभाविक था कि हिन्दू और मुसलमान अपने आपसी वैमनस्य को भूल कर एक दूसरे के समीप आते और इस सम्पर्क को माध्यम भाषा का, शब्दावली की दृष्टि से, प्रभावित होना तो एक प्रकार से सुनिश्चित माना जा सकता है। कालान्तर में अंग्रेजों के आगमन से अंग्रेजी भाषा की महिमा बढ़ी और कार्यालयों में उसे उच्च स्थान प्राप्त हुआ। उच्च सेवाओं के लिये लोगों में अंग्रेजी सीखने की अभिरुचि उत्पन्न हुई। इन सभी कारणों से अंग्रेजी शब्दावली का समावेश भी स्वाभाविक हो गया और आज हमें शेखावाटी बोली में ही नहीं वरन् सभी आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में इस प्रकार की शब्दावली बिना प्रयास के मिल जाती है। इन विदेशी (अरबी, फ़ारसी और अंग्रेजी) शब्दों को किस प्रकार पचाया गया, इस सम्बन्ध में सामान्य कथन यह है कि जब एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में ग्रहण किये जाते हैं तो प्रायः उनमें कुछ न कुछ ध्वनि-विकार हो जाते हैं क्योंकि ग्राहक भाषा को गृहीत भाषा के शब्दों का उच्चारण अपने अनुकूल करना पड़ता है। अरबी-फ़ारसी की क़्, ख़्, ग़्, ज़् फ़् आदि संघर्षी ध्वनियाँ शेखावाटी में क्रमशः स्पर्श ध्वनियाँ क्, ख्, ग्, ज् फ्, आदि बन कर आईं। व्यंजन-संयोग भी भाषा के उच्चारण के अनुकूल ही बन कर गृहीत होते हैं। उच्चारण में सरलता लाने के लिये प्रायः स्वरागम कर लिया जाता है। ग्राहक भाषा की व्याकरणिक विधाओं में विदेशी प्रभाव से अन्तर नहीं पड़ता। उदाहरण के लिये अंग्रेजी 'स्कूल' शब्द को लें तो इसका बहुवचन 'स्कूल्स' न बनकर शेखावाटी बोली का -आँ (बहुवचन प्रत्यय) लगकर 'इस्कूलाँ' बनता है और हिन्दी में स्कूलों। फ़ारसी दारोगा' शेखावाटी में आकर 'दरोगो' और हिन्दी में 'दरोगा' हो जाता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से शेखावाटी राजस्थानी की और उसमें भी विशेष रूप से पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) की एक बोली है। इस सम्बन्ध में ऊपर यथेष्ट चर्चा हो चुकी है। राजस्थान की स्टैंडर्ड (आदर्श) भाषा राजस्थानी के निर्माण में अधिकांश हाथ मारवाड़ी का ही है। फिर भी यहाँ कुछ उदाहरणों से स्पष्ट किया जा सकता है कि शेखावाटी बोली का भी बहुत कुछ अपना योगदान है। राजा भोज के

सम्वन्ध में राजस्थान में अनेक पद्य प्रचलित हैं जिनमें से उदाहरण के लिये एक पद्य द्रष्टव्य है :

नीची नीची डोकरी, कैं का काडै खोज
मेरै सैं तेरै गई, सुण रे राजा भोज
तेरै सैं भी जायगी, जैं को कोनी लावै खोज* ।

इस पद्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम 'कुण्' (कौन) का विकारी रूप 'कैं', सम्वन्ध-वाचक सर्वनाम 'जो' का विकारी रूप 'जैं' तथा सम्बंध कारक चिन्ह 'को' (एकवचन) और 'का' (वहुवचन) का प्रयोग स्पष्टत: शेखावाटी की ही एकमात्र देन है। (देखिये सर्वनाम पद-रचना अध्याय) इसके अतिरिक्त -ग्- प्रत्यय का भविष्यकाल-वोध के लिये प्रयोग भी शेखावाटी से गया जान पड़ता है क्योंकि राजस्थान की अन्य बोलियों में इसका अभाव है। शेखावाटी वोली के पूर्वी रूप में ही यह प्रत्यय का कार्य करता हुआ देखा जाता है (देखिये क्रिया-पद-रचना अध्याय)।

इसी प्रकार एक दूसरा पद्य लिया जा सकता है:

एक गाँव मैं राजा आठ
सैं का न्यारा-न्यारा ठाठ
सुणो सखी एक अचरज देख्यो
एक वही मैं सैं को लेखो† । (गंजीफो)

इस पद्य में 'सवके लिये' 'सैं' का प्रयोग और सम्वन्ध कारक-चिन्ह 'को' का प्रयोग भी शेखावाटी वोली से गये हुये जान पड़ते हैं क्योंकि पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) में इन विशिष्टताओं का अभाव है। वैसे उपयुंक्त पद्यों की भाषा शत-प्रतिशत शेखावाटी है, पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) या राजस्थानी की कोई अन्य वोली नहीं।

अस्तु स्पष्ट है कि शेखावाटी राजस्थानी की एक वोली है जिसने राजस्थानी को आदर्श रूप देने में कमाधिक योग अवश्य दिया है। शेखावाटी के लोक-साहित्य का यदि कोई अध्ययन करे तो प्रचुर मात्रा में उसे गद्य-पद्यात्मक साहित्य सुलभ हो जायेगा जो उसके सामर्थ्य एवं समृद्धि का परिचायक होगा। कहावतों और मुहाविरों की संख्या भी वड़ी मात्रा में सुलभ है। इस दिशा में पं० झावरमल शर्मा ने प्रयास किया है जिसका परिचय हमें 'शेखावाटी की कहावतें और मुहाविरे' नामक पुस्तक से मिलता है।

---

* परम्परा, भाग १२ (राजस्थानी साहित्य का आदिकाल) पृ० ७१, राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर।

† परम्परा, भाग १२ (राजस्थानी साहित्य का आदिकाल) पृ० ६८, राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर।

[[illegible]]

यह [illegible] के [illegible] सम्बन्धी ऐतिहासिक [illegible] [illegible] द्वारा [illegible] है :

[illegible]

[illegible]

[illegible] — [illegible] — [illegible]

[illegible] — [illegible]

[illegible]

प्रथम चरण ([illegible] ई० [illegible])

द्वितीय चरण ([illegible] ई० [illegible])

[illegible]

तृतीय चरण ([illegible] ई० से [illegible] ई०)

[illegible]

[illegible]

[illegible] ([illegible] ई० के लगभग)

[illegible] — [illegible]

[illegible] — [illegible] — [illegible]

[illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible]

[illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible] — [illegible]

आणो	आना
पीणो	पीना
खाणो	खाना

(२) खड़ी बोली (हिन्दी) के संयुक्त स्वर ऐ, औ > शेखावाटी इ, ई, ओ।

इसो	ऐसा
किसो	कैसा
पीसो	पैसा
दोड़्	दौड़्
फोरन्	फौरन्

(३) शब्द मध्यवर्ती तथा शब्दांत महाप्राण ध्वनियों के महाप्राणत्व का ह्रास शेखावाटी की उल्लेखनीय प्रवृत्ति है। यथा—

साद्	<	साधू
आदो	<	आधो
धोको	<	धोखो
बतक्	<	बतख्
जांग्	<	जांघ्
दूद्	<	दूध्
भूक्	<	भूख्

(४) खड़ी बोली (हिन्दी) की तुलना में शेखावाटी की अपनी कुछ विशेष ध्वनियां है जो ध्वनिग्राम-रूप में प्रतिष्ठित हैं। (देखिये ध्वनि-संरचना अध्याय)

। न्ह् । = न्हाण (नहान), न्होरा (खुशामद)

। म्ह् । = म्हे (हम), म्हा (बड़ा)

। ल्ह् । = ल्हाद्णो (पाना), ल्हुक्णो (छिपना)

। ळ् । = काळ् (मृत्यु), काळो (काला)

(५) शेखावाटी बोली में कर्त्ता-कारकचिन्ह का अभाव है और सकर्मक क्रियाओं के भूतकालिक रूपों के साथ भी कर्त्ता बिना किसी कारकचिन्ह की सहायता के प्रयुक्त होता है —

मैं रोटी खाई = मैंने रोटी खाई।

छोरो पाणी पियो = लड़के ने पानी पिया।

(६) रूप-निर्माण की दृष्टि से शेखावाटी संज्ञा शब्दों के तीन वर्ग—पुल्लिग में ओकारांत (छोरो) तथा अन्यकारान्त (घर्) शब्दों के दो वर्ग और स्त्रीलिंग में समस्त

शब्दों का एक ही वर्ग, जबकि हिन्दी में चार वर्ग–पुल्लिग में दो और स्त्रीलिंग में दो बनते हैं। (देखिये संज्ञा–पद–रचना अध्याय)

(७) शेखावाटी में कारकचिन्ह 'नैं' का कर्म के लिये प्रयोग—

राम नैं कह्यो = राम को कहा।
मनैं दियो = मुझको दिया।

(८) संकेतवाचक एकवचन सर्वनाम के रूप लिंग से प्रभावित, जबकि हिन्दी में नहीं—

यो = यह (पुं०)
या = यह (स्त्री०)
वो = वह (पुं०)
वा = वह (स्त्री०)

(९) मध्यम पुरुष तथा उत्तम पुरुष के बहुवचनीय सर्वनाम शब्द हिन्दी की तुलना में नितान्त भिन्न हैं—

थे = तुम लोग, आप
म्हे = हम

इसके अतिरिक्त श्रोतृ सापेक्ष सर्वनाम शब्द 'आपां' भी है, जबकि हिन्दी में इसका अभाव है—

आपां = हम-तुम

(१०) 'जो, सो'—सम्बन्ध एवं सहसम्बन्धवाचक सर्वनाम शब्दों के प्रसारित रूप 'जिको' 'तिको' भी मिलते हैं—

जिको आयो थो तिको के हुयो = जो आया था सो क्या हुआ ?

(११) हिन्दी की तुलना में शेखावाटी की धातु √सक् स्वतंत्र धातु है—

मैं को सकूं ना = मेरे में सामर्थ्य नहीं है।
तू सकै तो ले ले = तुम सामर्थ्य रखते हो तो ले लो।

(१२) हिन्दी की सामान्य √चल् √रख् धातुएं शेखावाटी में दीर्घ धातु-स्वर सहित—

√चाल् — चाल् चालाँ = चलो चलें।
√राख् — राख् ले = रख ले।

(१३) शेखावाटी बोली में वर्तमानकाल और भूतकाल में तिङन्त क्रिया-पद प्रयुक्त होते हैं जबकि हिन्दी में कृदन्त क्रिया-पद—

छोरो करै है = लड़का करता है।
छोरी करै है = लड़की करती है।

छोरो गयो थो = लड़का गया था ।

छोरा गया था = लड़के गये थे ।

(१४) वर्तमान कालिक सहायक क्रिया-धातु* हू, शेखावाटी में अन्य स्थानों की भाषाओं के समान ही लिंग-भेद ग्रहण करती है जिससे निम्नलिखित रूप बनते हैं ।

	एक वचन	बहु वचन
उ० पु०	हूँ — छूँ	हाँ — छाँ
म० पु०	है — छै	हो — छो
अ० पु०	है — छै	हैं — छैं

(१५) शेखावाटी में स्त्रीलिंग रूप में भूतकालिक सहायक क्रिया-धातु* हू, साथ में कुछ शब्दों के योग से बनते हैं जबकि पूर्वी रूप में हिन्दी की भाँति 'था' सहायक क्रिया-धातु ही काम में आ सकती है । किन्तु [illegible] होने के कारण शेखावाटी में कहीं अधिकांशतः बहुवचन का बोध कराती है जहाँ हिन्दी में एकवचन का, यथा—

(पश्चिमी रूप)	छोरो हो	= लड़का था ।
	छोरा हा	= लड़के थे ।
	छोरी ही	= लड़की थी ।
(पूर्वी रूप)	छोरो थो	= लड़का था ।
	छोरा था	= लड़के थे ।
	छोरी थी	= लड़की थी ।

(१६) शेखावाटी बोली के पूर्वी रूप में भविष्य काल की सहायक क्रिया-धातु 'गू' लग सकती है जो अपने प्रकार रूपों में प्रयुक्त होती है । 'गू' को सहायक क्रिया-धातु इसलिये कहा गया है क्योंकि यह विभिन्न रूप में व्यवहृत होती है जिससे निम्नलिखित रूप बनते हैं ।

मैं जाऊँ हूँ गो = मैं जाऊँगा हूँ ।

मैं जाऊँ छूँ गो = मैं जाऊँगा गो ।

तू जावै छै गो = तू जावेगा गो ।

इसके विपरीत हिन्दी [illegible] वैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण केवल अन्य काल ही है जो लिंग-वचन के (अनुसार) अन्य ग्रहण करके परिमाण भेद का निर्माण करता है ।

---

*बहुवचन का [illegible] इसके [illegible] होता है ।

(१७) हिन्दी की √ कर् धातु के भूतकालिक कृदन्त रूप 'किया, किये, की' के स्थान पर शेखावाटी में क्रमशः – कर्यो, कर्या, करी रूप उपलब्ध हैं।

(१८) शेखावाटी बोली के पश्चिमी रूप में भविष्यकाल की रूप-रचना ऐतिहासिक प्रत्यय 'स्य्-' पर आधारित है :

	एकवचन	बहुवचन
अ० पु०	जास्यी ~जासी	जास्यी ~जासी*
म० पु०	जास्यी ~जासी	जास्यो
उ० पु०	जास्यूं	जास्यां

अब शेखावाटी बोली की भाषा-तात्विक विशेषताओं के आधार पर दो क्षेत्रीय रूप देखे जा सकते हैं :

सूँ—बोली :

इस बोली के पश्चिमोत्तर में मारवाड़ी बोली का प्रसार है तो दक्षिण में तोरावाटी तथा जयपुरी (ढुंढारी) का। पूर्व में शेखावाटी बोली का दूसरा सैं~सै—बोली-रूप व्याप्त है। जिन भाषा-तत्वों के आधार पर सूं—बोली सैं—बोली से भिन्न कही जा सकती है वे अत्यल्प हैं और उपर्युक्त समीपवर्ती बोलियों से प्रभावित जान पड़ते हैं। सूँ—बोली का प्रसार क्षेत्र सीकर जिला है। क्षेत्र-विस्तार की दृष्टि से इसका विस्तार कुछ अधिक है अपेक्षाकृत सैं—बोली के क्षेत्र से। सूँ—बोली की भाषा--तात्विक विशेषताएँ सैं—बोली की तुलना में निम्न कही जा सकती हैं :

१. करण तथा अपादान कारकचिन्ह 'सूं' का प्रचलन।
२. सर्वनामों के विकारी रूप ईं, वीं, जीं, कीं आदि का प्रचलन – (देखिये सर्वनाम पद-रचना अध्याय)।
३. भूतकालिक सहायकक्रियाएँ हो, हा, ही का प्रयोग।
४. भविष्य रूप-रचना 'स्य्'–प्रत्यय सहित (देखिये क्रिया-पद-रचना)।
५. क्रियार्थक संज्ञाओं का 'बो' लगाकर निर्माण, यथा—

खावो मुस्किल करै है = खाना मुश्किल करता है।
जावो मुस्किल करै है = जाना मुश्किल करता है।
खावा गयो = खाने गया।
जावा आयो = जाने के लिये आया।

किन्तु इस प्रसंग में यह बात उल्लेखनीय है कि चतुर्थी भाव की अभिव्यक्ति के लिये ही बो निर्मित रूप प्रयुक्त होते हैं अन्यथा–णो सहित रूप, यथा--

---

*बहुवचन का अभिज्ञान कर्त्ता से होता है।

मनैं जाणो है	=	मुझे जाना है।
तनैं खाणो है	=	तुम्हें खाना है।

मैं~सैं—बोली :

मूं-बोली के पूर्व में स्थित इस बोली का प्रसार क्षेत्र झुंझनू जिला है। इसके पूर्वोत्तर में बाँगरू बोली का प्रसार है तो दक्षिण-पूर्व में तोरावाटी और मेवाती का। मूं-बोली तथा मैं-बोली क्षेत्रों के मध्य काटली नदी है, जिसके पाट का विस्तार काफी है यद्यपि वर्ष-पर्यन्त जल नहीं रहता, केवल वर्षाकाल में ही जलराशि दृष्टिगोचर होती है। मूं-बोली की तुलना में इसकी निम्न विशेषतायें हैं—

१. करण तथा अपादान कारकचिन्ह सैं~सै का प्रचलन।

२. सर्वनामों के विकारी रूप ऐं, वैं, जैं, कैं का प्रचलन—
(देखिये सर्वनाम पद-रचना)।

३. भूतकालिक सहायक कियाओं थो, था, थी का प्रयोग होता है।

४. भविष्यत् रूप-रचना के लिये सहायक क्रिया-धातु √ ग्—का प्रयोग,
(देखिये क्रिया-पद-रचना)।

५. क्रियार्थक संज्ञा—णो सहित। यथा—

जाणो मुश्किल् करै है	=	जाना मुश्किल करता है।
खाणो मुश्किल् करै है	=	खाना मुश्किल करता है।
खाण् गयो खाणै गयो	=	खाने गया।
जाण् आयो जाणै आयो	=	जाने के लिये आया।
मनै जाणो है	=	मुझे जाना है।
तनै खाणो है	=	तुम्हें खाना है।

वस्तुत: बाँगरू बोली के प्रभाव स्वरूप ही भूतकालिक सहायक क्रियाएँ थो, था, थी तथा भविष्यत् रूप-रचना के लिये √ग-शेखावाटी की इस सैं—बोली में गये जान पड़ते हैं। इसीलिये यह बाँगरू का ग्-प्रत्यय अभी सैं—बोली में संश्लिष्टात्मक प्रवृत्ति पूर्णरूप से नहीं ग्रहण कर पाया है। इसीलिए सहायक क्रिया-धातु√ग्- रूप में इसे स्वीकार किया गया है।

१.६. शेखावाटी और उसकी सीमावर्तिनी बोलियाँ :

शेखावाटी बोली की पश्चिमोत्तरवर्ती मारवाड़ी, पूर्वोत्तरवर्ती बाँगरू पूर्ववर्ती मेवाती, दक्षिण-पूर्ववर्ती तोरावाटी तथा दक्षिणवर्ती जयपुरी आदि बोलियाँ ही सीमावर्ती

बोलियाँ हैं (देखिये मानचित्र १)। पुरानी राजस्थानी की पुत्रियाँ होने के कारण शेखावाटी, मारवाड़ी, जयपुरी, तोरावाटी, मेवाती आदि बोलियाँ सभी बहनें मानी जा सकती हैं। अतः इनमें परस्पर पर्याप्त साम्य की अपेक्षा की जा सकती है जबकि वैषम्य के लिये भी कमाधिक स्थान है। वैषम्य उच्चारण की दृष्टि से हो सकता है, व्याकरणिक दृष्टि से हो सकता है और अभिधार्थ शब्दावली की दृष्टि से। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर 'भाषा भूगोल' अध्याय में शेखावाटी बोली का उसकी सीमावर्ती बोलियों के साथ वैषम्य प्रस्तुत किया गया है। परिशिष्ट में दिये गये भाषातात्विक मानचित्रों से भाषा सम्बंधी विशेषताओं का क्षेत्रीय वितरण भी प्रदर्शित करने की चेष्टा की गई है।

शेखावाटी बोली का विश्लेषण करने के उपरान्त ऐसा जान पड़ता है कि यह प्रदेश सांस्कृतिक एवं राजनीतिक दृष्टि से अन्य जातियों का भी संधि-स्थल रहा है क्योंकि इस प्रदेश से सटे हुये तोरावाटी, अहीरवाटी, मेवाती, ढुंढार आदि प्रदेश इस बात की सूचना देते हैं कि इन प्रदेशों में तोमरों, अहीरों, मेवों, ढुंढों के राज्य स्थापित थे। पूर्वोत्तर में पंजाब और दिल्ली प्रदेशों की सीमायें भी, जहाँ अनेक राजनीतिक हलचलें हुई थीं, इस प्रदेश की सीमाओं का स्पर्श करती हैं। अतः इस प्रकार राजनीतिक हलचलों के प्रभाव-स्वरूप तथा सांस्कृतिक सम्मिलन के कारण शेखावाटी में अनेक भाषातात्विक विशेषताएँ आ इकट्ठा हुईं जो आज हमें दृष्टिगत हो रही हैं। भाषाशास्त्रियों के अनुसार जिस क्षेत्र में विविध भाषातात्विक विशेषतायें उपस्थित हों, वह क्षेत्र भाषा-विश्लेषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है और एक स्वतंत्र भाषा-इकाई का निर्माण करता है (देखिये 'भाषा-भूगोल' अध्याय तथा परिशिष्ट का अंतिम मानचित्र)। अतः इस क्षेत्र में जहाँ एक ओर कुछ विशेषतायें पश्चिमी हिन्दी-क्षेत्र की मिलती हैं, वहाँ दूसरी ओर अधिकाधिक विशेषतायें राजस्थानी की जो शेखावाटी को राजस्थानी की एक विभाषा या बोली सिद्ध करने में सहायक है। इतना होते हुये भी शेखावाटी अपनी समस्त समीपवर्ती बोलियों से कुछ ऐसी अन्यतम भाषातात्विक विशेषतायें रखती है जिनके कारण उसे एक स्वतंत्र भाषा-इकाई निस्संकोच माना जा सकता है।

१. ७. लिपि :

शेखावाटी प्रदेश में प्रचलित लिपियाँ दो हैं—देवनागरी और मुड़िया। देवनागरी साहित्य-सृजन, पत्र-पत्रिकाओं और पठन-पाठन में व्यवहृत होने के कारण व्यापक है तथा मुड़िया केवल व्यवसायिकों के बीच प्रचलित होने के कारण अति सीमित है। मुड़िया लिपि में स्वर-मात्राओं एवं शिरो-रेखाओं का अभाव है जिससे त्वरालेखन की विशेषता तो अवश्य आ गयी है किन्तु अर्थ का अनर्थ होने की भी पूरी संभावना

विद्यमान है। उदाहरण के लिये मुड़िया में लिखा गया 'पुत्र' शब्द को पत्र, पत्रा, पात्र, पात्रा, पात्री, पत्री, पुत्री, पुत्री, पुत्रा आदि अनेकानेक शब्द रूपों में पढ़ा जा सकता है जिससे स्पष्ट है कि पढ़ने में निश्चितता का अभाव है। संयुक्त व्यंजन नाम की कोई चीज इस लिपि में देखने को नहीं मिलती क्योंकि आलेखन में व्यंजनों को स्वर सहित लिखा जाता है। साथ ही ध्वनि-क्रम स्वर तथा व्यंजन लिखने में स्पष्ट न रहने के कारण यह पूर्णतः अवैज्ञानिक है।

यद्यपि मुड़िया लिपि के विकास का आधार देवनागरी ही है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि स्वर—व्यंजनों की जटिलता को कम करने के लिये तथा मात्राओं और शिरोरेखाओं की कठिनाइयों से बचने के लिये ही मुड़िया जैसी त्वरा-लेखन गुण-सम्पन्न लिपि का विकास हुआ है। कुछ लोगों की ऐसी मान्यता है कि इस लिपि के विकास के मूल में सरकारी कठोर नियमों से बचाव करना ही रहा है। ऊपर कहा जा चुका है कि इस लिपि के पढ़ने में निश्चितता का नितान्त अभाव है जिससे समय पड़ने पर कुछ का कुछ पढ़ कर काम निकाला जा सकता है। इस लिपि के विकास के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इसके आविष्कर्ता मुगल सम्राट् अकबर के वित्तमंत्री राजा टोडरमल थे*। ऐसा कहने वाले अपने कथन की पुष्टि में एक दोहा भी उद्धृत करते हैं जिसके रचयिता स्वयं टोडरमल माने जाते हैं—

> देवनागरी अति कठिन, स्वर व्यंजन व्यवहार।
> तातैं जग के हित सुगम, मुड़िया कियो प्रचार॥

इसके अतिरिक्त जहाँ तक अंकों का प्रश्न है, देवनागरी के अंक ही मुड़िया में भी मान्य हैं। निष्कर्ष रूप में देवनागरी ही शेखावाटी क्षेत्र की मान्य भाषा-लिपि है।

---

*श्री बालचन्द मोदी—'देश के इतिहास में मारवाड़ी जाति का स्थान' पृ० २३२।

२. ध्वनि-संरचना

२. १. खण्ड-ध्वनियाँ : स्वर—

२. १. १. उच्चारण-लक्षणों की दृष्टि से, शेखावाटी के दस भिन्न स्वर-ध्वनिग्राम, तालिका में, इस प्रकार व्यवस्थित किये जा सकते हैं :

	अग्र	मध्य	पश्च
संवृत	ई		ऊ
अर्ध-संवृत	इ	अ	उ
अर्ध-विवृत	ए		ओ
विवृत	ऐ	आ	औ

पश्च स्वरों के उच्चारण में ओष्ठ वृत्ताकार और अग्र तथा मध्य स्वरों के उच्चारण में अवृत्ताकार (चपटे) होते हैं।

२. १. २. संवृत स्वर दीर्घ तथा आतत (Tense) होते हैं। आतत से अभिप्राय उच्चारण करते समय अवयवों के तनाव से है। अर्ध-संवृत स्वर ह्रस्व तथा शिथिल (Lax) हैं। इनमें से केवल किसी एक लक्षण को भेदक माना जा सकता है। दूसरा लक्षण तो उसके साथ ही स्थित है। ह्रस्व स्वर शिथिल हैं तो दीर्घ स्वर आतत; साथ ही ह्रस्व स्वर अर्ध-संवृत है तो दीर्घ स्वर संवृत। ई, इ, ऊ, उ, इन युग्मों को ह्रस्व-दीर्घ मान लेने पर इन्हें संवृत और अर्ध-संवृत कहने की आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार अर्ध-विवृत अ तथा विवृत आ को भी उच्चारण-काल और शिथिलता तथा आततता के आधार पर ह्रस्व तथा दीर्घ स्वीकार किया जा सकता है। किन्तु इन दोनों (अ तथा आ) में उपर्युक्त दूसरा लक्षण (ह्रस्व-स्वर अर्ध-संवृत है तो दीर्घ स्वर संवृत) आरोपित नहीं किया जा सकता है। शिथिलता और आततता अवश्य आरोपित है क्योंकि ह्रस्व स्वर शिथिल हैं तो दीर्घ स्वर आतत। अतएव स्वरों के दो वर्ग सामने आते हैं :

(१) ए, ऐ, ओ, औ—दीर्घ होते हैं।

(२) इ, उ, अ—इनके ह्रस्व तथा दीर्घ दोनों ही रूप होते हैं।

२. १. ३. परिस्थिति-जन्य भेद से स्वरों के भी उपरूप पाये जाते हैं जिनका विवरण इस प्रकार दिया जा सकता है :

१. नासिक्य व्यंजनों के पूर्व में स्थित स्वर कुछ अनुनासिक होते हैं, यथा—दाम्-दांम्, सोनो-सोंनो (सोना)

२. साधारणतया जिह्वा की स्थिति अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में आस्य स्वरों के समान ही होती है, अर्ध-विवृत स्वर अपेक्षा-कृत कुछ विवृत हो जाते हैं, यथा—सों = सौगंध, वेंत्।

३. मध्य अर्ध-विवृत अ स्वर ह् के पूर्व काफी अग्रीकृत होकर उच्चरित होता है। यथा-कह् (kəh), सहर् (Səhar)।

४. कण्ठ्य व्यंजनों के परवर्ती अग्रस्वर कुछ पीछे से उच्चरित होते हैं, यथा—कीड़ी, गिर्, घेर्।

५. दीर्घ स्वरों की मात्रा कुछ ह्रस्व हो जाती है, यदि परे संयुक्त-व्यंजन होते हैं; यथा-पूंच्यो = पहुँचा, भींट्यो = अछूत को छुवा, ऐंठ्यो = ऐंठा, गोच्यो = गोचा।

६. मूर्धन्य व्यंजनों के मध्य आगत पश्च-स्वर कुछ आगे से उच्चरित होते हैं यथा-टूट्, ठोड् (स्थान), ढुळ् = लुढ़क।

७. ह् से पूर्व स्वर की मात्रा कुछ ह्रस्व हो जाती है। यथा—वाँह्, मोह्, छोह् = क्षोभ।

२. १. ४. स्वरों की पारस्परिक व्यतिरेकी स्थितियाँ :

। ई ।	वील्	=वेल (फल)	सीर्	=	साझा
। इ ।	विल्	=विल (छेद)	सिर्	=	सिर
। ए ।	पेड़ो	=पेड़ा	के	=	क्या
। ऐ ।	पैड़ो	=सीढ़ी	कै	=	कितने
। ऊ ।	कूटा	=कूटा	पूर्	=	चिथड़े
। उ ।	कुटा	=कुटा	पुर्	=	नगर, आवाज
। ओ ।	चोको	=चौवा	चोर्	=	चोर्
। औ ।	चौको	=चौका	चौक्	=	आंगन
। आ ।	काळ्	=मृत्यु	भद्दा	=	खराब
। अ ।	कळ्	=मशीन, नल	भद्द	=	भद्द

२. १. ५. स्वरों के मध्य व्यतिरेक दिखाने वाले लघुतम शब्द-युग्मों से स्पष्ट है कि शेखावाटी में दस स्वर ध्वनिग्राम हैं—। अ ।, । आ ।, । इ ।, । ई ।, । उ ।, । ऊ ।, । ए ।, । ऐ ।, । ओ ।, तथा । औ ।.

२. १. ६. अनुनासिकता : कोमल तालु की स्थिति की दृष्टि से भाषण-ध्वनियों को अनुनासिक एवं निरनुनासिक इन दो वर्गों में रखा जाता है। अनुनासिक ध्वनियों के उच्चारण में कोमल तालु नीचे झुकता है जिससे नासिका-विवर खुल जाता है और परिणाम-स्वरूप मुख-विवर में ओष्ठ, वर्त्स, तालु आदि विभिन्न स्थानों पर स्पर्श के कारण अवरुद्ध होने वाली वायु उसमें (नासारंध्र) से होकर बाहर निकलती है। इस प्रकार *विभिन्न स्थानीय अनुनासिक या नासिक* ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं, यथा-म्, न्, ण्, आदि। निरनुनासिक ध्वनियों के उच्चारण में कोमल तालु के स्वाभाविक स्थिति में होने के कारण नासिका-विवर बन्द रहता है जिससे वायु-प्रवाह मुख-विवर से ही होकर बाहर निकलता है। समस्त स्वर तथा अधिकांश व्यंजन ध्वनियाँ निरनुनासिक ध्वनियाँ हैं।

कारण व्यंजनों के अधिक सन्निकट है। इन दोनों का भाषा में अपना-अपना निजी महत्व है। अनुनासिकता अभिप्राय और व्याकरणिक अर्थ में भिन्नता लाती है, तो अनुस्वार वर्ण-माला से कुछ वर्ण यथा-ङ्, ञ् आदि को हटा कर वर्णमाला को सुबोध एवं सरल बनाता है, साथ ही आलेखन में क्षिप्रता लाता है। बहुप्रचलित एवं महत्वपूर्ण वर्त्स्य नासिक्य। न्। के संस्वन रूप में यह माना जा सकता है, क्योंकि भाषा में उसका अधिकांश कार्य यह निपटा देता है।

२.१.९. शेखावाटी बोली में अनुनासिकता और अनुस्वार के मध्य व्यतिरेकी स्थितियां भी देखी जा सकती हैं :

। ँ ।	हँस्	बँध्यो	=	आबद्ध
। ं ।	हंस्	बंधो	=	बांध

इसके अतिरिक्त अनुनासिकता व्याकरणिक अर्थों को भी अभिव्यक्त करती है—

है	=	सहायक क्रिया (एकवचन)
हैं	=	सहायक क्रिया (बहुवचन)
छोरा	=	लड़के (मूल बहुवचन रूप)
छोरां	=	लड़कों (विकारी बहुवचन रूप)

साथ ही भाषा के नासिक्य व्यंजनों के साथ भी व्यतिरेकी स्थितियों में सम्प्राप्त है :

खां	=	पठान
खान्	=	खान
काण्	=	तराजू का असंतुलन
काम्	=	कार्य

अस्तु निस्संदेह अनुनासिकता । ँ । भाषा का स्वतंत्र ध्वनिग्राम है।

२.२. खण्डेतर ध्वनियाँ : व्यंजन—

२.२.१. विभिन्न भाषाओं की व्यंजन ध्वनियों के वर्गीकरण के उच्चारण-स्थान, उच्चारण-प्रयत्न एवं करण की दृष्टि से अनेक उपकरण बन सकते हैं[1]। किन्तु शेखावाटी व्यंजन ध्वनियों के वर्गीकरण के लिये उच्चारण-स्थान की दृष्टि से—काकल, कंठ, तालु, वर्त्स, दन्त एवं ओष्ठ; उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से स्पर्श, संघर्ष, उत्क्षेपण लोडन, नासिकता, नाद एवं प्राण और करण की दृष्टि से जिह्वाअग्र, मध्य तथा पश्च आदि उपकरण हैं। इन्हीं उपकरणों के विभिन्न मिश्रण से शेखावाटी व्यंजन

---

१. जनरल फोनेटिक्स—पृ० १२३–१६०।

ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

२.२.२. शेखावाटी व्यंजन ध्वनियों को निम्न तालिका में उच्चारण-स्थान तथा उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से इस प्रकार सजाया जा सकता है :

	काकल्य	कंठ्य	तालव्य	मूर्धन्य	वत्स्र्य	दंत्य	ओष्ठ्य
स्पर्श		क्,ख्	च्,छ्	ट्,ठ्		त्,थ्	प्,फ्
		ग्,घ्	ज्,झ्	ड्,ढ्		द्,ध्	ब्,भ्
नासिक्य				ण्	न्, न्ह्		म्,म्ह्
लुंठित					र्		
उत्क्षिप्त				ड़्			
पार्श्विक				ळ्	ल्,ल्ह्		
संघर्षी	ह्				स्		
अर्धस्वर			य्				व्

उपर्युक्त तालिका में नाद एवं श्वास प्रयत्नों का स्पष्टीकरण नहीं है। अतएव व्यंजनों का ध्वनिग्रामीय विवेचन करते समय इनको वहीं स्पष्ट कर दिया जाएगा।

२.२.३. सामान्यतः ध्वनिग्राम भाषा की लघुतम इकाई माने गये हैं। इनके द्वारा भाषा की संघटना का विवरण प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक भाषा में इनकी संख्या सीमित एवं निश्चित होती है। प्रायः देखा जाता है कि इन ध्वनिग्रामों का स्वरूप परस्पर भिन्न होता है। किन्तु कुछ आपस में एक दूसरे से अधिक सादृश्य रखते हैं। उनके सादृश्य एवं वितरण के आधार पर ध्वनिखंडों (स्वर तथा व्यंजनों) का ध्वनिग्रामों में वर्गीकरण किया जाता है। केवल उन ध्वनिखण्डों या ध्वनियों को ध्वनिग्राम संज्ञा से अभिहित किया जाता है, जिनका वितरण विरोध प्रकट करता है। यथा—आन् से पूर्व (क्) और (ख्) ध्वनियाँ आ सकती हैं। इनसे निष्पन्न ध्वनिसमूह (कान्) और (खान्) शेखावाटी में सार्थक शब्द हैं। अतः (क्) और (ख्) को ध्वनिग्राम इसलिये स्वीकार कर लिया गया है कि वे दोनों सम परिस्थितियों में प्रयुक्त होकर विरोध प्रकट करते हैं। इन ध्वनियों के कारण ही इन दो भिन्नार्थक शब्दों की निष्पत्ति हुई है। इसके विपरीत जहाँ दो या अधिक ध्वनिखण्डों में स्वरूप का सादृश्य तो है, पर परस्पर विरोध नहीं, अपितु वितरण में एक दूसरे के पूरक हैं; वहाँ उनको हम एक ही ध्वनिग्राम मानते हैं। उनमें मिलने वाला अन्तर परिस्थिति-जन्य है। यथा–तीन अनुनासिक व्यंजन ध्वनियाँ (ङ्, ञ् और न्) हैं, एक ङ् कंठ्य स्पर्श से पूर्व आती है, दूसरी तालव्य स्पर्श से पूर्व आती है और तीसरी अन्यत्र। इन

स्थितियाँ :

| ट् | बेट् = [illegible]
| ठ् | बेठ् = [illegible]
| ड् | बेड् = [illegible] [illegible]
| ढ् | बेढ् = [illegible]
| ड़् | बेड़् = [illegible]
| ढ़् | बेढ़् = [illegible]

४. दन्त्य वर्ग—| त्, थ्, द्, ध् |—उच्चारण-स्थान एवं उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से इन व्यंजन ध्वनियों का वर्णन निम्न प्रकार है :

| त् | दन्त्य, स्पर्श, अघोष, अल्पप्राण ।
| थ् | दन्त्य, स्पर्श, अघोष, महाप्राण ।
| द् | दन्त्य, स्पर्श, सघोष, अल्पप्राण ।
| ध् | दन्त्य, स्पर्श, सघोष, महाप्राण ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ :

| त् | तान् = तान बात् = बात
| थ् | थान् = थान बाँथ् = गलबाँही
| द् | दान् = दान बाद् = पश्चात्
| ध् | धान् = धान बाध् = बढ़ना

५. ओष्ठ्य वर्ग—| प्, फ्, ब्, भ् |—स्थान तथा प्रयत्न के अनुसार उच्चारण-वर्णन इस प्रकार है :

| प् | ओष्ठ्य, स्पर्श, अघोष, अल्पप्राण ।
| फ् | ओष्ठ्य, स्पर्श, अघोष, महाप्राण ।
| ब् | ओष्ठ्य, स्पर्श, सघोष, अल्पप्राण ।
| भ् | ओष्ठ्य, स्पर्श सघोष, महाप्राण ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ :

| प् | पाड़् = उखाड़ कप् = प्याला
| फ् | फाड़् = फाड़ कफ् = कफ
| ब् | बाड़् = बाड़ा चाब् = चबाना
| भ् | भाड़् = भाड़ चुभ् = चुभना

२.२.६. नासिक्य व्यंजन—| ण्, न्, न्ह्, म्, म्ह् |—उच्चारण-स्थान और उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से प्रत्येक का वर्णन निम्न है—

। ण् । मूर्धन्य, नासिक्य, सघोष, अल्पप्राण ।
। न् । वर्त्स्य, नासिक्य, सघोष, अल्पप्राण ।
। न्ह् । वर्त्स्य, नासिक्य, सघोष, महाप्राण ।
। म् । ओष्ठ्य, नासिक्य, सघोष, अल्पप्राण ।
। म्ह् । ओष्ठ्य, नासिक्य, सघोष, महाप्राण ।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि उच्चारण-स्थान एवं उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से । न् । । न्ह् । के अधिक समीप है और । म् । । म्ह् । के, जबकि । ण् । उच्चारण-स्थान की दृष्टि से भिन्न है । प्राण, घोष और नासिकता की दृष्टि से यदि देखा जाये तो । ण् ।, । न् । और । म् । के अधिक समीप है, अतः सर्व-प्रथम इन तीनों की व्यतिरेकी स्थितियाँ देखी जा सकती हैं :

। ण् ।	नाणो	=	नवाना	काण् = काण (पसंगा)
। न् ।	नानो	=	नाना	कान् = कान
। म् ।	नामो	=	नामा	काम् = काम

। न्ह् । और । म्ह् । के प्राण । ह् । तत्व के विषय में प्रश्न हो सकता है कि क्या काकल्य । ह् । ही । न् । तथा । म् । के साथ मिलकर संयुक्त-व्यंजन रूप में है ? और संभवतः इसीलिये वे । न् । तथा । म् । की व्यतिरेकी स्थितियों में दिखायी भी देते हैं । किन्तु । न्ह् । और । म्ह् । क्रमशः । न् । तथा । म् । के महाप्राण रूप निम्न कारणों से हैं :

(१) उच्चारण - प्रयत्न की दृष्टि से दोनों तत्वों का उद्घोषण एक साथ होता है । अतएव दो तत्वों का पार्थक्य न होने से एक ही खण्डध्वनिरूप मान्य है ।

(२) शब्द की तीनों स्थितियों—आदि, मध्य और अन्त में अल्पप्राण ध्वनियों की भांति प्रयोग ।

(३) पुरुषवाचक सर्वनामों की रूप-रचना में एकवचन और बहुवचन प्रातिपदिक अल्पप्राण और महाप्राण होकर विभक्ति-प्रत्यय ग्रहण करते हैं, यथा– (देखिये, सर्वनाम पद-रचना) ।

	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	म्–	म्ह्–
म० पु०	त्–	[illegible]–

अस्तु । न्ह् । और । म्ह् । क्रमशः । न् । [illegible]
लिपि-चिन्ह । न्ह् । और । म्ह् । अन्य [illegible]

चिन्हों की तुलना में अवश्य भ्रामक हैं, क्योंकि इनमें काकल्य । ह् । व्यंजन का संयोग पृथक दृष्टिगत हो रहा है। अतएव इन दोनों महाप्राण नासिक्य व्यंजनों के लिए नये लिपि-चिन्हों की आवश्यकता अनुभव की जा सकती है।

व्यतिरेकी स्थितियाँ :

। न् ।	नाण् =	नाउन	नोरो	= पशुओं के पालने का स्थान।
। न्ह् ।	न्हाण् =	नहान	न्होरो	= खुशामद
। म् ।	माँ =	माता	मोरो	= नाला
। म्ह् ।	म्हा =	बड़ा	म्हारो	= हमारा

२. २. ७. लुंठित तथा पार्श्विक व्यंजन— । र्, ळ्, ल्, ल्ह् । — चारों व्यंजन ध्वनियों में से प्रत्येक का उच्चारण स्थान और प्रयत्न की दृष्टि से निम्न है :

। र् ।	वर्त्स्य, लुंठित, सघोष, अल्पप्राण।
। ळ् ।	मूर्धन्य, पार्श्विक, सघोष, अल्पप्राण।
। ल् ।	वर्त्स्य, पार्श्विक, सघोष, अल्पप्राण।
। ल्ह् ।	वर्त्स्य, पार्श्विक, सघोष, महाप्राण।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि उच्चारण-स्थान, घोषत्व तथा प्राणत्व की दृष्टि से । र् । और । ल् । ध्वनियाँ सादृश्य रखती हैं। असमानता केवल प्रयत्न--लुंठन एवं पार्श्विता -- में है अर्थात् । र् । लुंठित है तो । ल् । पार्श्विक । अतएव प्रथमतः इन दोनों की व्यतिरेकी स्थितियाँ देखी जा सकती हैं :

। र् ।	राड़् = लड़ाई	बेर् = बेर
। ल् ।	लाड़् = प्यार	बेल् = लता

यदि उच्चारण-प्रयत्न की सभी दृष्टियों—पार्श्विता, घोषत्व एवं प्राणत्व से देखा जाये तो । ळ् । और । ल् । समान हैं, अन्तर केवल उच्चारण-स्थान का है अर्थात् । ळ् । मूर्धन्य है तो । ल् । वर्त्स्य है। अतएव सादृश्य के आधिक्य के कारण दोनों की विरोधी-स्थितियाँ देखकर ही इन्हें भाषा के दो स्वतंत्र ध्वनिग्राम स्वीकार कर सकते हैं।

। ळ् ।	आळो = ताख	काळ् = मृत्यु, अकाल
। ल् ।	आलो = गीला	काल् = कल

। ल् । ध्वनिग्राम का महाप्राण रूप । ल्ह् । भी ध्वनिग्राम है। लिपिचिन्ह के आधार पर यह भी संयुक्त-व्यंजन सा लगता है, किन्तु । न्ह् । और । म्ह् । के उपर्युक्त

[illegible]

[illegible]	—	[illegible] ([illegible])
[illegible]	—	[illegible] ([illegible])
[illegible]	—	[illegible] ([illegible])
[illegible]	—	[illegible] ([illegible])

[illegible] यथा—

[illegible]	—	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]
[illegible]		[illegible] ([illegible])
[illegible]	—	[illegible] ([illegible])

[illegible] यथा—

[illegible]	—	[illegible]
[illegible]	—	[illegible] ([illegible])

[illegible] (Prolongation) [illegible] यथा—

[illegible]	—	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]

वस्तुतः । ह् । प्राण होने से कभी अल्पप्राण स्पर्श ध्वनियों को महाप्राण करता हुआ और कभी महाप्राण स्पर्श ध्वनियों में केवल प्राण-रूप में अवशिष्ट रहता हुआ देखा जाता है। ऐतिहासिक विकास इस तथ्य की पुष्टि में सहायक है, यथा—

बहुत् – भोत्
वधू – वहू – भू
मुख – मुंह् मूँ

इस प्रकार । ह् । के दो रूप, श्रुति और मात्रा स्पष्ट हैं।

श्रुति और मात्रा के स्थलों पर आलेखन में । ह् । का प्रयोग इस लिये वांछनीय कहा जा सकता है, क्योंकि जहाँ श्रुति या मात्रा रूप में । ह् । समाप्त होने को होता है वहाँ स्वरों के गुण में अन्तर पड़ जाता है। अतः प्रत्येक स्वर के अन्य उपरूप मानने की अपेक्षा । ह् । को ही अपनाना अधिक सुविधाजनक जान पड़ता है। श्रुति होने के नाते अक्षर-निर्माण में यह असमर्थ है और फिर उच्चारण में संघर्षी तत्त्व अधिक रखने के कारण स्पष्टतः यह संघर्षी व्यंजन भी है। शेखावाटी में एक अन्य संघर्षी व्यंजन । स् । भी है जो उच्चारण-स्थान और नाद की दृष्टि से संघर्षी । ह् । से भिन्न है। संघर्ष प्रयत्न की दृष्टि से दोनों समान है। अतः । ह् । का उसके साथ विरोध देख कर ही ध्वनिग्रामीय स्वरूप स्पष्ट होगा, साथ ही स्वरों के साथ भी । ह् । का व्यतिरेक देखा जा सकता है :

हाँस्	=	हँस	होड़्	=	होड़
साँस	=	साँस	सोड़्	=	रजाई
आस्	=	आशा	ओड़्	=	अन्त
ओस्	=	ओस	आड़्	=	आड़
ईस	=	ईश	उड़्	=	उड़
ऐस्	=	भोग-विलास	एड़्	=	ऐंड़

अतएव शेखावाटी में । ह् । तथा । स् । दो संघर्षी ध्वनिग्राम हैं।

२. २. ९. व्यंजन ध्वनिग्रामों के परिस्थिति जन्य उपरूप (संस्वन):

१. शब्दान्त में महाप्राण व्यंजनों की प्राणता कुछ अल्प हो जाती है, किन्तु अल्पप्राण व्यंजनों से फिर भी अधिक रहती है।

२. मूर्धन्य व्यंजनों के पूर्व 'ल्' भी मूर्धन्य हो जाता है, यथा– उल्टो, बाल्टी, होल्डर।

३. 'न्' नासिक्य व्यंजन के भी एकाधिक रूप हैं, एक वर्त्स्य और अन्य रूप स्पर्श व्यंजनों के पूर्व अर्थात् कंठ्य, तालव्य आदि स्पर्श व्यंजनों के पूर्व 'न्' का तद्वर्गीय रूप। यथा—शान्ती (शान्ति), पन्खा, पन्जा, चन्द (चतुर), पन्द ।

४. स्वरों के प्रभाव से भी व्यंजनों के उच्चारण-स्थान में किंचित् अन्तर पड़ जाता है, यथा— कील, कूकू, ताल।

५. मध्य में भी महाप्राण व्यंजनों की उपस्थिति से बाद वाले महाप्राण व्यंजन की प्राणता अल्प हो जाती है, यथा—भाभी, फूफी, दूधो।

२.३. अर्द्ध-स्वर :

२.३.०. । य्, व् ।—उपर्युक्त व्यंजन तालिका में । य् । तथा । व् । अर्द्ध-स्वर रूप में परिगणित किये गये हैं। वस्तुतः इनकी स्थिति ऐसी विचित्र है कि न तो ये पूर्ण व्यंजन ही होने की विशेषता रखते हैं और न पूर्ण स्वर होने की। इनका व्यवहार कहीं स्वरों सा है तो कहीं व्यंजनों जैसा। इसीलिये ये स्वर तथा व्यंजन के मध्य की तीसरी श्रेणी हैं जो दोनों स्वर और व्यंजन की विशेषताओं से युक्त हैं[1]। कुछ विद्वानों ने संस्कृत वैयाकरणों द्वारा प्रदत्त 'अन्तस्थ' नाम का भी यही अर्थ लगाया है[2]। अंग्रेजी में भी इन्हें (Semi-vowel) (अर्द्धस्वर) कहा गया है। 'अर्द्ध-स्वर' नाम अधिक महत्व का है, क्योंकि व्याख्यात्मकता[3] तथा कार्यकारिता[4] की दृष्टि से व्यंजनों की अपेक्षा स्वरों जैसा अधिक कार्य करते हैं।

२.३.१. । य् । और । व् । के उच्चारण के लिये जिह्वा संवृत (या अर्द्ध-संवृत) स्थान से विवृत स्थान की ओर जाती है। कुछ लोग इन्हें Independent स्वाधीन श्रुति (Glide) मानते हैं। इन्हें व्यंजन मानने का कारण यह है कि न तो ये स्वरों की भाँति मुखर हैं और न स्वराघात वहन करने का इनमें सामर्थ्य है। इनके उच्चारण में वायु-प्रवाह की गति अत्यंत शिथिल रहती है। ये अक्षर-निर्माण में भी असमर्थ हैं।

२.३.२. भिन्न स्वरों के मध्य य् और व् के विविध संगात्मक रूप श्रुतिगत होते हैं जिन्हें निम्न चार्ट से स्पष्ट किया जा सकता है :

---

१ "A Semi-vowel has characteristics of a vowel and a consonant. It is an independent vowel glide in which the tongue starts from the position of a close (or half close) vowel such as i. u. and immediately moves to some more open position i. e. to that of a vowel of greater sonority than itself." Ida C. Ward 'Practical phonetics for the Students of African Languages,' 1949, Page, 89.

२ "भारतीय वैयाकरणों ने इन्हें अन्तस्थ कहा है क्योंकि इनके उच्चारण की स्थिति स्वर और व्यंजनों के बीच में है।" डा० विश्वनाथप्रसाद, भारतीय साहित्य, अप्रैल, १९५६.

३ "मात्रु-चिन्हों से यह प्रकट होता है कि हिन्दी 'य्,' 'व्' के उच्चारण में व्यंजनात्मक की अपेक्षा स्वरात्मक अंश अधिक है।" डा० विश्वनाथप्रसाद, भारतीय साहित्य, अप्रैल, १९५६.

४ "In fact, y. v behave much more like the vowels than the consonants"—Dr. M. Husain, 'A Phonetic & Phonological Study of the word in Urdu,' Page. 9.

वस्तुत: जब अल्प मुखर स्वर अधिक मुखर स्वरों की ओर अग्रसर होते हैं, तभी स्पष्ट श्रुतियां संभव होती हैं और हम उनका श्रुति-रूप अंकित कर सकते हैं।

तालिका द्वारा स्वरानुक्रमों का प्रदर्शन

	अ	आ	इ, ई	उ, ऊ	ए, ऐ	ओ.
अ		य् / व्	य्.	व्	य्	य् / व्.
आ	व्	य्	य्	व्	य् / व्	य् / व्
इ, ई	य्	य्	य्	य्	य्	य् / व्
उ, ऊ	व्	व्	य्	व्	व्	य् / व्
ए, ऐ	व्	य्	य्	व्		य् / व्
ओ		य् / व्	य्	व्	य् / व्	य् / व्

प्रस्तुत तालिका को देखने से प्रकट होता है कि शेखावाटी में स्वरानुक्रमों के ३३ (तैंतीस) प्रयोग मिलते हैं, जिनमें बारह का संबंध य्– श्रुति से, ग्यारह का संबंध व्– श्रुति से और दस का संबंध दोनों ही श्रुतियों से है। तालु—मार्गीय संसर्पण की द्योतक य्– श्रुति की ओर शेखावाटी की प्रकृति कुछ अधिक जान पड़ती है। संस्कृत से जहां 'व्' मिला है, वहां भी बोली के तद्भव रूपों में 'य्' के प्रयोग के उदाहरण मिलते हैं, यथा—नव:>नयो, नकुल: = >न्योलो

२. ३. ३. स्वरानुक्रमों के उदारहण :

। अ....आ ।	दया	=	दया	
य् / व्	नया	=	नये	(वहुवचन)
	गया	=	गये	(वहुवचन)
	हवा	=	हवा	
	तवा	=	तवा	(वहुवचन)
	सवा	=	सवा	
। अ....इ, ई ।	गयी	=	गई	
य्	लयी	=	ली	
	दयी	=	दी	

। अ ...उ, ऊ ।	गयू = गऊ	
य्	नयू = नयों	
। अ....ए, ऐ ।	तये = तपाये गये	
य्	ढये = गिराये गये	
। अ....ओ ।	गयो = गया	
य् / व्	तवो = तवा	
। आ....अ ।	तावड़ो = धूप	
व्	सावण् = सावन	
। आ....आ ।	काया = काया	
य्	आया = आये	
	छाया = छाया	
। आ....इ, ई ।	गायी = गाई	
य्	पायी = पाई	
	तायी = ताई	
। आ....उ, ऊ ।	आवू = आने का इच्छुक	
व्	न्यावू = घटिया	
। आ....ए, ऐ ।	चाये = चाहिये	
य् / व्	आये = आना	(आज्ञार्थक)
	आवै = आता	(वर्तमान)
	भावै = अच्छा लगता है ।	
। आ....ओ ।	पायो = पावा	
य् / व्	सावो = उत्सव	
	खावो = खावो	(आज्ञार्थक)
। इ, ई....आ ।	लिया = लिये	
य्	दिया = दिये	
	वीया = लौकी	
। इ, ई....इ, ई ।	पीयी = पी	
य्	जीयी = जी (जीवित रही)	
। इ, ई....उ, ऊ ।	गिवूं = गेहूँ	
व्	पिवू = पीने का इच्छुक	
	जीवू = जीने का इच्छुक	
। इ, ई... ए, ऐ ।	पीये = पीना	(आज्ञार्थक)
य्	जीये = जीना	

। इ, ई....ओ ।	पीयो	= पीया (भूत)	
य् / व्	पीवो	= पीजिये	
। उ, ऊ....अ ।	फूवड़्	= मुंहफट	
व्	सूवर	= सुअर	
। उ, ऊ....आ ।	जुवाड़ी	= जुआरी	
व्	भूवा	= बूआ	
। उ, ऊ....इ, ई ।	कुयी	= कुइयां	
य्	सूयी	= सुई	
। उ, ऊ....उ, ऊ ।	छुवू	= छूने लायक वस्तु	
व्	चुवू	= चूने के लगभग	(जैसे छत)
। उ, ऊ....ए, ऐ ।	चुवै	= चूता	(वर्तमान)
व्	छूवे	= छूना	(आज्ञार्थक)
। उ, ऊ....ओ ।	चूयो	= चूआ	
य् / व्	कुवो	= कुआं	
	सूवो	= सुग्गा, तोता	
। ए, ऐ....अ ।	केवड़ो	= केवड़ा	
व्	जेवड़ो	= रस्सा	
। ए, ऐ.... आ ।	भेया	= भिगोये (वहु०)	
य्	खेया	= खेये (वहु०)	
। ए, ऐ....इ, ई ।	खेयी	= खेई	(नौका)
य्	भेयी	= भिगोई	
। ए, ऐ....उ, ऊ ।	देवू	= देने का इच्छुक	
व्	लेवू	= लेने का इच्छुक	
। ए, ऐ....ओ ।	भेयो	= भिगोया	
य्/व्	खेयो	= खेया	(नौका)
	मेवो	= मेवा	
	खेवो	= खेइए	
। ओ....आ ।	रोया	= रोये	(वहु०)
य्/व्	वोया	= वोये	(वहु०)
	टोवाँ	= ढूँढते हैं	(उ० पु० वहु वचन रूप)
	वोवाँ	= बोते हैं	(,, ,,)
। ओ....इ, ई ।	धोयी	= धोई	
य्			

	घोयी = धोई	
	लोयी = लोई	(खून)
। ओ....उ, ऊ ।	रोवू = रोने का इच्छुक	
व्	सोवू = सोने का इच्छुक	
। ओ ...ए, ऐ ।	सोये = सोना	(आज्ञार्थक)
य्/व्	रोवै = रोता	(वर्तमान काल)
। ओ....ओ ।	सोयो = सोया	
य्/व्	रोयो = रोया	
	सोवो = सोइए	
	धोवो = धोइए	

२. ३. ४. य् और व् श्रुतियों से सम्बद्ध स्वरात्मक संसर्पण उच्चारण की दृष्टि से एकसे नहीं होते। कुछ में लघुप्रयत्नतर उच्चारण होता है तो कुछ का महत्प्रयत्नतर उच्चारण रहता है। जहाँ महत्प्रयत्नतर उच्चारण रहता है, वहाँ तो स्वरों के मध्य ये अंकित की जाती हैं, अन्यथा नहीं। अतः जहाँ इनका स्वरूप अधिक स्पष्ट है, वहाँ दो स्वरों का संयोग नहीं मिलता है और जहाँ ये बहुत ही क्षीण स्वरात्मक रूप में होती हैं, वहाँ इन्हें छोड़ा जा सकता है और दो स्वरों को संयोगावस्था में लिखा जा सकता है।

२. ३. ५. वस्तुतः शेखावाटी में आदि स्थान को छोड़कर अन्यत्र अर्धस्वर य् और व् का उच्चारण अपेक्षाकृत क्षीण मिलता है। कुछ स्थलों पर सम्बद्ध ध्वनियों के उच्चारण के बीच उनको समुचित रूप से पकड़ पाना प्रायः कठिन हो जाता है। यही कारण है कि प्रो० डेनियल जोन्स, टी० ग्राहम वेली, मोहिउद्दीन कादरी आदि ध्वनि-विशेषज्ञ यंत्रों की सहायता लेकर भी उन्हें पकड़ सकने में असमर्थ रहे। फिर भी शेखावाटी स्वरानुक्रमों का विश्लेषण करने पर ऐसा अनुभव हुआ कि -य्- श्रुति से सम्बद्ध स्वरात्मक संसर्पण निम्नांकित स्वरों के मध्य अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट रहता है :

(१) अ....आ, ओ; यथा–दया, गयो, नयो।

(२) आ....आ, ओ; यथा–काया, माया, छाया, भायो, (भाई)।

(३) इ, ई....अ, आ, ओ; यथा–मरियल, मुनिया, घीया, हियो (हृदय), लियो (लिया), दीयो (दीपक)।

इसी प्रकार–व्- श्रुति निम्न स्वरों के मध्य अपेक्षाकृत अधिक सुस्पष्ट सुनाई पड़ती है–

(१) अ....आ, ओ; यथा–दवा, हवा, गँवार, तवो।

(२) आ....अ; यथा–सावण्, तावड़ो (धूप)।

(३) आ……आ; यथा—दावा (मुकदमा), धावा, नावाँ (नाव का बहुवचन रूप)

२. ३. ६. यह तो हुई य् तथा व् के श्रुति—रूपों की चर्चा और व्याकरण की बात। अब देखना यह है कि भाषा की संरचना में इन दोनों का वितरण क्या है और उस दृष्टि से इन्हें पृथक वर्ग में रखा जाये या किसी एक वर्ग के अन्तर्गत।

२. ३. ७. य् का वितरण : य्, ई, इ ये तीन ध्वनियाँ एक दूसरे के सदृश हैं। ई एवं इ तो स्वतंत्र ध्वनिग्राम हैं। अतः अब ई और इ के साथ य् की व्यतिरेकी स्थिति देखकर ही उसके ध्वनिग्रामीय स्वरूप का अंकन किया जा सकता है—

गाय्—ga: y = गाय   दाय्—da: y = पसंद
गाई—ga: i: = गाना (भूत० कृदंत) दाई—da: i: = दाई
पायाँ—pa: yă: = पाया (वि० बहु०) दायाँ—da:yă: = पसंद(मूल बहु०)

पाइआँ—pa: iă: = पाई (बहु०) दाइआँ—da: iă: = दाइयों(वि०बहु०)

उपर्युक्तपदों में य्, ई तथा इ में परस्पर विरोध पाया जाता है। अतः ई, इ से य् भिन्न है। य् ध्वनि इनमें से किसी का संस्वन नहीं हो सकती। य् निम्न स्थानों में आता है :

१. शब्दादि में, यथा—यार्, याद्, योजना।
२. शब्दांत में, यथा—गाय्, चाय्, दाय्, माँय् (अन्दर)
३. स्वर-मध्य में, यथा—माया, छाया, काया आदि।
४. व्यंजन-स्वर मध्य में, यथा—न्यारो, त्यारी, ग्यारस्, ख्याल्, विद्या, टूट्यो, कर्यों आदि।

२. ३. ८. व् का वितरण : ऊ, उ के साथ व् की समानता है। ऊ, तथा उ भाषा के पृथक ध्वनिग्राम हैं। व् का ध्वनिग्रामीय मूल्य ऊ तथा उ के साथ व्यतिरेकी स्थिति होने पर ही स्पष्ट होगा, यथा—

देव् —dev = देव   दाँव्—dă:v = दाँव
देऊ —deu: = देने का इच्छुक दाँऊ—dă:u: = भलीभाँति
तावाँ—ta:vă: = पिघलाते हैं (उ० पु० बहु०) प्यावाँ—pya:vă: = पिलाते हैं (उ०पु० बहु०)
ताउआँ— ta:uă: = ताऊ (वि० बहु०) प्याउआँ—pya:uă: = प्याऊ (मूल बहु०)

[illegible] में [illegible] है। [illegible]
[illegible] है। [illegible]
[illegible] हैं—

१. [illegible] में, जैसे— [illegible]
२. [illegible] में, जैसे— [illegible]
३. [illegible] में, जैसे— [illegible]

[illegible] हैं :

/इ/ [illegible] = [illegible] : [illegible]
/उ/ [illegible] = [illegible] : [illegible]
[illegible]

२.५. स्वर-संयोग (Vowel-nuclei)

२.५.१. [illegible] के शब्दों एवं पदों में दो या तीन स्वरों तक के संयोग मिलते हैं। दो स्वरों के संयोगों का बाहुल्य है। तीन स्वरों के संयोग अल्पतम हैं। अन्य स्वरों के संयोग सीमित हैं। [illegible] स्वर इ, उ का संयोग [illegible] हो सकता है। पदान्त में केवल दीर्घ स्वर ही मिलता है। पदादि में अधिक स्वर-संयोग ही उपलब्ध हैं। यथा—

गउवाँ = गाँव
आए = आया (आना क्रिया)
आउ = आने का हुक्म
आई = आई ([illegible])

इसी प्रकार पद-मध्य में भी स्वर-संयोग उपलब्ध हैं। यथा—

सुआरी = सुपारी
[illegible] = मोहल्ला

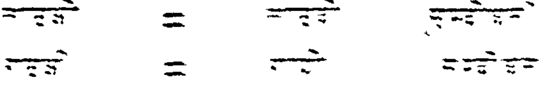
यदि स्वर-संयोगों की बहुलता है तो पदान्त स्थिति में, जहाँ दो स्वरों से लेकर तीन स्वरों तक के भी स्वर संयोग उपलब्ध हैं। दो स्वरों के विभिन्न संयोगों को तालिका द्वारा स्पष्ट करके उदाहरण-स्वरूप कुछ शब्द भी परिलक्षित किये जायेंगे।

पदांत में स्वर-संयोग :

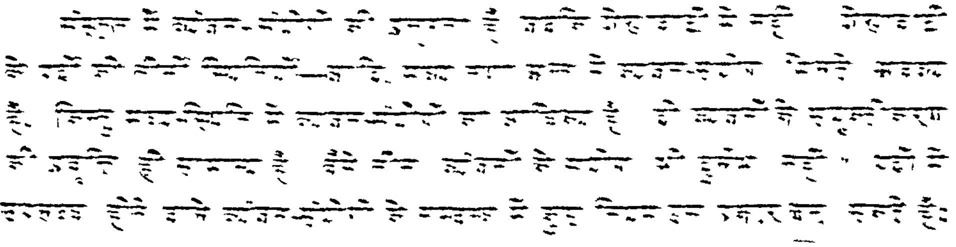
	–अ	–आ	–इ	–ई	–उ	–ऊ	–ए	–ऐ	–ओ	–औ	
अ–				+		+	+				३
आ–				+		+	+		+		४
इ–						+	+				२
ई–				+		+	+				३
उ–		+		+		+	+		+		५
ऊ–		+		+		+	+		+		५
ए–		+		+		+	+		+		५
ऐ–											
ओ–		+		+		+	+		+		५
औ–		+							+		२
	०	५	०	७	०	८	८	०	६	०	३४

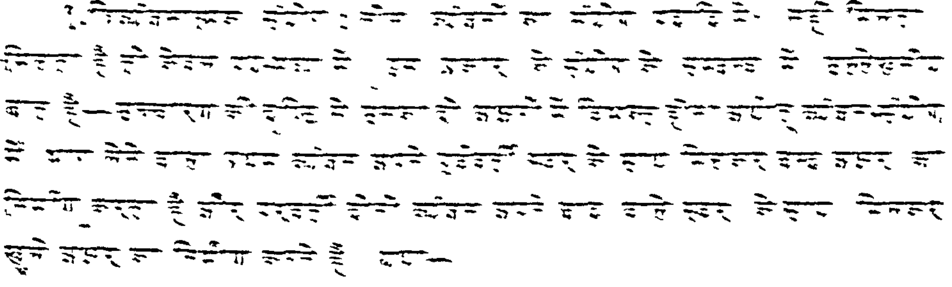
उदाहरण :— तई = इमरती बनाने वाली कड़ाही, गऊ = गाय, तए = तप्त हुए, भाई ताऊ, गाए = गाना (आज्ञार्थक),जाओ = जाइए, गिऊँ = गेहूँ, दिए = देना (आज्ञार्थक), पीई = पी, पीऊ = पीने का इच्छुक, पीए = पीना (आज्ञार्थक ,दुआई दवाई, धुई = धुली, पुऊ = रोटी बिलने के लगभग, धुए = धुलना(आज्ञार्थक), धुओ धुला हुआ, भुआ = बुआ, सुई, छूऊ = छूने का इच्छुक. छूए = छूना (आज्ञार्थक), पूओ = पुआ, खेई = खेई (नौका खेना) देऊ = देने का इच्छुक, देए = देना (आज्ञार्थक), मेओ = मेवा, खोआ = खोया (बहु०), लोई = खून, धोऊ = धोने का इच्छुक, धोए = धोना (आज्ञार्थक) फोओ = फीया, चौआ (बहु०), चौओ (एक वचन) ।

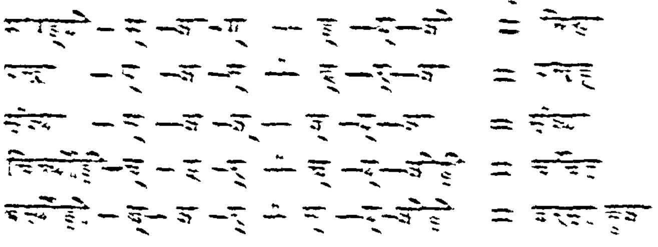
पदांत में विभक्ति-प्रत्यय के योग से तीन स्वरों के भी संयोग मिलते हैं, किन्तु बहुत ही कम, क्योंकि प्राय: स्वरात्मक संसर्पण बड़ा स्पष्ट रहने के कारण श्रुतियां अंकित कर दी जाती हैं। यथा—

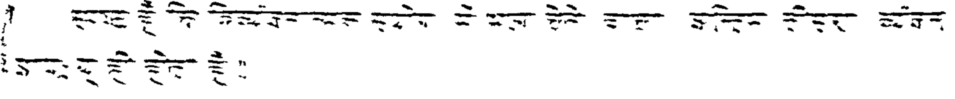


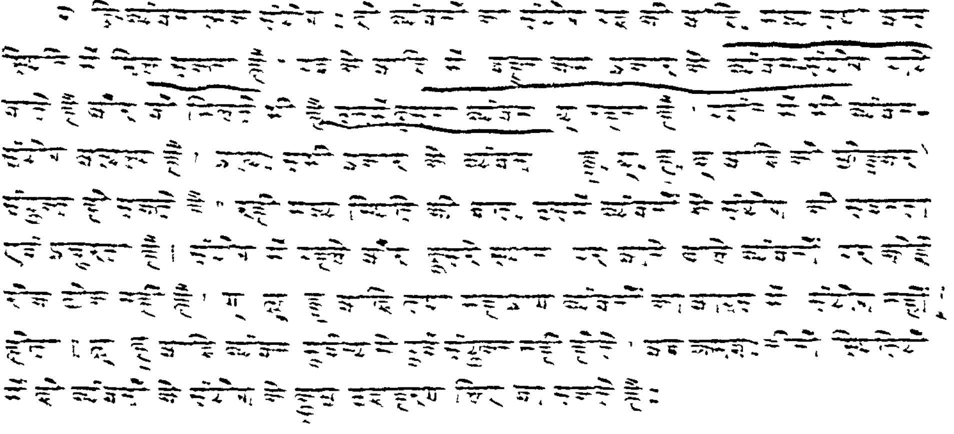












(१) आदि स्थानीय : पदादि में संयुक्त होने वाले व्यंजनों में दूसरा य् होता है। य् के पूर्व ङ्, ळ्, ण्, छ्, झ्, य्, व् आदि कुछ व्यंजनों का संयोग नहीं होता है। व्यंजन-संयोग के फलस्वरूप आद्यक्षर का ध्वनि-क्रम होगा – क् (व्यंजन) + य् + अ(स्वर)। यथा—क्यूँ, ज्यूँ, त्यूँ, प्याऊ, ल्याऊ (लाने का इच्छुक), ध्यान्, क्यारी, न्यारी, ग्यारस्, ब्या (विवाह) ,ध्यावस् (धीरज) आदि।

(२) मध्य स्थानीय : इस प्रकार के व्यंजन-सयोग सयुक्तता की घनिष्ठता के आधार पर तीन प्रकार के माने जा सकते हैं :

(i) ऐसे व्यंजन-संयोग जिनके उच्चारण में व्यंजन की तीनों विशेषताओं—स्पर्श, ग्रहण तथा मोचन की प्रक्रिया अपूर्ण रहती है। इसके अतिरिक्त कतिपय शब्दों में ल् + ड् का संयोग भी द्रष्टव्य है –

द्वित्व : अक्कल् = बुद्धि
सच्चो = सच्चा
खट्टो = खट्टा
लत्तो = कपड़ा
मत्तै = इच्छानुसार
चुप्पी = चुप्पी
खड्डो = गड्ढा
घुड्डी = गुड़िया
मुद्दो = तिलक
भद्दो = भद्दा
सल्ला = राय

वर्गीय नासिक्य + स्पर्श:
पंखो = पंखा
पंज्यो = पंजा
घंटो = घंटा
फंदो = फंदा
खम्भो = खम्भा

ल् + ड् का संयोग :
कुल्डो = कुल्ला
सल्डक् = सड़क
होल्डर् = कलम
अल्डाणो = चीखना

(ii) ऐसे व्यंजन-संयोग जिनका उच्चारण एक अक्षर में ही सन्निहित रहता है। इस प्रकार के संयोग में संयुक्तता अत्यधिक घनिष्ठ होती है अर्थात् प्रथम प्रकार के संयोगों से ये संयोग अधिक संयुक्तता रखते हैं, क्योंकि इनमें मध्यवर्ती व्यंजनों का संयोगाभाव है, यथा—

सोम्ना — म्+न् (म्न्) = शोभा

मुल्नां — ल्+न् (ल्न्) = भलीभाँति

कोट्ना — ट्+न् (ट्न्) = कठिन

छिल्नो — ल्+न् (ल्न्) = पालतू

ऐसे संयोग केवल न् के साथ ही होते हैं।

(iii) ऐसे व्यंजन-संयोग जिनके उच्चारण की प्रक्रिया लगभग पूरी हो जाती है, किन्तु कोई मध्यवर्ती श्रुति नहीं सुनाई देती। बोली के रचनात्मक गठन की दृष्टि से इसके तीन वर्ग निर्धारित किये जा सकते हैं। लिपि में प्रचलित वर्ण-योग वस्तुतः इसी रचनात्मक गठन का ही अनुसरण करता जान पड़ता है।

(१) शब्द-बाह्य-संयोग (Inter—word consonant cluster)—संज्ञा अथवा कृदन्तीय शब्दावली के अन्त्य व्यंजन के साथ परसर्गीय शब्दावली के आदि व्यंजन के संयोग की प्रवृत्ति को उक्त संज्ञा 'शब्द-बाह्य-संयोग' दी गई है। उच्चारण-प्रयत्न तथा योजन-प्रक्रिया की दृष्टि से यह संयोग निम्न परिगणित संयोगों से भिन्न नहीं कहा जा सकता है, यथा—

न् + त्

मन् + तक् = मन भर तक

जान् + तक् = प्राण तक

न् + क्

कान् + को = कान का

दाम् + को = मूल्य का

कन् + को = कम पैसों का

नाम् + को = नाम का

(२) अन्तश्शब्द-संयोग (Intra—word consonant cluster) शब्दरचना या पद-रचना में प्रकृति एवं प्रत्यय के संधि-स्थल पर आगत व्यंजन संयोग का उक्त नामकरण किया गया है। वस्तुतः उपर्युक्त व्यंजन संयोग के समान इस प्रकार के व्यंजन संयोग में भी कोई मध्यवर्ती श्रुति सुनाई नहीं देती। किन्तु पूर्व एवं परभाग के व्यंजनों के लिये

बन्द	न्	+	द्	=	बन्द
ठन्ड	ण्	+	ड्	=	ठण्ड
कन्ठ	ण्	+	ठ्	=	कण्ठ

२. ५. १. 'व्यंजन-संयोग' शीर्षक के अन्तर्गत ही विचारणीय प्रश्न है कि क्या महाप्राण व्यंजनों को एक व्यंजन ध्वनिका में स्वीकार किया जाये अथवा व्यंजन-संयोग (जैसे क् + ह् = ख्) माना जाये वस्तुतः ऐतिहासिक भाषाशास्त्र उसको मुख > मुँह् (क् तत्त्व का लोप) और भूख् > भूक् (ह् तत्व का लोप) के उदाहरणों से दो भिन्न तत्वों के रूप में स्वीकार कर रहा है। किन्तु किसी एक समय विशेष की भाषा का वैज्ञानिक विश्लेषण जिन नियमों से अधिक सुस्पष्ट हो, उसी रूप को स्वीकार करना अधिक उचित होगा। महाप्राण व्यंजनों को एक इकाई रूप में निम्न कारणों से स्वीकार किया जा सकता है—

१. उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से दोनों तत्वों का उद्घोषण एक साथ ही होता है, जबकि सामान्य व्यंजन-संयोगों में पूर्वापर संबंध स्पष्ट रहता है।

२. शब्द की तीनों स्थितियों—आदि, मध्य और अन्त में महाप्राण व्यंजनों का उसी प्रकार स्वतंत्रता से प्रयोग होता है, जिस प्रकार अल्पप्राण व्यंजनों का।

३. शेखावाटी में शब्दादि में त्रि-व्यंजनात्मक संयोग नहीं हैं अर्थात् क् क् क् अ—(c c c v) का क्रम नहीं है, पर यदि महाप्राण व्यंजनों को संयुक्त व्यंजन स्वीकार करते हैं तो केवल इनके लिए ही आक्षरिक वितरण में अन्तर मानना पड़ेगा। यथा—ख्यात्—क् क् क् अ. क् (c c c v c)।

४. शेखावाटी धातुओं का अन्त संयुक्त व्यंजनों में नहीं होता। यदि हम महाप्राण व्यंजनों को संयुक्त मान लेते हैं तो √दूख्, √चूँख् आदि धातुओं को अपवाद रूप में ग्रहण करना पड़ेगा; क्योंकि तब इनका अन्त संयुक्त व्यंजन में माना जायेगा। अतः ऐसी अव्यवस्था की आवश्यकता ही क्या है।

५. लिपि-परम्परा और भारतीय वैयाकरण इन्हें महाप्राण रूप में ही अंगीकार करते हैं।

२.६. अक्षर-वितरण (Syllabication)

२.६.०. एक ही श्वासाघात में उच्चरित ध्वनि या ध्वनि-समूह को अक्षर कहा जाता है। प्रत्येक भाषा या बोली में इस प्रकार की श्वास-प्रक्रिया पर आधारित विराम-स्थल होते हैं। एक एक श्वासाघात के पश्चात् स्वल्प विराम अनिवार्यतः पाया जाता है। अतः प्रत्येक श्वासाघात में कभी एक ही ध्वनि (केवल स्वर) या कभी एकाधिक ध्वनियाँ (व्यंजन + स्वर + व्यंजन) उच्चरित होती हैं। इस प्रकार श्वास-प्रक्रिया से संबंधित ये इकाइयाँ प्रत्येक भाषा या बोली में अपने-अपने ढंग की हो सकती हैं। उनके उच्चारण में यत्किंचित् परिवर्तन से भले ही अर्थभेद उत्पन्न न हो, किन्तु उस भाषा विशेष के बोलने वालों के मध्य उच्चारण अस्वाभाविक होने से हास्यास्पद होगा और सरलता से ऐसा व्यक्ति इतर भाषा-भाषी समझ लिया जायेगा; क्योंकि उसकी श्वास-प्रक्रिया उस भाषा के शब्दों के उच्चारण में समत्व नहीं रख पा रही है। अतः कहा जा सकता है कि किसी भी नयी भाषा को सीखने के लिये श्वास-प्रक्रिया पर आधारित अक्षर-वितरण का जानना परमावश्यक है। ऐसा होने पर ही हम अपने वक्तव्य में स्वाभाविकता ला सकते हैं अन्यथा हमारा उच्चारण अस्वाभाविक होगा। शेखावाटी शब्दों की लघुतम और वृहत्तम अक्षर-संख्या कितनी संभव है तथा अनेकाक्षरीय शब्दों में प्राप्त व्यंजन-समूह किस प्रकार विविधाक्षरों में वितरित होता है और साथ ही शब्द या पद की परिधि के साथ अक्षर की परिसीमा किस प्रकार सम्बंधित है आदि नियमों की चर्चा करना ही यहाँ अभीष्ट है :

१. एकाक्षरी शब्द : [अ = स्वर, क् = व्यंजन]

१. अ—इस वर्ग में अत्यल्प शब्द आते हैं। एक ही स्वर से सम्पन्न शब्द शेखावाटी में इने-गिने ही हैं। यह स्वर सदैव दीर्घ ही रहता है। यथा—

आ (= तू आ)
ऊँ (= उस) (ऊँ किताब मैं फोटू है)

२. क् अ—इस कोटि की शब्दावली अच्छी संख्या में मिलती है। ऐसे शब्दों में भी सदा दीर्घ स्वर ही मिलता है।

जा (= तू जा)
धो (= तू धो)
छू (= तू छू)
के (= क्या)

३. अ क्—इस वर्ग के शब्दों की संख्या भी पर्याप्त है, यथा-

आक्
आख्
आग्
अर् = और
आज्
आंच्
आत्

४. क् अ क्—शेखावाटी बोली की अधिकांश शब्दावली इस वर्ग में स्थान पाती है। अतः कहा जा सकता है कि इस वर्ग का ध्वनि-क्रम भाषा की रीढ़ है :

काल् = कल
माळ् = माल
चाल् = चाल
मत् = मत
भाग् = भाग
भोग् = भोग
काळ् = मृत्यु
राग् = संगीत

५. क् क् अ क्—कतिपय शब्दों में ही यह ध्वनिक्रम सुलभ है। द्वितीय व्यंजन य् अथवा व् ही मिलते हैं। यथा—

प्यार् = प्रेम
त्यार् = तैयार
ज्वार् = ज्वार
स्यान् = शान
ध्यान् = ध्यान
ग्यान् = ज्ञान
स्वांर् = हजामत

६. अ क् क्—अति सीमित शब्दावली ही उपलब्ध है। यथा—

अन्त्
अण्ड्

७. क् अ क् क्—इस कोटि की भी सीमित शब्दावली ही है। अन्तस्थानीय व्यंजन संयोग में उद्धृत लगभग सारे शब्द यहाँ उदाहरण के लिए प्रस्तुत किये जा सकते हैं। यथा—

वन्द् = बन्द
धुन्द् = कोहरा
सख्त् = कठोर
भद्द् = निन्दा
हल्ड् = हर्रे
झट्ट् = फौरन
लट्ठ् = लाठी

२. द्व्यक्षरी शब्द :

१. अ. अ—इने-गिने शब्द ही इस कोटि के प्राप्त होते हैं। यथा—

आओ = आइए
आई = आई (स्त्री० भूत० रूप)
आए = आना (अज्ञार्थक)

२. क् अ. अ—इस कोटि के शेखावाटी में पर्याप्त शब्द ढूंढे जा सकते हैं। यथा—

जाओ = जाइए
पीओ = पीजिये
सोओ = सोइए
सुई = सुई
हुई = हुई
कुई = कुइयाँ
रोई = रोई
लोई = खून

३. अ. क अ—इस वर्ग के भी कुछ शब्द उपलब्ध हैं। यथा—

आँटो = दर्द का दौरा
आटो = आटा
ओटो = वापस
आखो = पूरा
आसा = आशा

४. क् अ. क् अ—इस वर्ग के शब्द पर्याप्त उपलब्ध हैं। यथा—

खाटो = खट्टा
मीठो = मीठा
फीको = फीका
मोटो = मोटा
नोरो = नाला
छोरो = लड़का
छोरी = लड़की
बड़ो = बड़ा

५. क् क् अ. क् अ—इस कोटि की शब्दावली सीमित ही कही जा सकती है। यथा—

न्यारो = अलग
प्यारो = प्यारा
क्यारी = क्यारी
प्यालो = प्याला
स्यानो = होशियार

६. क् क् अ. अ—बहुत सीमित शब्दावली प्राप्त है। यथा—

न्याऊ = घटिया
प्याऊ = प्याऊ
ल्याऊ = लाने का इच्छुक

७. क् अ. क् अ क्—ऐसे पर्याप्त शब्द मिलते हैं जिनमें इस कोटि का ध्वनिक्रम होता है। यथा—

कासण् = बर्तन
चलण् = चलन
मरण् = मौत
सोगन् = शपथ
सहूर् = तमीज
कीकर् = एक वृक्ष विशेष
तीतर् = तीतर पक्षी
कागज् = कागज
ठेसण् = स्टेशन

टाबर् = बच्चा
मसाण् = श्मशान

८. क् अ क्. क् अ--इस कोटि की शब्दावली पर्याप्त मात्रा में सुलभ है। यथा—

हल्लो = अफवाह, आवाज
सोभ्या = शोभा
सुल्याँ = भलीभाँति
मतै = स्वेच्छानुसार
कुण्डो = कुण्डा
मुण्डो = मुख
धुन्दो = मन्द

९. अ क्. क् अ क्—बहुत ही थोड़े शब्द मिलते हैं। यथा—

अंजन् = इंजन
अक्कल् = अक्ल
अंतर् = इत्र
अंदाज् = अन्दाज

१०. क् अ. क् क् अ क्—इस ध्वनिक्रम के शब्द भी खोजने पर मिल जाते हैं। यथा—

मोट्यार् = आदमी
कोठ्यार् = मिष्ठान भण्डार

३. त्र्यक्षरी शब्द :

१. अ. क् अ. अ—इस ध्वनिक्रम के कतिपय शब्द ही मिलते हैं। यथा—

उढाऊ = केवल हुक्म देने वाला
उड़ाऊ = खर्चीला

२. अ. क् अ. क् अ—इस ध्वनिक्रम के शब्द नाम मात्र को ही हैं :

आरियो = ककड़ी
ओळुमो = शिकायत
अठिनै = इधर
उठिनै = उधर

३. अ क्. क् अ. क् अ—इस कोटि के भी थोड़े ही शब्द मिलते हैं:

[illegible] = [illegible]

[illegible] = अड़े वाला

४. अ क्. क् क् अ. क् अ—एक मात्र शब्द ही इस प्रकार का है:

[illegible] = थक जाना

५. क् अ. क् अ. अ—इस ध्वनिक्रम के शब्द भाषा में अधिक नहीं कहे जा सकते हैं। यथा—

कमाऊ = कमाने वाला

[illegible] = निठल्ला

खिलाऊ = खर्चीला

६. क् अ. क् अ. क् अ—इस कोटि के पर्याप्त शब्द उपलब्ध हैं, यथा—

सलिमो = सिनेमा

नरोटी = लकड़ी का बोझ

चौमासो = वर्षाकाल

चौबारो = घर के ऊपर का कमरा

चबोड़ा = हँसी-मजाक

७. क् अ. क् अ. क् अ क्—अत्यल्प शब्दावली ही मिलती है। यथा—

पिछोड़न् = पिछोड़न

लट्कमण् = लटकने के लिए

सिमावण् = सिलवाने के लिए

८. क् अ. क् अ क्. क् अ—कतिपय शब्द ही खोजे जा सकते हैं। यथा—

कनागता = श्राद्ध पक्ष

लटूम्णो = लटकना

तफूस्ड़ो = तिनका

९. क् अ क्. क् अ क्. क् अ—इस ध्वनिक्रम के थोड़े से शब्द मिल रहे हैं। यथा—

दर्साव्णो = दिखाना

समझाव्णो = समझाना

१०. क् अ क्. क् क् अ. क् अ—इस ध्वनिक्रम के अत्यल्प शब्द हैं। यथा—

खर्च्योड़ी = खर्च की हुई

चिर्च्योड़ी = चर्चित

विर्च्योड़ी = रुष्ट (स्त्री० रूप)

११. क् अ क्. क् अ. क् अ---इस प्रकार के थोड़े से शब्द हैं। यथा—

बुर्काणो = छिड़काना
बापूकाणो = गाली विशेष

१२. क् अ क्. क् अ. क् अ क्—अत्यल्प शब्द मिलते हैं। यथा—

सल्लासूत् = विचार-विमर्श
चिम्गादड़् = चमगादड़

४. चतुरक्षरी शब्द :

१. अ क्..क् अ. क् अ क्. क् अ—नाम मात्र को ही इस ध्वनिक्रम के शब्द मिल सकते हैं। यथा—

ऐण्डावट्टी = इधर उधर का काम

२. क् अ. क् अ. क् अ. क् अ—कतिपय शब्द मिल रहे हैं। यथा—

हुणियारो = संस्कारों की प्रतिच्छाया
टाँकोटेवो = कढ़ाई बुनाई
दवाखानो = दवाखाना

३. क् अ. क् अ. क् अ. क् अ क्—एक आध शब्द मिलता है। यथा—
मनीयाडर् = मनीआर्डर

४. क् अ. क् अ क्. क् अ. क् अ—एकाध शब्द ही खोजा जा सकता है—
दवाव्खानो = काँजीहौस

५. क् अ क्. क् अ. क् अ. क् अ—कतिपय शब्द ही मिलते हैं। यथा—

खुड़्खुड़ानो = खटखटाना
फड़्फड़ानो = फड़फड़ाना
कट्कटाणो = कटकटाना
फट्फटाणो = फटफटाना

शेखावाटी बोली में इस प्रकार अधिकाधिक चार अक्षरों तक के शब्द मिल रहे हैं। पंचाक्षरी शब्दों का सामान्यतः अभाव ही है, [illegible] ही एक आध शब्द मिल जाये, यथा—दवाईखानो (दवाखाना) शब्द-निर्माण में ध्वनि-वितरण संबंधी नियम निम्न बनाये जा सकते हैं—

१. स्वर मध्यवर्ती व्यंजन अपने परवर्ती स्वर के साथ उच्चरित होता है, यथा—

अजक् — अ. जक्
आटो — आ. टो
अठै — अ. ठै

२. शब्द के आदि संयुक्त-व्यंजन अपने ठीक परवर्ती स्वर के साथ, मध्य संयुक्त-व्यंजनों में से प्रथम व्यंजन अपने पूर्ववर्ती तथा शेष व्यंजन अपने परवर्ती स्वर के साथ और अन्त संयुक्त-व्यंजन ठीक पूर्ववर्ती स्वर के साथ संबद्ध होते हैं, यथा—

त्यारी = त्या. री । क् क् अ. क् अ ।
ज्वार् = ज्वार् । क् क् अ क् ।
न्यारो = न्या. रो । क् क् अ. क् अ ।
धन्दो = धन्. दो । क् अ क्. क् अ ।
सल्ला = सल्. ला । क् अ क्. क् अ ।
सिटल्लू = सिटल्.लू । क् अ.क् अ क्. क् अ ।
पन्द्रा = पन्. दरा । क् अ क्. क् क् अ ।
भद्द् = भद्द् । क् अ क् क् ।

३. शब्दादि में जैसा ध्वनिक्रम होगा वैसा ही क्रम अक्षर के आदि में भी मिलता है यथा—

१. ङ् से शब्दारंभ नहीं मिलता ।

२. क् क् अर्थात् संयुक्त-व्यंजन में द्वितीय व्यंजन अनिवार्यतः अर्धस्वर मिलता है ।

४. पदांश (Morpheme) की परिसीमा के अक्षर की सीमा सर्वांगसम हो, यह अवश्यक नहीं—

तिस्लो — तिसल् + ओ (पदांश परिसीमा)
तिस् + लो (अक्षर सीमा)
खेल्तो — खेल् + तो (पदांश परिसीमा)
खेल् + तो (अक्षर सीमा)

५. शब्द-सीमा के अक्षर की सीमा अवश्य सम मिलती है, यथा—

काल् – सैं, नैं
आज् – सैं, को

शब्दावली को भी एक प्रकार से व्याकरणिक लिंग दिया जा सकता है अर्थात् अन्त्य ध्वनि के आधार पर हम प्राय: लिंग शब्द का बोध कर लेते हैं जो कि व्याकरणिक ही कहा जाएगा क्योंकि शब्द के रूप (अंतिम ध्वनि) के आधार पर लिंगबोध होता है, न कि अर्थ के आधार पर। शेखावाटी में प्राय: ओकारांत शब्द पुल्लिग और ईकारान्त शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। यद्यपि हम कोई भी नियम बनाएँ कि अमुक प्रकार के शब्द पुल्लिग होंगे और अमुक प्रकार के स्त्रीलिंग, उनमें अनिवार्यत: अपवाद रह जाते हैं क्योंकि शब्द-रूप (अंतिम ध्वनि) की दृष्टि से पुल्लिग संज्ञाएँ लगभग उतनी ही प्रकार की होती हैं जितनी प्रकार की स्त्रीलिंग संज्ञाएँ। बोलीगत अपवादों का लिंग-निर्णय हम शब्द-प्रयोग के आधार पर कर लेते हैं। अतएव लिंग-निर्णय के दो सर्वमान्य आधार बन सकते हैं—

१. शब्द-रूप

२. शब्द-प्रयोग

३. २. १. शब्द-रूप :

(i)—ओ में अन्त होने वाली समस्त संज्ञाएँ पुल्लिग हैं—

दादो = दादा नानो = नाना
काको = काका घोडो = घोड़ा
बाँदरो = बंदर चिड़ो = चिड़ा
तावड़ो = धूप आटो = आटा
पीसो = पैसा मटको = घड़ा
जो = जौ मोरो = नाला

(ii)—ई में अन्त होने वाली संज्ञाएँ अधिकांशत: स्त्रीलिंग होती हैं—

ताई = ताई चाची = चाची
लुगाई = स्त्री सुनारी = सुनारिन
चमारी = चमारिन लुहारी = लुहारिन
पाती = पत्ती डब्बी = डिब्बी
रोटी = रोटी ककड़ी = ककड़ी
तूमड़ी = कैंडिल दवाई = दवा

अपवाद—नाई, दर्जी, धोवी, माळी, आदमी, घी, पाणी, लोई (रक्त), दही, मोती आदि।

(iii)–आ में अन्त होने वाली संज्ञाएँ अधिकांशतः स्त्रीलिंग ही हैं

भूवा	=	बूआ	माँ	=	माता
आसा	=	आशा	माया	=	माया
आत्मा	=	आत्मा	मैदा	=	मैदा
घीया	=	लौकी	काया	=	शरीर
दया	=	दया	चा	=	चाय
मक्का	=	मक्का	छाया	=	छाया

अपवाद : राजा, म्हातमा, पर्मातिमा, देवता आदि।

(iv)–ऊ में अन्त होने वाली संज्ञाएँ दोनों ही लिंग में समान रूप से मिलती हैं, यथा–

पुं०	ताऊ	=	ताऊ	झाऊ	=	जानवर विशेष
	विच्छू	=	विच्छू	डाकू	=	डाकू
	कालू	=	व्यक्ति का नाम	बापू	=	पिता
	आलू	=	आलू	हावू	=	एक कीट विशेष
	साडू	=	साढू	मूँ	=	मुख
	नूँ	=	नख	चक्कू	=	चाकू
	लाडू	=	लड्डू	आँसू	=	अश्रु
	गिऊँ	=	गेहूँ	निम्बू	=	नींबू
स्त्री०	गऊ	=	गाय	भू	=	बहू
	जूँ	=	जूँ	लू	=	लू
	वाळू	=	बालू	दारू	=	दारू
	दाड़ू	=	अनार	गैरू	=	गैरू
	तोरू	=	तुरई			

(v)–ए में अन्त होने वाली संज्ञाएँ केवल जातिबोधक हैं और मात्रा की दृष्टि से अत्यल्प हैं जो लिंग की दृष्टि से पुल्लिग हैं, यथा—पांडे, चौबे, दुबे आदि।

(vi)–ऐ में अन्त होने वाली संज्ञाएँ अत्यल्प मात्रा में मिलती हैं। लिंग की दृष्टि से सामान्यतः स्त्रीलिंग हैं। यथा—कै (उल्टी), जै (जय), लै (लय) आदि।

३. २. २. शब्द प्रयोग :

व्यंजनान्त शब्द चाहे प्राणिवाचक हों अथवा अप्राणिवाचक, लोक-प्रयोग ही उनका लिंग निर्णायक होता है। कोई सुविधाजनक अन्य आधार नहीं मिलता। अतः इस संबंध में सुविधाजनक नियम भी नहीं बनाये जा सकते हैं। व्यंजनान्त शब्दावली में शब्द-रूप अर्थात् अन्त्य स्वरों के अभाव में शब्द के स्वरूप के आधार पर व्याकरणिक लिंग आरोपित नहीं हो पाता है, बल्कि लोक-प्रचलनके आधार पर लिंग स्वीकार करना पड़ता है। ऐसे शब्दों का लिंग वाक्य के आधार पर जाना जा सकता है। कभी-कभी विशेषण पद तो कभी क्रिया-पद व्यंजनान्त शब्दों के लिंग की अभिव्यक्ति करते देखे जाते हैं। यथा–छोटो बिल्, छोटी बेल्, बड़ो अंजन्, बड़ी मोटर्, साग् आच्छो है, आग् बुरी है, दूद् गिर्यो, दूब गिरी, छाज् आयो (सूप आया), लाज् आई (लज्जा आयी), दाँत् टूट्यो, बात् घटी। लोक-प्रयोग की महिमा कहाँ तक की जाये, 'मूँछ्' को ही लीजिये, जिसका कि स्त्री-जाति से कोई नाता नहीं और जो एक मात्र मर्दानेपन की निशानी है, उसे भी लोक-प्रयोग ने स्त्रीलिंग बना डाला। इसी प्रकार 'गरभ्' और 'थण्' (थन) लोक-प्रयोग के कारण स्त्री-जाति से संबंधित होकर भी पुल्लिग हैं। अतः व्यंजनान्त शब्दों के लिंग-निर्णय का एकमात्र आधार लोक-प्रयोग ही हो सकता है और इस आधार पर यहाँ कुछ पुल्लिग और स्त्रीलिंग शब्दों की सूची प्रस्तुत की जा सकती है–

पुल्लिग	स्त्रीलिंग
बिल् = छेद	बेल् = लता
चावळ्	दाल्
होल्डर्	मोटर्
पीर् = पीहर	खीर्
डूँगर् = पहाड़	ज्वार्
कागच्	कमीच्
नाज् = अन्न	खाज्
पाप्	छाप् = अंगूठी
छाज् = सूप	लाज्
साग्	आग्
दाँत्	बात्
सूत्	छूत्
खेत्	भींत्
कान्	स्यान् = शान
बड़् = वट वृक्ष	लड़् = श्रृंखला

करने में पूर्ण समर्थ है। अत: इसे मूल रूप या मूल कारक कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ :

छोरो भाग् गो	=	लड़का भाग गया। (कर्त्ता)
छोरो बुलायो गयो	=	लड़का बुलाया गया (कर्म)
वोजो वढै है	=	पेड़ बढ़ता है। (कर्त्ता)
वोजो गिरा	=	पेड़ गिराओ (कर्म)

ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान के विद्यार्थी को यह स्मरण रखना होगा कि ये मूल रूप शेखावाटी के प्रातिपदिक-निर्णय की दृष्टि से हैं। तथ्यत: इन मूल रूपों में संस्कृत-युगीन विभक्ति-प्रत्ययों के अवशेष सजीव हैं और उन्हीं के बल पर ये रूप अपने कर्त्ता और कर्म के संबंधों को प्रकाशित कर रहे हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यदि इन मूल रूपों के संबंध में यह कहा जाये कि ये संस्कृत-काल के संज्ञा-रूपों की मौलिक विशेषता–कारक-वचन-सिद्धता धारण करते हैं तो अनुचित न होगा। इन्हें संश्लिष्ट रूप में ग्रहण किया जा सकता है क्योंकि इनमें कारक-संबंधों को स्पष्ट करने वाले तत्त्व संयुक्त हैं।

३. ४. २. विकारी रूप–संज्ञा का यह वह रूप होता है जो मूल रूप या प्रातिपदिक-रूप की तुलना में कुछ परिवर्तित (विकृत) जान पड़ता है। परिवर्तन की इसी प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर इसे 'विकारी' रूप की संज्ञा दी गई है। वास्तव में इन रूपों में भी संस्कृत के विभक्ति–प्रत्ययों के अवशेष वर्तमान हैं, किन्तु अब इन अवशेषों में कारक-संबंधों को प्रकाशित करने की शक्ति क्षीण हो गई। परिणामत: ये रूप कुछ कारकचिन्हों नैं, सैं, को आदि को साथ लेकर विभिन्न कारक-संबंधों को प्रकट करते देखे जाते हैं। यथा–

छोर्–आ नैं मार्यो	(–आ+नैं)	=	लड़के को मारा।
वात्–आँ सैं के होवै	(–आँ+सैं)	=	वातों से क्या होता है ?
लोट्–आँ मैं पाणी थो	(–आँ+मैं)	=	लोटों में पानी था।

ऐतिहासिक दृष्टि से ये रूप संस्कृत-काल के संज्ञा-रूपों की मौलिक विशेषता–कारक-वचन-सिद्धता खो बैठे हैं। अब वाक्य में अन्य पद के साथ अपना व्याकरणिक सम्बन्ध स्थापित करने में इन रूपों को अलग से कारक-चिन्हों की सहायता लेनी पड़ती है। अतएव इन्हें विश्लिष्ट-रूप में ग्रहण किया जा सकता है क्योंकि इनमें कारक-संबंधों को स्पष्ट करने वाले तत्त्व (कारक-चिन्ह) अलग से बाद में रखने पड़ते हैं।

३. ४. ३. सम्बोधन-रूप : मूल और विकारी रूपों (कारकों) के अतिरिक्त बोली में संज्ञाओं का सम्बोधन-रूप भी मिलता है जो उपर्युक्त दोनों रूपों से अलग विशेषता रखता है। संज्ञा का यह वह रूप होता है जिससे किसी प्राणी ५ को

या यदा-कदा भावुकता में जड़ पदार्थों को भी सम्बोधित किया जाता है। वैसे यह रूप भी विकारी रूप (कारक) माना जा सकता है (संघटना की दृष्टि से) किन्तु इस सम्बंध में उल्लेखनीय बात यह है कि इसके साथ कारक-चिन्हों का प्रयोग न होकर कुछ विस्मयादि बोधक चिन्हों का प्रयोग किया जाता है, यथा—

हे राम् !	=	हे राम !	
अरै छोरा !	=	अरे लड़के !	(एक वचन)
अरै छोरो !	=	अरे लड़को !	(बहु वचन)
ए छोरी !	=	अरी लड़की !	
ओ भाया !	=	अरे भाई !	

इस प्रकार भाषा में मूल और विकारी रूपों के अतिरिक्त सम्बोधन रूप भी स्वीकार किया जा सकता है। अब विविध (लिंग एवं अन्त्य की दृष्टि से) संज्ञा शब्दों की उपर्युक्त तीनों (मूल, विकारी और सम्बोधन) की रूप-रचना को दोनों वचनों में निम्न तालिका द्वारा देखा जा सकता है

प्रातिपदिक → पुं० (ओकारांत, अन्य), स्त्री०

कारक-	पुं० ओकारांत ए० व०	पुं० ओकारांत ब० व०	पुं० अन्य ए० व०	पुं० अन्य ब० व०	स्त्री० ए० व०	स्त्री० ब० व०
मूल—	छोरो	छोरा	घर्	घर्	बात्, छोरी	बाताँ, छोरियाँ
वि०—	छोरा	छोराँ	घर्	घराँ	बात्, छोरी	बाताँ, छोरियाँ
सम्बो०-	छोरा	छोरो	घर्	घरो	बात्, छोरी	बातो, छोरियो

रूप-रचनात्मक (कारक-वचन) विभक्ति-प्रत्ययों को प्रदर्शित करने के लिये उपर्युक्त तालिका का अन्य स्वरूप निम्न हो सकता है—

प्रातिपदिक → पुं० (ओकारांत, अन्य), स्त्री०

कारक-	पुं० ओकारांत ए० व०	पुं० ओकारांत व०व०	पुं० अन्य ए०व०	पुं० अन्य व०व०	स्त्री० ए०व०	स्त्री० व०व०
मूल—	—	–आ	—	—	—	–आँ
वि०—	–आ	–आँ	—	–आँ	—	–आँ
सम्बो०—	–आ	–ओ	—	–ओ	—	–ओ

उपर्युक्त तालिका में प्रदर्शित पद-रचनात्मक विभक्ति-प्रत्ययों के संयोग से विभिन्न अन्त्य वाली संज्ञा-शब्दावली के ध्वनिग्रामीय स्वरूपों (Phonemic Shapes) में होने वाले रूपान्तरों से सम्बन्धित नियमों का निरूपण 'संधि-विचार' अध्याय के अन्तर्गत किया जायेगा।

अस्तु शेखावाटी ने संस्कृत एवं म० भा० आर्य भाषाओं के रूपों की विविधता एवं अधिकता की जटिलता को समाप्त करके प्रातिपदिकों की रूप-रचना के उद्देश्य से उपर्युक्त केवल तीन वर्ग विकसित किये, जिसके अन्तर्गत समस्त पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग प्रातिपदिक समाहित होते हैं। अब इन तीनों वर्गों के अन्तर्गत कुछ शब्दों को परिगणित करते हुए एक सूची बनाई जा सकती है :

पुल्लिग : ओकारांत :	वकरो	गादड़ो = गीदड़
	घोड़ो	भैंसो
	वघेरो = वाघ	वाँदरो = वन्दर
	कुत्तो	कागलो = कौवा
	वाछो = वछड़ा	ततैयो = वर्र
	चाचो	मामो
	काको	नानो
	दादो	साळो = साला
	वावो	भायो = भाई
	नोसो = दुल्हा	गीगो = वच्चा
	मोरो = नाला	मट्का = घड़ा
	कोठो = कमरा	वोजो = वृक्ष
	चौमासो = वरसात	गोड़ो = टाँग
	धन्दो = धन्धा	खुड़को = आवाज
	रोळो = शोरगुल	रासो = लड़ाई-झगड़ा
	डंडो = डंडा	हण्डो = वड़ा वर्तन, विशेष
	अण्डो = अण्डा	कोचको = छेद
	आटो = आटा	लोटो = लोटा
अन्य :—आ :	राजा	पर्मातमा = परमात्मा
	देवता	म्हातमा = महात्मा आदि।
—ई :	भाई	मोती
	आदमी	लोई = खून
	नाई	घी

	खाती = वढ़ई		पाणी	
	धोवी		दही	
	माळी		दर्जी	
	भंगी			
—ऊ:	आलू		लाडू	= लड्डू
	चक्कू		आंसू	
	नूं	= नाखून	निम्बू	
	मूं	= मुख	चिक्कू	= एक फल
	विच्छू		हींगळू	
	वापू		वावू	
	ताऊ		साडू	= साढू
व्यंजनांत :	विल्	= छेद	डूंगर्	= पहाड़
	चावळ्		पाप्	
	साग्		दांत	
	नाज्	= अन्न	कान्	
	छाज्	= सूप	वड्	= वट वृक्ष
	सूत्		हाथ्	
	खेत्		काद्	= कीचड़
स्त्रीलिंग —ई :	धोती		रोटी	
	खाई		वीड़ी	
	मोरी	= नाली	वरी	= रस्सी
	चिड़ी		कीड़ी	
	माखी	= मक्खी	तूमड़ी	= कँडिल
	गधी		घोड़ी	
	वेटी		छोरी	
	नानी		मामी	
	ताई		चाची	
—ऊ :	लू		जूं	
	गऊ		दारू	
	भू	= वहू	वाळू	
	दाड़	= अनार	तोरू	= तुरई
—आ:	भूवा	= वुआ	मां	
	काया		आसा	

	छाया		माया	
	मक्का		घीया	
	मैंदा		चा	= चाय
	दया		आत्मा	
व्यंजनांत:	लात्		बेल्	
	छात्		खीर्	
	रात्		मोटर्	
	छाल्		कमीच्	
	दाळ्		आँख्	
	खाज्		छाप्	= अंगूठी
	लाज्		आग्	
	खाद्		बाण्	= आदत
	लड़्	= शृंखला	भींत्	= दीवार
	स्यान्	= शान	जीभ्	
	पून्	= हवा	तरेड़्	= दरार
	चूंच्	= चोंच	मेज्	

३. ४. ४. कारक-चिन्ह : कारकचिन्ह से अभिप्राय उन अव्यय तुल्य शब्दांशों से है जिनको किसी संज्ञा (या,सर्वनाम) के विकारी रूप के परे रखकर वाक्य में उस संज्ञा (या सर्वनाम) पद का अन्य पद के साथ व्याकरणिक सम्बंध प्रकाशित किया जाता है। कारक सम्बंधों की ऊपर चर्चा की जा चुकी है। ये अव्यय तुल्य शब्दांश उन्हें (कारक सम्बंधों को) प्रकट करते हैं; अतः इन्हें कारक-चिन्ह कहना तर्क-संगत जान पड़ता है। प्रश्न है कि इन्हें परसर्ग अथवा अनुसर्ग कहना क्यों अनुपयुक्त है? परसर्ग अथवा अनुसर्ग उन्हें "पोस्ट-पोजीशन" के अनुवाद के आधार पर मिला हुआ नाम है। हिन्दी-व्याकरण-ग्रंथों में उपलब्ध शब्द 'उपसर्ग' वाक्यार्थों में अभिनवता लाने वाली एक अर्थ-प्रक्रिया है, यथा—संस्कृत 'हरति' से 'प्रहरति', 'विहरति', 'संहरति' आदि, जबकि परसर्ग अथवा अनुसर्ग केवल व्याकरणिक मूल्य ही रखते हैं। अतएव 'सर्ग' के आधार पर विरचित यह शब्द उपयुक्त नहीं जान पड़ते।[1] फिर कितने ही अन्य अव्यय शब्दों—भर्, तक्, कारणै, मारै, वास्तै, आगै, पाछै, साथ, बीच्, नीचै, ऊपर्, कनै आदि के लिये भी 'परसर्ग' शब्द का प्रयोग मिलता है। ये अव्यय शब्द अपना स्वतंत्र अर्थ रखते हुये अर्थ-प्रक्रिया में सहायक हैं, जबकि कारक-चिन्ह नैं, सैं ~सूँ, को, मैं, पर् आदि केवल व्याकरणिक मूल्य ही रखते हैं। अतएव दोनों के मध्य भेद करने के लिये पृथक-पृथक नाम देना अधिक उचित होगा।

---

१ बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, पृ० ८१।

छोरी नैं रोटी दे	=	लड़की को रोटी दो।
घोड़ा नैं खरीद्यो	=	घोड़े को खरीदा।
घोड़ां नैं देख्यो	=	घोड़ों को देखा।
सांज् नैं आए	=	शाम का आना।
छोरियां नैं बुला	=	लड़कियों को बुलाओ।

सम्प्रदान के लिए :

छोरां नैं आसीस्	=	लड़कों के लिए आशिष।
छोरा नैं वधाई	=	लड़के के लिये बधाई।
गुरूजी नैं दंडोत्	=	गुरूजी को मेरा प्रणाम।
राम् नैं दुवाई ल्यार् दी	=	राम के लिये दवाई लाकर दी।

सैं~सैं~सूं—

करण तथा अपादान कारक-चिन्ह सैं की महत्ता इसलिए भी है कि इसके आधार पर विभक्त शेखावाटी के क्षेत्रीय दो रूपों का अध्ययन किया गया है। (विषय—प्रवेश, परिशिष्ट—भाषा-मानचित्र) पूर्वी भाग में सैं~सै और पश्चिमी भाग में सूं कारक-चिन्ह करण तथा अपादान कारक-संबंधों की अभिव्यक्ति के लिये व्यवहृत होते हैं; साथ ही तुलनात्मक स्थितियों में भी प्रयुक्त होते हैं, यथा—

पंडत् जी सैं(~सूं) वातां हुई	=	पंडित जी से वातें हुईं।
वो मेरसैं(~सूं) चवोड़ा करै	=	वह मेरे से मजाक करता है।
वो रेल् सैं (~सूं) वेगो आयो	=	वह रेल से शीघ्र ही आया।
गाछ् सैं (~सूं) पातो गिर्यो	=	पेड़ से पत्ता गिरा।
वो म्हार सैं (~सूं) छोटो है	=	वह हमसे छोटा है।
तू वैसैं (~सूं) वडो है	=	तुम उससे वड़े हो।

को, का, की—

शेखावाटी में सम्वन्ध-कारक की अभिव्यक्ति के लिये पुल्लिग एक वचन में 'को', वहुवचन में 'का' तथा स्त्रीलिंग एकवचन और वहुवचन में 'की' कारक-चिन्हों का प्रयोग मिलता है, यथा—

रमेस् को घोडो	=	रमेश का घोड़ा।
रमेस् का घोडा	=	रमेश के घोड़े।
रमेस् की घोडी	=	रमेश की घोड़ी।
रमेस् की घोड़ियाँ	=	रमेश की घोड़ियाँ।

वस्तुतः 'को', विशेषण की प्रकृति, ग्रहण किए हुए है। 'को' के रूपान्तर परभागीय संज्ञा के लिंग-वचन और कारक के साथ विशेषण की भांति होते हैं जिसकी वे विशेषता बताते हैं। इसलिए सम्बन्ध-कारक-चिन्ह केवल -क्- माना जा सकता है। और इसमें -ओ, -आ, -ई आदि प्रत्ययों को वचन और लिंग के द्योतक माना जा सकता है, क्योंकि उनसे वचन और लिंग का बोध होता है। ओका-रान्त विशेषण के सदृश 'को' के रूप परिवर्तित होते रहते हैं, यथा— 'लीलो' (नीला) से 'लीली', 'लीला', वैसे ही 'को' से 'की' और 'का'। मूल और विकारी संज्ञा-रूपों के लिंग का भी प्रभाव पड़ता है—

			एक वचन	बहु वचन
पुं०	-क्-	मूल	(१) को	(२) का
		विकारी	(३) का	....
स्त्री०		मूल	(४) की	....
		विकारी	(४) की	....

इस तरह चार प्रकार के प्रयोग मिलते हैं जिनका वाक्यों द्वारा स्पष्टीकरण किया जा सकता है—

(१) राम को छोरो आयो = राम का लड़का आया।

(२) राम का छोरा आया = राम के लड़के आये।

(३) राम का छोरा नैं ल्यायो = राम के लड़के को लाया।

(४) राम की छोरी आई = राम की लड़की आई।
राम की छोरियां आई = राम की लड़कियां आईं।
राम की छोरी नैं ल्यायो = राम की लड़की को लाया।

-'क्'- सम्बन्ध कारक-चिन्ह का एक अन्य रूप 'कै' मिलता है जो अव्ययवत् व्यवहृत होता है। विशेषतः यह संतान आदि की सूचना देने के लिये तथा परसर्गों यथा—ताँई (लिये), नीचै, तळै, ऊपर, आगै, पीछै (~पाछै), मांय् आदि के पूर्व प्रयुक्त होता है, यथा—

राम् कै तीन् छोरा है = राम के तीन लड़के हैं।
राम् कै एक छोरी है = राम के एक लड़की है।
वैं कै कोई टावर् कोनी = उसके कोई बच्चा नहीं हुआ।
वैं कै बोळा टावर् हुया = उसके बहुत बच्चे हुए।
राम् कै ताँई = राम के लिये।
गाछ् कै नीचै~तळै = पेड़ के नीचे।

गाछ् कै ऊपर्	=	पेड़ के ऊपर।
घर् कै आगै	=	घर के आगे।
घर् कै पाछै	=	घर के पीछे।
घर् कै मांय्	=	घर के भीतर।

मैं, माँ, पै, पर्—

अधिकरण कारक-सम्बन्ध की अभिव्यक्ति के लिये मैं, मां, पै, पर् आदि कारक-चिन्हों का प्रयोग मिलता है।

मैं, मां—ये सामान्यत: स्थान (अन्दर या बाहर) तथा समयावधि की सूचना देते हैं, यथा—

मेरो घर् गाम् मैं है	=	मेरा घर गांव में है।
राम् दुकान् मैं है	=	राम दुकान में है।
वो घर् मैं है	=	वह घर में है।
या किताव् तीन् दिन मैं वँची	=	यह किताव तीन दिन में पढ़ी गई।
च्यार् घंटा मैं	=	चार घंटों में।

पै, पर्—ये सामान्यतः स्थान-सूचक (ऊपर या नीचे) हैं। यदा-कदा सम्प्रदान कारक-सम्बन्ध की अभिव्यंजना भी करते हैं, यथा—

किताव् चूंतरा पै धरी है	=	किताव चबूतरे पर रखी है।
छोरो खाट् पर् लेट्यो है	=	लड़का खाट पर लेटा है।
राम् पै यो काम् मता छोड़्	=	राम के लिये यह काम मत छोड़ो।
मेर पर् तू विस्वास रख्	=	मेरे लिये तुम विश्वास रखो।

इसके अतिरिक्त कभी-कभी करण-सम्बन्ध भी प्रकाशित होता है—

वठै रैणा पै वेरो पट्यो	=	वहाँ रहने पर (से) पता लगा।
राम् पै वेरो पट्यो	=	राम से पता लगा।

साथ ही निश्चित समय की सूचना के लिये भी प्रयुक्त होता है—

गाडी तीन् पै~पर् जावैगी	=	गाड़ी तीन वजे जावेगी।
मोटर् दो वज् कर् दस् मिन्ट पर् छूटैगी।	=	मोटर दो वज कर दस मिनट पर छूटेगी।

४. सर्वनाम-पद-रचना

४. ०. पुनरुक्ति की नीरसता से बचने के लिये ही सर्वनामों का विधान हुआ जान पड़ता है, क्योंकि यह संज्ञाओं के स्थानापन्न होते हैं। अतएव इन्हें एक प्रकार की संज्ञा—शब्दावली मान सकते हैं जैसा कि इनके नाम-विशेष से स्पष्ट हो रहा है। अर्थ के साथ ही सर्वनाम शब्दों का रचनात्मक गठन भी नाम (=संज्ञा) शब्दों से बहुत कुछ समानता रखता है। लिंग, वचन और कारक से सम्बन्धित यदि एक प्रकार के विभक्ति-प्रत्यय संज्ञाओं में कार्यरत हैं, तो दूसरे प्रकार के सर्वनाम शब्दों में। विभक्ति-प्रत्ययों की इन दो कोटियों के आधार पर 'नाम' के दो वर्ग भी अत्यावश्यक हैं—संज्ञा तथा सर्वनाम।[1] पाणिनीय व्याकरण-परम्परा में वह नाम शब्दावली जो 'सर्व' से प्रारंभ होती है, 'सर्वनाम' कहलाई; पर हिन्दी-व्याकरण की दृष्टि से यह पारिभाषिक शब्द दूर जाकर भी बहुलता से प्रयुक्त हो रहा है।[2]

४. १. शेखावाटी के उत्तम एवं मध्यम पुरुष सर्वनाम रूपों में लिंग-भेद नहीं हैं और न इनका विशेषणवत् प्रयोग ही संभव है। अतएव ये संस्कृत-परम्परा के ही उच्छिष्ट हैं। लिंग-भेद है तो केवल संकेतवाचक (अन्य पुरुष) सर्वनाम-रूपों में, जिनका विशेषणवत् प्रयोग भी हो सकता है। ये भी परम्परागत ही हैं। अन्य सर्वनाम-रूपों में भी लिंग-भेद नहीं है, जबकि संस्कृत में था और उनका विशेषणवत् प्रयोग भी किया जा सकता है जो कि परम्परा के अनुकूल है।

४. २. प्रकृति-तत्त्व अर्थात् प्रातिपदिक में विभक्ति-प्रत्ययों की संयोजना की दृष्टि से नाम (संज्ञा) और सर्वनाम की तथा-कथित एकरूपता के बीच अनेक-रूपता का भी स्पष्ट आभास मिलता है। जैसे संज्ञाओं में घोडो, घर, छोरी आदि को आधार बनाकर उनके विभक्ति-प्रत्ययों का निरूपण हो सकता है, वैसे सर्वनाम-रूपों के साथ संभव नहीं। अतएव सर्वनाम-पदों के प्रकृतितत्त्वों (प्रातिपदिकों) का निर्धारण करना और भी कठिन कार्य है। जैसे प्रत्येक सर्वनाम शब्द के रूपों में प्रातिपदिक की अनेक-रूपता मिलती है, वैसे ही (प्रत्येक सर्वनाम शब्द के रूपों में) विभक्ति-प्रत्ययों की विविधता भी, यथा—

---

१ बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, पृ० ९३।
२ वही, पृ० ९३।

४. ४. २. मध्यम पुरुष :

	एक वचन	बहु वचन
१. कर्ता-रूप	तू, तैं	थे
२. कर्म-रूप	तनैं	थानैं
३. अन्य		
(i) विश्लिष्ट	तेर-सैं, मैं, पर्	थार-सैं, मैं, पर्
(ii) संश्लिष्ट	तेरो, तेरलो	थारो, थारलो

यदि पुरुष वाचक सर्वनाम शब्दों के एक वचनीय और बहु वचनीय प्रातिपदिक निर्धारित करें तो इस प्रकार होंगे :

	सर्वनाम	एक वचन	बहु वचन
उ० पु०	कर्ता	म्-	म्ह् -
	कर्म	म-	म्हा-
	अन्य	मे-	म्हा-
म० पु०	कर्ता	त्-	थ्-
	कर्म	त-	था-
	अन्य	ते-	था-

स्पष्ट है कि उत्तम पुरुष एवं मध्यम पुरुष दोनों में वचनानुसार छह-छह प्रातिपदिक प्राप्त होते हैं। यदि उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष की कर्त्ता की प्रकृतियाँ प्रातिपदिक मान ली जायें तो अन्य उनके सदस्य प्रातिपदिक होंगे। विभक्ति-प्रत्यय–र- वस्तुतः सम्बन्धकारक का है जो सम्बन्ध वाची रूपों में लगकर लिंग—वचन के- ओ,-ई- आ विभक्ति-प्रत्ययों को अलग से ग्रहण करता है और तब अपने सम्बंधी से सम्बन्ध प्रदर्शित करता है, अर्थात् सम्बंध-वाची रूप विशेषणवत् विशेष्य से सम्बंध स्थापित करते हैं। अन्य विश्लिष्ट रूपों में अर्थात् करण से लेकर अधिकरण तक के व्याकरणिक अर्थों की अभिव्यक्ति के लिये भी यही विभक्ति-प्रत्यय प्रचलन में है। विश्लिष्ट रूप में कारक चिन्हों को ग्रहण करने के कारण ही उन्हें विश्लिष्ट रूप कहा गया है। प्रश्न हो सकता है कि कर्त्ता और कर्म के रूप विश्लिष्ट क्यों नहीं हैं? उत्तर में कहा जा सकता है कि शेखावाटी में कर्त्ता का कोई कारक-चिन्ह नहीं, कर्म का अवश्य 'न' है, जो वस्तुतः दुविधात्मक है। किन्तु फिर भी, आलेखन में विभक्ति-प्रत्यय की भाँति प्रचलित होने के कारण तथा -र- विभक्ति-प्रत्यय सहित रूपों में जो विश्लिष्टता कारक-चिन्हों के लगने से आभासित होती है, वह इससे न होने के कारण इसे यहाँ विभक्ति–प्रत्यय की भांति ही ग्रहण किया जा सकता है। इसके

समर्थन में एक तथ्य और रखा जा सकता है—यदि आक्षरिक वितरण किया जाये तो वर्णगत इस प्रकार होगा—

मनैं = मन्- नैं
तनैं = तन्- नैं

संबंध कारक के विभक्ति-प्रत्यय-र-का अन्य विश्लिष्ट रूपों में मिलना एक विचारणीय प्रश्न है। ऐसा माना जाता है कि पंजावी के प्रभाव से हिन्दी में कर्म से लेकर अधिकरण तक के व्याकरणिक अर्थ सम्वन्ध-रूप 'मेरे' में कारक-चिन्हों को लेकर अभिव्यक्त होने लगे हैं, यथा–मेरे को, मेरे से, मेरे में, मेरे पर। पंजावी की यही विशेषता शेखावाटी में भी मिल रही है। वस्तुतः इस विशेपता के कारण रूप-रचना की जटिलता बहुत कुछ दूर हो गयी है। इसी सरलता को ध्यान में रखकर ही शेखावाटी में करण से लेकर अधिकरण तक के लिये -र- का प्रचलन जान पड़ता है।

टिप्पणी: (१) वहु वचन रूपों का प्रयोग एक वचन के स्थान पर भी होने लगा है, किन्तु वहुत सीमित मात्रा में। अभी यह प्रवृत्ति विकासोन्मुख है। अतएव यह स्वाभाविक है कि बहु वचन के रूप जव एक वचन में कार्य करेंगे तो उनकी वहु वचनता स्पष्ट करने के लिये विश्लिष्टात्मकता अपनाई जाये। इस प्रकार शेखावाटी में वहु वचन द्योतक कुछ शब्द स्थान पाने लगे हैं, यथा—लोग्, सब जणा, सब्, सगळा आदि। इसका प्रयोग होने पर विभक्ति-प्रत्यय प्रकृति में न जुड़कर इन्हीं शब्दों में जुड़ते हैं। इन समस्त शब्दों में विभक्ति -प्रत्यय 'घर्' के लगेंगे। किन्तु सव जणा और सगळा के स्त्रीलिंग सब जणी और सगळी होने पर कर्ता-रूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता। केवल अन्य (कारकचिन्ह लेनेवाले) रूप ही 'छोरी' की तरह रूप-रचना रखते हैं, यथा—

म्हे सब् जणी आई थी = हम सब जनी आई थीं।
म्हे सगळी गयी थी = हम सब गई थीं।
म्हे सब् जणियाँ पर आर गिर्यो = हम सब लोगों पर आकर गिरा।
म्हे सगळियाँ सैं पूछ्यो गयो = हम सब से पूछा गया।

(२) सम्बन्ध-रूप मेरो, म्हारो, तेरो और थारो के अतिरिक्त मेरलो, म्हारलो, तेरलो, थारलो आदि में विभक्ति-प्रत्यय -र- के साथ ही अन्य सम्बन्ध-वाची -ल्- विभक्ति-प्रत्यय की प्राप्ति को दुहरे संबंधवाची विभक्ति-प्रत्यय के प्रयोग के रूप में ही माना जा सकता है। यथा—

मेरलो छोरो = मेरा लड़का।
मेरली छोरी = मेरी लड़की।
मेरला भाई = मेरे भाई।

तेरलो घोड़ो = तेरा घोड़ा।

तेरली घोड़ी = तेरी घोड़ी।

तेरला घोड़ा = तेरे घोड़े।

(३) पुरुष वाचक सर्वनाम अन्य सर्वनामों की भाँति सम्बन्ध-अर्थ की अभिव्यक्ति के लिये कारक-चिह्न—को, का, की ग्रहण न करके केवल विभक्ति-प्रत्यय -र- या -र+ल-से ही काम चलाते हैं : यथा—

मेरो भाई = मेरा भाई।

म्हारो भाई = हमारा भाई।

तेरो भाई = तेरा भाई।

थारो भाई = तुम्हारा भाई।

मेरलो भाई = मेरा भाई।

म्हारलो भाई = हमारा भाई।

तेरलो भाई = तेरा भाई।

थारलो भाई = तुम्हारा भाई।

विविध रूपों के अन्तर्गत परिगणित पुरुष वाचक, सम्बन्ध एवं सह-सम्बन्ध-वाचक तथा प्रश्न वाचक सर्वनाम रूपों के विभक्ति-प्रत्ययों में प्रायः एकरूपता पायी जाती है। जो अन्तर है भी, वह नगण्य है। इस तथ्य का निरूपण निम्न तालिका में अलग अलग शेखावाटी, बुन्देली, ब्रज और हिन्दी के रूपों द्वारा किया गया है :

कर्ता-कारक	ए० व०	यो	वो, वा	जो, जिको	सो, तिको	कुण
		यौ	वौ	जौन	सो, तौन	को
		यौ, जु	वौ, हु	जौन	सो, तौन	को
		यह	वह	जो	÷	कौन
	ब० व०	ये	वे, वै	जे, जिका	बे, तिका	कुण
		ये	वे	जौन	तौन	को
		ये	वे	जौन	तौन	को
		ये	वे	जो	÷	कौन
अन्य-कारक	ए० व०	ई, ए	ऊ, वीं, वे	जीं, जे	तीं, तै	कीं, कै
		इ	उ	जी	ती	की
		या	वा	जा	ता	का
		इस	उस	जिस	÷	किस

ब० व०	अण्, अणा	उण्, उणा	जण्, जणा	तण्, तणा	कण्, कणा
	इन	उन	जिन	तिन	किन
	इनि	उनि	जिनि	तिनि	किनि
	इन	उन	जिन	+	किन्

४. ५. संकेत वाचक (निकटवर्ती एवं दूरवर्ती) :

ए० व०	कर्त्ता-रूप	पुं०	यो,	वो, बो
		स्त्री०	या,	वा, बा
ब० व०	कर्त्ता-रूप		यै,	वै, वै
ए० व०	अन्य-रूप		एं, ई	वैं वीं
ब० व०	अन्य-रूप		अण,	उण्, उणा
			अणा	विण्, विणा

टिप्पणी : (१) एक वचन कर्त्ता-रूपों में पुल्लिग-स्त्रीलिंग के भिन्न रूप उल्लेखनीय हैं।

(२) सूं-क्षेत्र में एक वचन अन्य-रूप ईं तथा वीं उल्लेखनीय हैं।

(३) एक वचन एवं बहु वचन अन्य-रूप संज्ञाओं की तरह कारक-चिन्हों की सहायता से कर्म से लेकर अधिकरण तक के अर्थों की अभिव्यक्ति करते हैं।

४. ६. सम्बन्ध एवं सह-सम्बन्ध-वाचक :

ए० व०	कर्त्ता-रूप	जो, जिको	सो, तिको
	अन्य-रूप	जैं, जीं	तैं, तीं
ब० व०	कर्त्ता-रूप	जो—जो	सो–सो
		जिको-जिको	तिको-तिको
	अन्य-रूप	जण्, जणा	तण्, तणा

टिप्पणी : (१) सूं-क्षेत्र में एक वचनीय अन्य रूप जीं तथा तीं उल्लेखनीय हैं।

(२) प्रायः सह-सम्बन्धवाची रूप लोक-गीतों एवं कहावतों और कथा-वाचकों में ही अधिक चलते हैं। उनका स्थान दूरवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम रूप ले रहे हैं, यथा—

जो सोवैगो सो खोवैगो। (कहावत)
ज़ो क़रैगो सो भरैगो। (कहावत)

जो पढैगो वो सुख् पावैगो।
जो खेलैगो वो खराव् होवैगो।

(३) अन्य-रूप कारक-चिन्ह ग्राही हैं।

४. ७. प्रश्नवाचक :

ए० व०	कर्त्ता-रूप	कुण् (कौन)	—व्यक्तिवाची
		के (कौन)	—वस्तुवाची
	अन्य-रूप	कैं~कीं	—व्यक्तिवाची
		क्यां	—वस्तुवाची
ब० व०	कर्त्ता-रूप	कुण्-कुण्	—व्यक्तिवाची
		के-के	—वस्तुवाची
	अन्य-रूप	कण्-कण् कणा-कणा	—व्यक्तिवाची
		क्यां-क्यां	—वस्तुवाची

टिप्पणी : (१) सूं-क्षेत्र में एक वचनीय अन्य-रूप 'कीं' उल्लेखनीय है।

(२) प्राणिवाची 'कुण्' के अतिरिक्त अप्राणिवाची 'के' का प्रचलन उल्लेखनीय है, साथ ही कर्ता के अतिरिक्त अन्य रूप भी द्रष्टव्य हैं।

(३) अन्य-रूप कारकचिन्ह ग्राही हैं।

८. अनिश्चयवाचक :

ए० व०	कर्ता-रूप	कोई
	अन्य-रूप	कोई
व० व०	कर्त्ता-रूप	कोई- कोई
	अन्य-रूप	कोई- कोई

टिप्पणी : (१) प्राणिवाचक 'कोई' के अतिरिक्त शेखावाटी में अप्राणिवाचक 'किमि' सर्वनाम भी है जो अनिश्चयात्मक अर्थ देता है। यथा-

किमि चाये सो मंगा लिये = कुछ चाहिए तो मंगा लेना।
घर् मैं किमि कोन्या = घर में कुछ नहीं है।

(२) वस्तुत : अनिश्चयवाचक सर्वनाम शब्दों के मूल में प्रश्नवाचक सर्वनाम शब्द ही हैं। संस्कृत में प्रश्नवाचक सर्वनाम 'क:' में 'अपि' के योग से 'कोऽपि' रूप बनता है जो अनिश्चयवाचक है और इसी 'कोऽपि' से शेखावाटी 'कोई' विकसित

हुआ है जिसका मूलार्थ है 'कौन है, ज्ञात नहीं' अर्थात् 'कोई' । इसी भाँति प्रश्नवाचक नपुंसकलिंग सर्वनाम 'किम्' में 'अपि' के योग से अनिश्चयार्थक 'किमपि' बनता है जिससे शेखावाटी के 'किमि' सर्वनाम रूप का विकास हुआ जान पड़ता है । इसका मूलार्थ है 'क्या है, विदित नहीं' अर्थात् 'किमि' (कुछ) ।

४. ९. विविध :

(१) 'आपाँ' शब्द श्रोतृ-सापेक्ष है अर्थात् वक्ता एवं श्रोता दोनों को अपने में समेटे रखता है, यथा--

आपाँ बजार् चालाँगा = हम-तुम बाजार चलेंगे ।
आपाँ नैं कुण् पूछै है ? = हम-तुमको कौन पूछता है ?

(२) 'आप्' सर्वनाम-रूप निजत्व का बोध कराता है, यथा—

वो आप् बोल्यो = वह स्वयं बोला ।
मैं आप् करूँगो = मैं स्वयं करूँगा ।

(३) आपै-आप्, अपणै-आप् आदि सामासिक पद 'स्वयं एव' का अर्थ रखते हैं ।

(४) ये विशेषण-रूप 'अपणो' 'आपणो' (आप + ण + अन्यान्य पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग विभक्ति-प्रत्ययों सहित) से ऐतिहासिक सम्बन्ध रख रहे हैं । इसी कोटि के दो सर्वनाम तथा विशेषण शब्द 'आगलो' और 'फलाणो' भी हैं जो हिन्दी में 'अमुक', 'फलाँ' के अर्थी हैं ।

सूक्ष्मार्थों को प्रकट करने के लिये उपर्युक्त सर्वनामों की पुनरुक्ति अथवा दो-दो सर्वनामों के योग की प्रवृत्ति बढ़ रही है, यथा—

जो कोई = कोई भी ।
जो किमि = जो कुछ ।
कोई न कोई = कोई न कोई ।

४. १०. सार्वनामिक विशेषण :

उपर्युक्त सर्वनाम-रूपों की प्रकृतियों को आधार बना कर कुछ विशेषण तथा अव्यय शब्दों की संरचना हुई है (देखिये, पृ० ९५) रचनात्मक प्रत्यय प्रधानतः -त्-, -तण्, -स्-हैं । साथ ही कुछ संज्ञा शब्द (दिनाँ = दिन, तराँ, तरियाँ = तरह) प्रत्यय-रूप धारण करते जा रहे हैं । संलग्न चार्ट में इन सभी को व्यवस्थित किया गया है । कुछ उल्लेखनीय बातें निम्न हैं :

(१) –ओ में अन्त होने वाले विशेषण 'काळो' की तरह रूप-रचना रखते हैं। (देखिये, विशेषण पद-रचना)।

(२) तह-सम्बंधवाचक सर्वनाम पर आधारित रूपों का प्रयोग विरल होता जा रहा है। उदाहरण—

इत्तो, इतणो	=	इतना
उत्तो, उतणो	=	उतना
इसो	=	ऐसा
उसो	=	वैसा
अइयाँ	=	ऐसे
उइयाँ, वइयाँ	=	वैसे
इतराँ, इतरियाँ	=	इस तरह
इ दिनाँ	=	आजकल
इबी-	=	अभी
अठै, उरै	=	यहाँ
उठै, वठै	=	वहाँ
अठिनैं, उरिनैं	=	इधर
उठिनैं, वठिनैं	=	उधर
जै	=	जितने
कै	=	कितने

प्रकृति		विशेषण			अव्यय				
आधार	रूपांतर	परिमाण	गुण	संख्या	रीति	दिशा	स्थान	काल १	काल २
यो	इ–∼अ–	इ–त्त्–ओ इ–तण्–ओ	इ–स्–ओ	+	अ–इयाँ	अ–ठै-नैं	अ–ठै	इ–दियाँ अ–दिनाँ	इ–व्
वो, बो	उ–∼व– ∼ब–	उ–त्त्–ओ उ–तण्–ओ	उ–स्–ओ	+	उ–इयाँ ब–इयाँ	उ–ठै–नैं ब–ठै–नैं	उ–ठै ब–ठै	उ–दिनाँ व–दिनाँ	+
जो	ज–∼जि–	जि–त्त्–ओ जि–तण्–ओ	जि–स्–ओ	ज्–ऐ	ज–इयाँ	ज–ठै-नैं	ज–ठै	ज–दिनाँ	ज–द्
सो	स–∼ति–	ति–त्त्–ओ ति–तण–ओ	ति–स्–ओ	त्–ऐ	त–इयाँ	+	+	त–दिनाँ	+
कुण्, के	क–∼कि–	कि–त्त्–ओ कि–तण्–ओ	कि–स्–ओ	क्–ऐ	क–इयाँ	क–ठै–नैं	क–ठै	क–दिनाँ	क–द्

५. विशेषण पद-रचना

५. ०. विशेषण पद वाक्य में अपने विशेष्य की विशेषता प्रकट करता हुआ दिखाई पड़ता है। वाक्य में विशेष्य पद संज्ञा भी हो सकता है और सर्वनाम भी। दूसरे शब्दों में विशेषण पदों का वाक्यगत कार्य संज्ञा अथवा सर्वनाम पदों की विशेषता प्रकट करना है। अतएव अर्थ की दृष्टि से विशेषण शब्दावली गुण, परिमाण, संकेत, संख्यादि भेद-विभेदों में वर्गीकृत की जाती है। किन्तु यदि पद-रचनात्मक दृष्टि से विचार किया जाये तो स्पष्ट होगा कि लिंग-वचन और कारक-संबंधों को प्रकट करने वाले विभक्ति-प्रत्ययों की संयोजना में ये संज्ञा तथा सर्वनाम शब्दों से भिन्न नहीं। इसीलिये संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दावली को 'नाम' के अन्तर्गत परिगणित किया गया है। रूप-रचना की दृष्टि से शेखावाटी विशेषण शब्दावली संज्ञा शब्दों के और भी निकट है और संभवतः इसीलिये वह गुणवाचक संज्ञा शब्दों में परिगणित भी हो जाती है। पद-रचना की दृष्टि से शेखावाटी विशेषण शब्दावली के दो रचनात्मक वर्ग (Paradigmatic Classes) बनते हैं—

१- ओकारान्त विशेषण शब्द.

२- अन्य (-आ,- ई,- ऊ, व्यंजनान्त)

५. १. ओकारान्त विशेषण शब्दावली अपने विशेष्य के लिंग-वचन-कारक के अनुसार विभक्ति-प्रत्यय को ग्रहण करती है। अतएव इसकी रूप-रचना संज्ञा-शब्द 'छोरो' के सदृश होगी, जिसे निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है—

काळो (=काला)

	एक वचन	बहु वचन
मूल	- ओ (काळो)	- आ (काळा)
विकारी	- आ (काळा)	- आँ (काळाँ)

उदाहरण :
काळो घोड़ो = काला घोड़ा (पुं० मूल एक वचन)
काळी घोडी = काली घोड़ी (स्त्री० मूल एक वचन)
काळा घोडा = काले घोड़े (पुं० मूल बहु वचन)
काळा घोडा नैं = काले घोड़े को (पुं० वि० एक वचन)
काळा घोडाँ नैं = काले घोड़ों को (पुं० वि० बहु वचन)

विकारी बहु वचन अर्थात् -आँ सहित रूप 'काळाँ' का प्रयोग भाषा में तभी मिलता है, जबकि विशेषण का संज्ञावत् प्रयोग होता है, यथा-काळाँ मैं सैं एक ग ले = काले (कलूटों) में से एक उठा लो। इस कोटि की (ओकारान्त) शब्दावली

भाषा में अनंत है, साथ ही विभक्त्यात्मकता के कारण भाषा के व्याकरणिक गठन में महत्वपूर्ण भाग लेती है ।

५. २. ओकारान्त के अतिरिक्त अन्य (-आ,-ई,-ऊ तथा व्यंजनान्त) सारी विशेषण शब्दावली अपने विशेष्य के लिंग-वचन-कारक से अप्रभावित रहती है। अप्रभावित इस अर्थ में कि उसमें कोई ध्वन्यात्मक परिवर्तन लक्षित नहीं होता । इस कोटि की शब्दावली वाक्य-विधा अर्थात् विशेष्य एवं क्रिया-पद के द्वारा ही अपने लिंग-वचन-कारक को स्पष्ट करती है। ऐसे शब्दों की रूप-रचना संज्ञा शब्द 'घर्' के सदृश होगी । विकारी बहु वचन-रूप की दृष्टि से अन्तर अवश्य दिखायी देता है अर्थात् 'घर्' शब्द का विकारी बहु वचन रूप 'घराँ'-आँ विभक्ति-प्रत्यय के संयोग से बनता है, जबकि उपर्युक्त कोटि के विशेषण शब्द साधारणतः कोई भी प्रत्यय नहीं लेते। किन्तु संज्ञावत् प्रयोगों में इनके भी विकारी बहु वचन-रूप -आँ सहित मिलते हैं, यथा—लालाँ मैं सैं एक् घोडो छाँट् ले = लाल घोड़ों में से एक घोड़ा चुन लो।

अस्तु स्पष्ट है कि रूप-रचना की दृष्टि से ओकारान्त एवं अन्य वर्गीय विशेषण शब्दावली क्रमशः 'छोरो' और 'घर्' संज्ञा शब्दों के समान ही मूल एवं विकारी रूपों (कारकों) में स्वीकार की जा सकती है ।

५.३. शेखावाटी की समस्त विशेषण शब्दावली को रूप-रचना तथा अर्थ की दृष्टि से हम निम्न प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

५. ३. १. गुण-बोधक :

(१) ओकारान्त—यथा: सोणो (सुन्दर), काणो (काना), आंदो (अन्धा), बापड़ो (बेचारा), सुहाँखो (सनेत्र), लड़ोकड़ो (झगड़ालू), जलोकड़ो (ईर्ष्यालु), कंगलो (कंगाल), मंगतो (भिखारी), खोटो (खोटा), स्याणो (चतुर), तिसायो (प्यासा), लैंगदो (लूमड़), निचल्लो (शान्त), बावळो (पागल), सूगलो (गन्दा), खोड़लो (नालायक), सूदो~सीदो (सीधा), सैंदो (मुँहलगा), चोखो (अच्छा), फोसरो (कोमल), कड़ो (सख्त), कल्डो (कठोर), परायो (पराया), टेडो (टेढ़ा), काळो (काला), पीळो, हर्यो (हरा), लीलो (नीला), धोळो (धवल), इसो (ऐसा), उसो (वैसा), किसो (कैसा), जिसो (जैसा) आदि।

(२) अन्य—यथा: घटिया, बढ़िया, दूदिया, मोतिया, बेजा, लफाड़ी, गजबी, मूंजी (कन्जूस), ठाली (बेकार), सागी (सगा), बधाऊ (बकवादी), खाऊ (बेईमान), उड़ाऊ (खर्चीला), न्याऊ (घटिया), ठीक्, ऊत्, कावळ् (बुरा), साचळ् (भला), हैंड (बेकार), बैण्ड

(बकवादी), भागवान् (धनी), कुमातर् (शैतान), नुमातर् (नमकहलाल), लाल् इत्यादि।

५. ३. २. परिमाण-बोधक :

(१) ओकारांत – यथा: थोड़ो, घणो (ज्यादा), सगळो (सारा), पूरो, आखो (पूरा) अधूरो, बोळो (ज्यादा), इतणो~इत्तो, उतणो~उत्तो, कितणो~कित्तो, जितणो~जित्तो इत्यादि।

(२) अन्य—यथा: ज्यादा, जरा, कमती, बेसी, सोक्यूं (सब-कुछ), भोत् (बहुत), साबत् (पूरा), तिनेक् (जरा) इत्यादि।

५. ३. ३. संख्या-बोधक :

(i) गणनात्मक :

(१) ओकारांत—उपर्युक्त ओकारांत शब्दावली की भाँति विशेष्य के लिंग-वचन-कारक से प्रभावित नहीं। यथा—दो, नो, सो आदि।

(२) अन्य—यथा—एक्, तीन्, च्यार्, पाँच्, छै, ग्यारा, बारा, तेरा, गुणासी, अस्सी, इक्यासी, नव्वै, इक्याणवै, बाणवै आदि।

(ii) क्रमात्मक :

(१) ओकारान्त—यथा: पैलो, दूसरो, तीसरो, चौथो, पाँचवों, छठो~छठ्वों, सात्वों, आठ्वों, नवों, दसवों, ग्यार्वों आदि। इसके अतिरिक्त खण्ड-क्रम के लिये प्रचलित शब्द, यथा—आधो, सवायो, डेडो (ड्योढ़ा) आदि।

(२) अन्य—तिथि-गणना की शब्दावली, यथा : एकै, दूज्, तीज्, चोथ्, पाँचै, छठ्, सातै, आठै, नोमी, दसै, ग्यारस्, बारस्, तेरस्, चौदस्, पुन्यूं~पुण्यूं, मावस् आदि। इसके अतिरिक्त खण्ड-क्रम के लिये प्रचलित शब्द, यथा—तिहाई, चौथयाई~चौथाई, पूण् (पौना), ढाई, इसके बाद साढ़े तीन, साढे चार आदि।

(iii) गुणनात्मक :

(१) ओकारान्त—यथा: दूणो~दुगणो, तीणो~तिगणो, चोणो~चोगणो आदि।

(२) अन्य, यथा—

तीन् एकी~एकन्	=	तीन्
तीन् दूणी	=	छै
तीन् तियां	=	नो

तीन् चौका~चोकै	=	बारा
तीन् पंजा~पंजै	=	पन्द्रा
तीन् छक्का~छक्कै	=	अठारा
तीन् सातँ~सत्तै	=	इक्कीस्
तीन् आठै~अट्ठै	=	चौबीस्
तीन् नवाँ~नमै	=	सत्ताइस्
तीन् धाम्~दहाई	=	तीस्

साथ ही,

दो पाव्~पावै	=	आधो
दो अद्धै~आदै	=	एक्
दो पूण्~पूणै	=	डेड्
दो सवाया	=	ढाई
दो डेडै~डेडा	=	तीन्
दो ढाई	=	पाँच्
दो हूँठै	=	सात्
दो ढोंचै	=	नौ
दो पूँचै	=	ग्यारा

(iv) समूहात्मक :

(१) ओकारांत-यथा- जोड़ो, पंजो~पंज्यो, सैंकड़ो आदि ।

(२) अन्य-यथा : कोड़ी, जोड़ी, गुरुस, दर्जन, हजार्, लाख् आदि । इसके अतिरिक्त गणनात्मक संख्या शब्दों में '-ऊँ, -यूँ' के योग से भी समूहात्मक शब्द बनते हैं, जैसे—दोनूँ~दोन्यूँ, तीनूँ~तीन्यूँ, च्याहूँ, पाँचूँ~पांच्यूँ, छऊँ, सातूँ~सात्यूँ, आठूँ~आठ्यूँ, नोऊँ, दसूँ आदि ।

५. ३. ४. क्रियामूलक :—शेखावाटी में 'धातु' में '-तो, -ो -' और-यो प्रत्ययों के योग से क्रियामूलक विशेषणों का निर्माण होता है ... प्रत्ययों के अतिरिक्त एक चौथा प्रत्यय -ड़ो भी है जो भूतकालिक कृदन्त रूपों में लग कर क्रियामूलक विशेषणों की रचना करता है। इस प्रकार इन चारों प्रत्ययों के योग से बनने वाले क्रियामूलक विशेषण शब्द केवल ओकारान्त वर्ग में ही परिगणित होंगे, यथा—

वहतो—वहतो नाळो	=	वहता नाला
वहता नाळा	=	वहते नाले

बहता नाळा सूं = बहते नाले से
बहती नाळी = बहती नाली
रोतो—रोतो छोरो = रोता लड़का
रोता छोरा = रोते लड़के
रोता छोरा नैं = रोते लड़के को
रोती छोरी = रोती लड़की
खोयो—खोयो पीसो = खोया पैसा
खोया पीसा = खोये पैसे
खोया पीसा नैं = खोये पैसे को
खोई पाई = खोयी पाई

खायोड़ो—
खायोड़ो केळो = खाया हुआ केला
खायोड़ा केळा = खाये हुये केले
खायोड़ा केळा नैं = खाये हुये केले को
खायोड़ी दाड़ू = खायी हुई अनार

इस प्रकार उपर्युक्त प्रत्ययों के योग से बने हुए कुछ कृदन्तीय शब्द यहाँ उदाहरण-स्वरूप परिगणित किये जा सकते हैं, यथा—जातो, आतो, खातो, पीतो, सोतो, रोतो, सोणो (सोने वाला), खोणो (खोने वाला), धोयो (धोया हुआ), दियो (दिया हुआ), भेज्यो (भेजा हुआ), रोप्यो (रोपा हुआ), देख्यो (देखा हुआ), भाग्योड़ो (भागा हुआ), आयोड़ो (आया हुआ), देख्योड़ो (देखा हुआ), गयोड़ो (गया हुआ), लियोड़ो (लिया हुआ), दियोड़ो (दिया हुआ) आदि ।

५. अव्यय

६.०.अव्यय Fossalised case-suffixes कहे गये हैं अर्थात् जिनके कारक अर्थ समाप्त हो गये हैं ऐसे रूढ़ पद अव्यय हैं। हिन्दी में प्रचलित संस्कृत के सर्वतः, पूर्णतः, क्षिप्रम्, चिरेण आदि पद ऐसे ही रूढ़ नाम-पद हैं, जो वस्तुतः हैं तो कारक-विभक्ति-युक्त पद ही, पर इन्होंने अपनी विभक्त्यात्मकता समाप्त कर एकरूपता अपना ली है। इसीलिए अविभक्तक (Indeclinables) नाम धारण कर रहे हैं । अपनी इस अविभक्त्यात्मकता के कारण ये व्याकरणिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिये वाक्य में प्रयुक्त अन्य पदों का आश्रय ढूंढ़ते हैं इसीलिए तो आधुनिक भाषातत्त्ववेत्ताओं ने इन शब्दों को वाक्य-विश्लेषण में परिगणित शब्द-वर्गों-- (Syntactical classes) के अन्तर्गत रखा है। पाणिनि की "सदृशं त्रिषु लिंगेषु, सर्वासु च विभक्तिषु वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्" ॥[1] अव्यय की परिभाषा भी इसी अर्थ की परिचायक जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त ऐसी भी शब्दावली कम नहीं है जो भाषा-विकास के इतर स्रोतों से आई है, यथा—पद-सामासिकता (इदं+स्थानं – अठै), रचनात्मक वर्ग (Paradigmatic class) से छिन्न होना (यथा सं० भृ = भर) आदि। कुछ भी हो, विभक्ति-प्रत्ययों का अभाव होने के कारण ये अपना एक वर्ग बना रहे हैं जिसे अर्थ की दृष्टि से निम्न उपवर्गों में रखकर देखा जा सकता है—

१. क्रिया-विशेषण
२. समुच्चय-बोधक
३. विस्मयादि बोधक
४. सकारात्मक एवं नकारात्मक
५. परसर्ग
६. बलात्मक शब्दांश (निपात)

६. १. क्रिया–विशेषण :

६. १. ०. इस उपवर्ग की शब्दावली क्रिया की विशेषताओं पर प्रकाश डालती है। अर्थ की दृष्टि से क्रिया-विशेषण निम्न पाँच प्रभेदों में रखे जा सकते हैं—

(१) काल वाचक
(२) स्थान वाचक
(३) रीति वाचक
(४) दिशा वाचक
(५) परिमाण वाचक

---

1 अष्टाध्यायी – १/१/३७,

६. १. १. काल वाचक : निम्नलिखित काल वाचक क्रिया-विशेषण शेखावाटी में अधिक प्रयुक्त होते हैं—

अब् = अब
आगै = आगे
जद् = जब
कद् = कब
तद्, तो = तब
फिर्, फेर = पुनः
पाछै, पीछै = पीछे
आज् = आज
रोजिना, रोज्, सदा = हमेशा
काल् = कल (भूत)
तड़कै = कल (भविष्य)
परस्यूं = परसों
परलै-दिन् = नरसों
आज्-काल् = आजकल
अगाऊ = अग्रिम
सुदियाँ = जल्दी
कदे-कदे, कदे-काऊ = कभी-कभी

६. १. २. स्थान वाचक : शेखावाटी बोली में निम्न स्थान वाचक क्रिया-विशेषण का प्रयोग अधिक होता है—

बाहर्, बार्, बारनैं = बाहर
भीतर्, माँय्, माँयनैं = भीतर
पाछै, गैल्, लैर् = पीछे
आगै = आगे
आगै-पाछै = आगे-पीछे
आगै-आगै = आगे-आगे
पाछै-पाछै = पीछे-पीछे
गैल्-गैल् = पीछे-पीछे
लैर्-लैर् = पीछे-पीछे
ऊपर् = ऊपर
तळै, नीचै = नीचे

कनै, पास्	=	समीप
वठै	=	यहाँ
कठै	=	कहाँ
उठै, वठै	=	वहाँ
जठै	=	जहाँ

६. १. ३. रीति वाचक : शेखावाटी में प्राप्त रीति वाचक क्रिया-विशेषण निम्न हैं—

अइयां	=	ऐसे
वइया, उइया	=	वैसे
जइयां	=	जैसे
कइयां	=	कैसे
धीरै, होळे	=	धीरे
हौळै, होळै	=	धीरे-धीरे
धीरा, धीरां	=	धीरे-धीरे
गुप्-चुप्	=	चुपके-चुपके
चुपकै–चुपकै	=	चुपके-चुपके
चान्चक्	=	अचानक
तरां, तरिया	=	तरह
सीत्-मींत्	=	व्यर्थ
मानो, जाणो	=	मानो
नूं, यूं	=	इस प्रकार
कुलवा-कुलवी	=	लुका-छिपी

६. १. ४. दिशावाचक : कुछ स्थानवाचक क्रिया-विशेषण कारक-चिन्हों या परसर्ग 'कानी' (तरफ) के योग से दिशावाचक क्रिया-विशेषण बन जाते हैं —

ईठैनैं	=	इधर
ईरनैं	=	इधर
उठिनैं	=	उधर
वठिनैं	=	उधर
जठिनैं	=	जिधर
कठिनैं	=	किधर
उर्लो-कानी	=	इस तरफ
पर्लो-कानी	=	उस तरफ
ईलंग	=	इधर

उलंग	=	उधर
कीलंग	=	किधर
जीलंग	=	जिधर

६. १. ५. परिमाणवाचक : शेखावाटी में निम्न परिमाणवाचक क्रिया-विशेषण प्रमुखता रखते हैं—

इतणो, इत्तो	=	इतना
जितणो, जित्तो	=	जितना
उतणो, उत्तो	=	उतना
कितणो, कित्तो	=	कितना
ज्यादा, बेसी	=	ज्यादा
जरा,	=	थोड़ा
किमि, किऊँ	=	कुछ
ओर्	=	और
सगळो, आखो	=	पूरा, सारा

६. २. समुच्चयबोधक :

६. २. ०. ऐसे शब्द जो क्रिया की विशेषता तो नहीं बताते किन्तु एक पद या वाक्य का सम्बन्ध दूसरे पद या वाक्य से अवश्य जोड़ते हैं। इस प्रकार के शब्दों को निम्न प्रभेदों में रखा जा सकता है—

६. २. १. संयोजक (Copulative)

अर्	=	और, 'म्हे अर् वो आया था।'
की, कै	=	कि, 'वा बोली की~कै मैं तो कोन्या जाऊँ।'
जो, जिको	=	जो, 'वो छोरो मिल्यो थो जो काल् पिट्यो थो।'
मानो	=	मानो, 'छोरो अइयाँ सोयो मानो बेहोस् थो।'
जाणो	=	जानो, 'वो बैं नैं अइयाँ पीट्यो जाणो दुस्मन्' हो।

६. २. २. विभाजक : (Alternative)

या .... या	—	'या इस्कूल जा या घर् बैठ्'
के .... के	—	'के बेटो के बेटी दोनूं माँ-बाप् नैं प्यारा होवै'
चाये .... चाये	—	'चाये तू चाल् चाये वो'
न .... न	—	'न तेर कनै आ पायो न उठै जा पायो।'

६. २. ३. प्रतिषेधक : (Adversative)

पर्~पण् — 'मैं अठै आयो पर्~पण् तू मिल्यो कोन्या'

६. २. ४. संकेतवाचक : (Demonstrative)

जिको .... तो बी —'जिको वो आयो बी तो बी मैं मिल् कोनी सक्यो'
जद् .... तो —'जद् मैं जाऊं तो तू चालिये'
जै .... तो —'जैं तू जावैगो तो मैं बी जाऊँगो'

६. २. ५. कारण-वाचक : (Causatives)

क्युंकी, क्यूंक् —'वो कइयाँ जातो क्युंकी बेमार् थो' ।
सो —'मैं गयो कोन्या सो काम् हो कोनी पायो' ।
कारणै, कारण् —'तेरै कारणै मैं जा ई कोनी पायो' ।

६. ३. विस्मयादि बोधक :

विस्मयादि बोधक अव्यय हर्ष, दुख, आश्चर्य, क्रोध, घृणा आदि भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। इन विस्मयादि बोधक अव्यय शब्दों का अर्थ आवाज की सुर एवं प्रकटीकरण के ढंग पर निर्भर करता है। कभी-कभी भाषा-भाषी ऐसी ध्वनियों का भी उच्चारण करते हैं जिन्हें लिपि–चिन्हों से अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। यदा-कदा एक पूरी की पूरी कहावत (Phrase) या एक वाक्य का भी विस्मयादि बोधक अव्यय के रूप में प्रयोग हो जाता है। शेखावाटी में अधिकांश विस्मयादि बोधक अव्यय स्वतंत्र शब्दों के रूप में प्रयुक्त होते हैं। यद्यपि कुछ सम्बोधन-कारक में संज्ञा के पूर्व व्यवहृत होते हैं; यथा– हे भगवान ! ए छोरी ! ओ छोरा ! आदि।

निम्नलिखित विस्मयादि बोधक अव्ययों का अधिक प्रयोग होता है—

१. अरै ! है ! ओहो ! के ! —आश्चर्यकबोधक
२. हाय् ! आह् ! हो ! —शोकबोधक
३. वाह् ! स्याबास् !! —उत्साहबोधक
४. छिः ! थू ! धिक्कार ! —घृणाबोधक
५. वाह् ! आहा ! ओहो ! —हर्षबोधक
६. जी ! हे ! ए ! अरे ! ओ ! —सम्बोधक

६. ४. सकारात्मक एवं नकारात्मक (Affirmatives & Negatives)

हाँ, हूँ, हम्बै, जीं —सकारात्मक उत्तर (सम्मति ज्ञापक)
हामी, हामळ् —हाँ, स्वीकार–केवल वाक्य में स्वीकारात्मक हाँ के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—'बो हामी~हामळ् भर ली है'=उसने हाँ कर लिया है।

नइँ, ना, ऊँ .. हूँ, अँ-हँ—नकारात्मक उत्तर (असम्मति ज्ञापक)

मता, ना —निषेधात्मक, वाक्य में प्रयुक्त, जैसे–'उठै ना ~ मता जाये' = वहां मत जाना ।

कोन्या, कोनी —नकारात्मक, वाक्य के मध्य में प्रयोग, जैसे–'तू मेरो काम् कोन्या ~ कोनी कर्यो' = तुमने मेरा काम नहीं किया ।

६. ५. परसर्ग

प्राकृत-कालीन स्वतंत्र शब्द (देखिए, शब्द-रचना-विधान) जब इतने अधिक रूपान्तरित हो गये कि उनमें केवल कारक-सम्बन्धों को ही स्पष्ट करने की क्षमता रह गई तो वे कारक-चिन्ह मात्र ही रह गये जिन पर विचार "संज्ञा-पद-रचना" में किया जा चुका है । जो पदों के अन्तर्गत अपना स्वतंत्र अस्तित्व अब भी रखते हैं किन्तु फिर भी पदों के बीच भिन्न-भिन्न सम्बन्धों को प्रकट करने के लिये प्रयुक्त होते हैं, उन्हें यहाँ परसर्ग—रूप में ग्रहण किया गया है—

सागै–'साथ' अर्थ की अभिव्यक्ति के लिये : मेरै सागै (मेरे साथ), राम् कै सागै (राम के साथ), बैंकै सागै (उसके साथ) ।

मारै–'कारण' अर्थ की अभिव्यक्ति के लिये : बैंकै मारै (उसके कारण), राम् कै मारै (राम के कारण) ।

बिना–'रहित' अर्थ की अभिव्यक्ति के लिये : तेरै बिना (तुम्हारे बिना), बैं कै बिना (उसके बिना), छोरा कै बिना (लड़के के बिना) ।

सिवा ~ सिवाय्—'अतिरिक्त' अर्थ की अभिव्यक्ति के लिये : मेरै सिवा, राम् कै सिवा (राम के अतिरिक्त) ।

इसके अतिरिक्त 'पैल्यां' और 'पाछै', 'पास' और 'दूर', 'भीतर' और 'बाहर', 'ऊपर' और 'नीचै' आदि अर्थों की अभिव्यक्ति करने वाले शब्द भी परसर्ग कोटि के हैं ।

उपर्युक्त परसर्ग शब्द कारक-चिन्हों के साथ प्रयुक्त होते हैं किन्तु कितने ऐसे भी परसर्ग हैं जो बिना कारक-चिन्हों के प्रयोग में आते हैं—

तक् —अठै तक् = यहाँ तक
घर् तक् = घर तक
भर् — पेट् भर् = पेट भर
दिन् भर् = दिन भर
रात् भर् रात भर
तरफ्— कैं तरफ् — किस तरफ

	एँ तरफ्	= इस तरफ
पार् –	नद्दी पार्	= नदी पार
	सड़क् पार्	= सड़क के उस पार
तळै –	भाठां तळै	= पत्थरों के नीचे
	गाछ् तळै	= पेड़ के नीचे
कनै –	राम् कनै	= राम के पास
	घर् कनै	= घर के पास
	वैं कनै	= उसके पास
ताँई –	राम् ताँई	= राम के लिये
	छोरी ताँई	= लड़की के लिये
	वैं ताँई	= उसके लिये
कानी –	राम् कानी	= राम की ओर
	घर् कानी	= घर की ओर
	वैं कानी	= उसकी ओर
	मन्दर् कानी	= मन्दिर की ओर

६. ६. बलात्मक शब्दांश (निपात)

हिन्दी की भाँति ही शेखावाटी में भी कुछ अव्ययात्मक शब्दांश पाये जाते हैं जो गौण प्रकृति के कहे जा सकते हैं। ये वाक्य–स्तर पर किसी पद विशेष पर बलाघात (जोर) करने में सहायुता पहुँचाते हैं। साधारणतः ये वाक्य में किसी भी पद के साथ आ सकते हैं। शेखावाटी में पाये जाने वाले महत्त्वपूर्ण बलात्मक शब्दांश (निपात) निम्न हैं—

ई	= ही	(संश्लिष्ट)
बी	= भी	
तो	= तो	
तक्	= तक	

जब 'ई' व्यंजनांत पद के बाद बलाघात करने के लिये प्रयुक्त होता है तो इसका उच्चारण उस पद के साथ ही इस प्रकार होने लगता है कि श्रोता को वह ईकारान्त शब्द सुनाई पड़ने लगता है, जैसे—

रामी (राम्+ई) गयो = राम ही गया।

छोरो घरी (घर्+ई) मैं है = लड़का घर ही में है।

ईकारान्त तथा ऊकारान्त पदों के साथ जब 'ई' रखा जाता है तो 'ई' अपने

पूर्व के शब्दांत -ई और -ऊ को ह्रस्व कर देता है, यथा—

छोरिई आई	=	लड़की ही आई।
हाथिई भाग्यो	=	हाथी ही भागा।
ताउई नैं बला	=	ताऊ ही को बुलाओ।
आलुई उबाळ्	=	आलू ही उबालो।
तुई बोल्यो	=	तू ही बोला।

अन्यकारान्त (-आ, -ओ) शब्दों के साथ जुड़कर कोई परिवर्तन नहीं करता, जैसे—

छाया ई मैं बैठ्	=	छाया ही में बैठो।
घोडोई खरीद्यो	=	घोड़ा ही खरीदा।

बी (भी) :

तेरो बेटो बी आयो है	=	तुम्हारा बेटा भी आया है।
तू बी खेला कर्	=	तुम भी खेला करो।
मैं गयो बी पर् काम् कोनी बण्यो	=	मैं गया भी पर काम नहीं बना।
तू चालैगो बी	=	तुम चलोगे भी।
मैं अठै बी आयो थो	=	मैं यहाँ भी आया था।

तो :

मैं तो आयो थो	=	मैं तो आया था।
राम् तो घर् गयो	=	राम तो घर गया।
वो घर्यां तो कोनी आयो	=	वह घर तो नहीं आया।
तू आयो तो कोन्या	=	तुम आये तो नहीं।
थे अठै तो आया कोन्या	=	आप यहां तो आये नहीं।

तक् :

थे चिट्ठी तक् कोनी दी	=	आपने पत्र तक नहीं दिया।
मैं तक् वठै कोनी गयो	=	मैं तक वहाँ नहीं गया।
बापूजी तक् नैं आणो पड्यो	=	पिताजी तक को आना पड़ा।
तू आयो तक् कोनी	=	तुम आये तक नहीं।
बो अठै तक् आयो	=	वह यहाँ तक आया।

७. क्रिया-पद्-रचना

७. ०. शेखावाटी की क्रिया-पद-रचना हिन्दी एवं हिन्दी-प्रदेश की अनेकानेक क्षेत्रीय बोलियों के सदृश ही काल, वाच्य, वचन, लिंग, अर्थ तथा पुरुषद्योतक रचनात्मक प्रवृत्तियों से प्रभावित होती है। प्रति क्रिया-पद में इन समस्त व्याकरणिक विशेषताओं की उपस्थिति आवश्यक नहीं, किन्तु फिर भी उनमें से अधिकांश किसी एक पद में अनिवार्यतः मिल जाती हैं। शेखावाटी का प्रत्येक क्रिया-पद अनिवार्यतः किसी एक निम्न वर्ग में स्थान पाता है :

१. धातु— (विभक्ति-प्रत्यय शून्य)

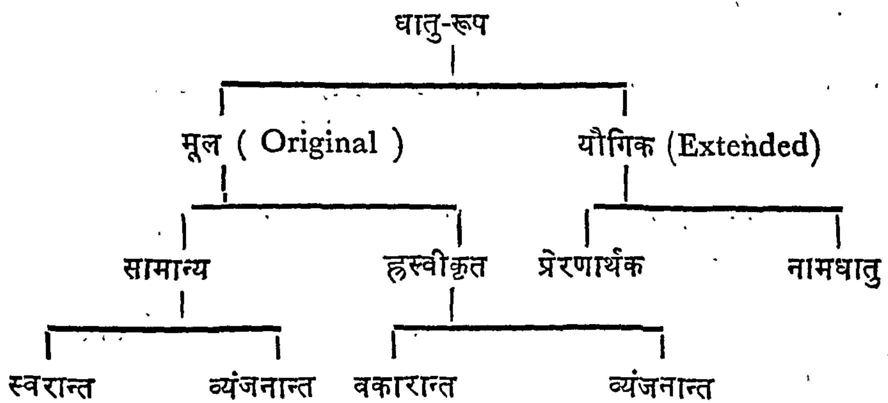
२. धातु + तिङ् प्रत्यय (कर्ता के पुरुष एवं वचन से प्रभावित)
[तिङन्त रचना]

३. धातु + कृत् प्रत्यय (कर्ता के लिंग एवं वचन से प्रभावित)
[कृदन्त रचना]

४. धातु + तिङ्/ कृत् प्रत्यय
+ सहायक क्रिया (अपने विविध रूपों में)
[संयुक्त-रचना]

७. १. धातुओं का वर्गीकरण —

७. १.१. रचना की दृष्टि से : धातु-रूपों को स्पष्ट करने के लिये निम्न तालिका बनाई जा सकती है—



रचना की दृष्टि से धातुओं के दो वर्ग बनते हैं—मूल तथा यौगिक। मूल धातु-रूप अभिधार्थी है तो यौगिक धातु-रूप व्याकरणिक अर्थ के सूचक। मूल धातु-रूप पुन : दो वर्गों—सामान्य एवं ह्रस्वीकृत — में विभक्त हैं और अन्तिम ध्वनि की दृष्टि से सामान्य

और ह्रस्वीकृत के फिर दो वर्ग बन सकते हैं जिनका आगे क्रमिक उल्लेख किया जा रहा है :

सामान्य—इस वर्ग की धातुएँ कर्तृभाव को प्रकट करती हैं। इनके अन्तिम ध्वनि की दृष्टि से प्रमुखतः दो वर्ग बनते हैं :

(१) स्वरान्त—इस वर्ग की सभी धातुएँ दीर्घस्वरों में अन्त होती हैं, यथा आ, जा, गा, पा, न्हा, बा (बाल सवाँरना), पी, जी, सी, दे, ले, से, छू, चू, न्हू, ल्हू, रो, सो, धो, धो, बो, हो, ढो आदि।

(२) व्यंजनान्त—इस वर्ग की धातुएं अर्ध-स्वर य् और व् तथा न्ह्, (पढ़), को छोड़कर शेष सभी व्यंजन ध्वनियां (देखिए, ध्वनि-संरचना, विषय-क्रम २.२.) में अन्त रखने वाली हैं, यथा—झांक्, हांक्, लिख्, देख्, लाग्, भाग्, लांघ्, बांच्, आंच्, पूछ्, धूज् (कांप), गूंज्, रांझ (रांजना), काट्, बांट्, जूठ् (बर्तनों को जूठा करना), गाड् (गाड़)मांड् (लिख), पढ् (पढ़), चढ् (चढ़), काढ् (काल), जाण् (जान), छांण् (छान), कात्, सूंत् (कसकर पानी को पोंछना), गाथ, पाथ्, कूद्, फांद्, बाध् (बढ़), बांध्, मान्, चून्, चेप् (चिपकाना), झांप्, नाप्, हांफ्, दाव्, नाच् (नचाना), जाम् (जम), जीम् (भोजन करना), चीर्, चूर् (टुकड़े टुकड़े करना) बेर, रोल्, चाल (चल), बोल, तोल, खोल, चाळ (छान), टाळ (टाल), चूस, रूस् (रुष्ट होना), ठूंस्, चूस् (सड़ना), टोह् (ढूंढ़), मोह्, आदि।

ह्रस्वीकृत—इस वर्ग की धातुएं कर्मणिभाव को प्रकट करती हैं। ह्रस्वीकृत धातु-रूपों से प्रेरणार्थक धातु-रूप निर्मित होते हैं। इन्हें अन्तिम ध्वनि की दृष्टि से निम्न दो वर्गों में रखा जा सकता है :

(१) वकारान्त (स्वरांत)—सामान्य वर्ग की स्वरान्त धातुओं के ह्रस्वीकृत धातु-रूपों के वर्ग को ही वकारान्त कहा गया है। सामान्य व्यंजनान्त धातुओं के ह्रस्वीकृत रूपों यथा—बांध् > बंध्, काट् > कट् आदि के प्रतिरूप (Pattern) के आधार पर सामान्य स्वरान्त धातुओं के ह्रस्वीकृत रूपों में व् श्रुति को अंकित करके उन्हें वकारान्त धातुओं के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, यथा—आ > अव्, खा > खव् आदि। यद्यपि यह वर्ग भी व्यंजनान्त ही है, किन्तु फिर भी सामान्य स्वरान्त धातुओं से ह्रस्वीकृत रूप होने के कारण इनका पृथक वकारान्त वर्ग बना दिया गया है।

ऊपर कहा जा चुका है कि सारी सामान्य स्वरान्त धातुएँ दीर्घ स्वर में अन्त होती हैं। अतएव ह्रस्वीकृत धातु-रूप में स्वर परिवर्तन-प्रक्रिया इस प्रकार मिलती है—

आ > अ

शेखावाटी में दीर्घ स्वर ऐ और औ रखने वाली स्वरान्त धातुएँ एक भी उपलब्ध नहीं। अतएव -आ, -ई, -ए, -ओ, -ऊ में अन्त होने वाली सामान्य स्वरान्त धातुओं के ह्रस्वीकृत रूपों को ही वकारान्त वर्ग के अन्तर्गत देखा जा सकता है, यथा—आ > अव्, खा > खव्, बा > बव् (बाल सँवरना), ता > तव् (तपना), पी > पिव्, सी > सिव्, दे > दिव्, ले > लिव्, भे > भिव् (भिगोये जाना), खे > खिव्, खो > खुव्, धो > धुव्, बो > बुव्, ढो > ढुव्, छू > छुव्, चू > चुव् आदि।

(२) व्यंजनान्त–सामान्य व्यंजनान्त धातुओं के दीर्घ स्वर को ह्रस्व करके, ह्रस्वीकृत व्यंजनान्त धातुओं का निर्माण होता है। दीर्घ धातु स्वर को ह्रस्व करते समय ध्वन्यात्मक प्रक्रिया उपर्युक्त ढंग से ही चलती है। यथा–बाँध् > बँध्, काँप् > कँप्, काट् > कट्, हाँक् > हँक्, लाग् > लग्, भाग् > भग्, जाग् > जग्, पीस् > पिस्, चीर् > चिर्, छीन् > छिन्, चेप् > चिप्, खेल् > खिल्, बेल् > बिल्, सेक् > सिक्, मूँद् > मुँद्, कूट् > कुट्, लूट् > लुट्, ठूँस् > ठुँस्, ख़ोल् > खुल्, छोल् > छुल्, तोल् > तुल्, तोड़् > तुड़्, छोड़् > छुड़् ~ छुट् इत्यादि।

अपवाद : अर्थ की दृष्टि से—

(१) कुछ धातुएँ ऐसी हैं जिनके ह्रस्व एवं दीर्घ दोनों ही रूप व्यवहार में हैं, पर उन्होंने अर्थ में इतनी विभिन्नता उत्पन्न कर ली है कि वे मूलतः एक ही धातु के दो रूप हैं—यह अर्थ से पहिचानना कठिन है, यथा—चूक्>चुक्, मार् > मर् : मैं ऐं काम मैं चूक् गयो = इस काम में चूक गया।

घर् मैं आटो चुक् गयो = घर में आटा समाप्त हो गया।
वो मारै है = वह पीटता है।
वो मरै है = वह मरता है।

(२) इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी धातुएँ मिलती हैं जिनका सामान्य तथा ह्रस्वीकृत रूप एक ही अर्थ का द्योतन कराते हैं, यथा—चाल् > चल्, हाल् > हल्, : वो चालै है / वो चलै है } = वह चलता है।

वो हालै है / वो हलै है } = वह हिलता है।

(३) कुछ धातुएँ ह्रस्वीकृत से (कर्मवाचीय अर्थ से) सामान्य (कर्तृवाचीय अर्थ में) पहुँच गई हैं, यथा : कर्, सक्, हट्, पढ़्, लड़्, पड़्, डर्, मथ्, कह्, सह्, नट् (अस्वीकार करना), चर्, अड़्, भर्, चढ्, धर्, लिख्, भिड़्, सुन्, चुग्, उठ्, घुस्, ल्हुक् (छिपना) आदि।

यौगिक धातुएँ—मूल (Original) धातुओं के ह्रस्वीकृत रूपों में प्रत्ययों के योग से यौगिक धातुओं का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त नाम-शब्दों में प्रत्ययों के योग से बनने वाली कुछ धातुएँ भी यौगिक ही हैं। अतएव यौगिक धातुओं के दो वर्ग बन सकते हैं—१. प्रेरणार्थक और २. नामधातुएँ।

(१) प्रेरणार्थक : शेखावाटी में प्रेरणार्थक प्रत्यय -आ एवं -वा हैं। ये सदैव सामान्य धातुओं के ह्रस्वीकृत रूपों में ही संश्लिष्ट होते हैं। इस संबंध में उल्लेखनीय बात यह है कि जब अकर्मक धातुओं में –आ लगता है तो धातु सकर्मक मात्र होकर रह जाती है, अतएव ऐसी धातुओं के प्रेरणार्थक रूप -वा के योग से बनते हैं, यथा—हट् + आ = हटा (सकर्मक), हट् + वा = हटवा (प्रेरणार्थक)। सकर्मक धातुओं में -आ एवं -वा दोनों प्रत्यय प्रेरणार्थक का ही बोध कराते हैं, यथा—कर् + आ = करा (प्रेरणार्थक), कर् + वा = करवा (प्रेरणार्थक), लिख् + आ = लिखा (प्रेरणार्थक), लिख् + वा = लिखवा (प्रेरणार्थक)।

सारी प्रेरणार्थक धातुएँ सकर्मक होती हैं, क्योंकि कुछ किए जाने की प्रेरणा का कार्य रहता है जो किसी की ओर निर्दिष्ट होना चाहिए।[1] प्रेरणार्थक धातु-रचना होते समय जो ध्वन्यात्मक परिवर्तन होता है, उसका उल्लेख कर दिया जाये तो अनुचित न होगा। जब द्व्यक्षरात्मक ह्रस्वीकृत धातु में –आ के योग से प्रथम प्रेरणार्थक धातु निर्मित होती है तो दूसरे आक्षरिक स्वर –अ का लोप हो जाता है, यथा—समझ् + आ = सम्झा (प्रथम प्रेरणार्थक), उपड़् + आ = उप्ड़ा (प्रेरणार्थक)। किन्तु व्यंजन-ध्वनियों की संयुक्तता में घनिष्ठता न रहने के कारण सूक्ष्म समयावकाश की अनुभूति होती है जो आन्तरिक स्वल्प विवृति (Internal open juncture) है अतः दोनों की संधि नहीं हो पाती। इसीलिए ध्वनि को स्वर सहित आलेखन में अपनाया गया है। इसी प्रकार -वा प्रत्यय के संयुक्त होने पर भी धातु और प्रत्यय के मध्य स्वल्प समयावकाश की अनुभूति होती है जिससे दोनों समीपवर्ती व्यंजन संयुक्त नहीं हो पाते हैं और इसी कारण आलेखन में ध्वनि को पूर्ण (श्रुति सहित) करके अपनाया गया है, यथा—कर् + वा = करवा। अब कुछ धातुओं के प्रेरणार्थक धातु-रूप परिगणित किए जा सकते हैं :

ह्रस्वीकृत	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक
बँध् + आ	बँधा	
+ वा		बँधवा
कट् + आ	कटा	
+ वा		कटवा

१—ए बेसिक ग्रामर आव माडर्न हिन्दी, पृ० ८२।

ह्रस्वीकृत	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक
पिस्+आ	पिसा	
+वा		पिसवा
चिर्+आ	चिरा	
+वा		चिरवा
कुद्+आ	कुदा	
+वा		कुदवा
चुस्+आ	चुसा	
+वा		चुसवा
कुट्+आ	कुटा	
+वा		कुटवा
खुल्+आ	खुला	
+वा		खुलवा
दिव्+आ	दिवा	
+वा		दिववा
लिव्+आ	लिवा	
+वा		लिववा
धुव्+आ	धुवा	
+वा		धुववा
रुव् +आ	रुवा	
+वा		रुववा

अपवाद: प्रेरणार्थक प्रत्यय –आ और –वा 'पी' धातु के ह्रस्वीकृत रूप 'पिव्' में न लग कर पि में लगते हैं और –आ की संधि से प्रथम प्रेरणार्थक 'प्या' और द्वितीय प्रेरणार्थक 'पिवा' बनता है।

(२) नामधातुएँ—नाम शब्दों (संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण) में -णो प्रत्यय के जोड़ देने से कुछ नाम शब्द क्रियार्थक संज्ञा का भाव देने लगते हैं।–णो के न रहने पर हम उन्हें नामधातुएं मान सकते हैं। कुछ नाम शब्द -आ या -इया प्रत्ययों को लेकर नामधातुओं के रूप में मिलते हैं। यथा—दाग-णो, धिक्कार-णो, अपना-णो, वता-णो, दुखा-णो, वड़वड़ा-णो, खट्-खटा-णो, चम-चमा-णो, हरिया-णो (हरा होना) आदि। इसके अतिरिक्त अनुरणनात्मक भाववाचक संज्ञाओं के प्रथमांश में -क् प्रत्यय के योग से कितनी ही नवविकसित धातुएँ हैं जो विविध भावों की अभिव्यंजना में सहायक हैं। यथा—खट-खट, गट-गट, चम-चम, टप-टप, फट-फट आदि भाववाचक संज्ञाओं

के प्रथमांश अर्थात् खट-,गट-, चम-, टप-, फट- में -क् प्रत्यय के योग से खटक्, गटक् चमक्, टपक्, फटक् आदि अनेक ककारान्त धातुएँ निर्मित हुई हैं जिनसे अनेकानेक भाव प्रकट होते हैं। व्यापकता की दृष्टि से ये धातुएँ कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। उदाहरण के लिए कुछ ककारान्त धातुएँ परिगणित की जा सकती हैं, यथा—अटक्, खटक्, गटक्, चमक्, टपक्, झनक्, झपक्, ठनक्, हसक्, ठसक्, दबक्, पटक्, फटक्, छलक्, कड़क्, फड़क्, भनक्, मणक्, भड़क्, मटक्, भटक्, मचक्, धँसक्, पचक्, धँचक्, धड़क्, झटक्, लचक्, लटक्, लपक्, रड़क् (गड़ना), सरक्, ठमक्, चिरक्, चिड़क्, चिलक् (चमक), किलक्, बिचक्, खिलक् छिड़क्, झिजक्, झिड़क्, भिनक्, पिचक्, भिड़क्, सिसक्, खुड़क्, गुड़क् (लुढ़क्), तुनक्, बुरक् (छिड़क्), ढुलक्, सुड़क्, लुढक् इत्यादि।

७. १. २. आक्षरिक दृष्टि से—आक्षरिक वितरण के आधार पर शेखावाटी की धातुएँ निम्न दो वर्गों में रखी जा सकती हैं—

(१) एकाक्षरी—शेखावाटी की अधिकांश मूल धातुएँ एकाक्षरी ही हैं, यथा— आ, जा, पी, ले, दे, धो, रो, खो, चाल्, बाँध्, मार्, काट्, पीट्, लूट्, फोड़्, तोड़्, मोड़् आदि।

(२) द्व्यक्षरी—यौगिक धातुएँ (प्रेरणार्थक धातुएँ तथा नामधातुएँ) तो दो या दो से अधिक अक्षरों की अनिवार्यतः मिलती हैं, किन्तु मूल धातुएँ सामान्यतः एकाक्षरी ही हैं और जो कतिपय द्व्यक्षरी मिलती भी हैं, उनके संबंध में कहा जा सकता है कि वे ऐतिहासिक दृष्टि से यौगिक हैं। उनकी यौगिकता को स्पष्ट करने के लिए निम्न वर्गीकरण किया जा सकता है—

(i) संस्कृतयुगीन उपसर्गात्मक धातुएँ—शेखावाटी की मूल धातुएं जो अपने में संस्कृतयुगीन उपसर्गों को समाविष्ट किए हुए हैं, आक्षरिक दृष्टि से द्व्यक्षरी ठहरती हैं। संस्कृत भाषा में धातुओं में उपसर्ग लगकर भिन्न-भिन्न अर्थद्योतक धातुओं को निर्मित करते थे। कालान्तर में सोपसर्ग धातु का विकास होता चला गया। विकास-क्रम में धातु के साथ उपसर्ग इस प्रकार घुल-मिल गए कि अब उनको धातुओं से अलग करके नहीं देखा जा सकता और अब केवल मूल धातु-रूप में ही प्रतीति होती है, यौगिकता केवल ऐतिहासिक बात भर रह गई, यथा—समझ्, समेट्, सम्हाल्, उपाड़् (उखाड़), उछाल्, पकड़्, पसर्, निकाल्, नीसर् (बाहर निकलना), बिरच् (प्रलाप-करना), बखाण् (व्याख्यान करना) आदि।

(ii) अपभ्रंशयुगीन प्रत्ययात्मक धातुएँ—बहुत संभव है कि शेखावाटी की कुछ मूल द्व्यक्षरी धातुओं में अपभ्रंशयुग के प्रत्यय समाए हुए हों जिससे आज वे

एकाक्षर के स्थान पर द्व्यक्षर रूप में मिल रही हैं। यथा—झगड़्,[1] घुमड़्, रगड़्, उपट्, झपट्, रपट्, लपट्, हड़प्, तड़प्, पनप् आदि ।

(iii) शेखावाटी में अरबी-फारसी के प्रभाव से आगत कतिपय धातुएँ हैं जो द्व्यक्षरी हैं, यथा—खरीद्, खरच्, फर्मा, बदल् आदि। पं० कामता प्रसाद गुरु[2] ने नाम धातुओं के अन्तर्गत इन्हें परिगणित किया है।

काल-रचना

७. २. तिङन्तीय रचना :

७. २. ०. शेखावाटी में वर्तमान, आज्ञा तथा भविष्य-काल की रूप-रचना धातु में तिङ् प्रत्ययों के योग से होती है। आरम्भ में संकेत किया जा चुका है कि ये प्रत्यय कर्त्ता के पुरुष एवं वचन से प्रभावित होते हैं, लिंग से नहीं। इन प्रत्ययों के योग से बने वर्तमान, आज्ञा और भविष्य काल को तिङन्तकाल[3] भी कह सकते हैं। डा० धीरेन्द्र वर्मा ने इन्हें "संस्कृत-कालों के अवशेष काल" कहा है जो ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक भी है। अब धातु के साथ वर्तमान कालिक-तिङन्तीय प्रत्यय-योजना का अवलोकन किया जा सकता है :

---

१. डा० गणेश वसुदेव तगारे ने अपनी 'हिस्टोरीकल ग्रामर आव अपभ्रंश' में पृ० ३१२ पर नामधातुओं की चर्चा करते हुए पश्चिमी अपभ्रंश में संज्ञा झकट (लड़ाई) से झगड़ धातु का विकास दिखाया है।

२. हिन्दी व्याकरण, पृ० १३३ ।

३. हिन्दी की भांति शेखावाटी की काल-रचना-प्रणाली प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की पद्धति से बहुत दूर चली आई है, किन्तु फिर भी हिन्दी से अभी बहुत कुछ पीछे है, क्योंकि वर्तमान काल, आज्ञा तथा भविष्य काल के रूप संस्कृत की भांति अभी तिङन्त हैं जबकि हिन्दी में आज्ञा काल को छोड़कर सब कृदन्त हैं अर्थात् लिंग से प्रभावित होने वाले हैं। हिन्दी की भांति शेखावाटी में यदि भूतकाल में कृदन्त रूप मिलते हैं तो इनकी प्राप्ति सकारण है क्योंकि इन दोनों की मूल प्राचीन भारतीय आर्यभाषा संस्कृत भी तो इस प्रकार के रूपों में निरन्तर अभिरुचि लेती रही है, यथा—सः गतः (वो गयो, हिन्दी—वह गया), सा गता (वा गई, हिन्दी—वह गई), ते गताः (वै गया, हिन्दी—वे गये)। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा संस्कृत में भूतकाल में धातु के तीन रूप होते थे—लङ्, लिट् एवं लुङ् लकार में। इनके उदाहरण क्रमशः इस प्रकार हैं—१. अगच्छत् (लङ्) २. जगाम् (लिट्) तथा ३. अगमत् (लुङ्)। मध्य भारतीय आर्यभाषा-काल में ये तीनों रूप छोड़े जाने लगे और धातु के भूतकालिक कृदन्त रूप से भूतकाल प्रकट किया जाने लगा। अस्तु प्राकृत ने संस्कृत के इन तीनों रूपों के बदले कृदन्तीय रूप, जिनके उदाहरण ऊपर दिए जा चुके हैं, अपनाये। वे गतः, गता > मध्य भारतीय आर्यभाषा गओ, गआ > शेखावाटी गयो (गो), गया (गा) हैं। शेखावाटी में

७. २. १. वर्तमान कालिक तिङ् प्रत्यय:

	एक वचन	बहु वचन
अ०पु०	चाल् + ऐ = चालै	चाल् + ऐ = चालै
म०पु०	चाल् + ऐ = चालै	चाल् + ओ = चालो
उ०पु०	चाल् + ऊँ = चालूं	चाल् + आँ = चालाँ

उदाहरणार्थ कुछ वाक्य लिए जा सकते हैं—

वो चालै है = वह चलता है।
वा चालै है = वह चलती है।
वै चालै है = वे चलते हैं।
तू चालै है = तू चलता है।
थे चालो हो = तुम लोग चलते हो।
मैं चालूं हूँ = मैं चलता हूँ।
म्हे चालाँ हाँ = हम चलते हैं।

एक वचन 'गयो' तथा बहु वचन 'गया' स्वतंत्र क्रिया-पदों के रूप में व्यवहृत होते हैं जबकि संयुक्त क्रिया-पदों में सहायक क्रिया-पदों के रूप में 'गो' एवं 'गा' प्रयुक्त होते हैं। 'गयो' का स्त्रीलिंग रूप 'गई' बनता है और 'गो' का 'गी'। यथा—वो आ गो (वह आ गया), वैं आ गा (वे आ गये), वा आ गी (वह आ गई)। इसके अतिरिक्त भविष्य काल के रूपों के निर्माण में भी शेखावाटी के पूर्वोत्तरी क्षेत्र में ये तीनों 'गो, गा, एवं गी' सहायक क्रियाओं के रूप में व्यवहृत होते हैं, यथा—वो जावैं ई गो (वह जायेगा ही।) वैं जावैं ई गा (वे जायेंगे ही), वा जावैं ई गी (वह जायेगी ही), वो आवैं वी गो (वह आयेगा भी), वैं आवैं वी गा (वे आयेंगे भी), वा आवैं वी गी (वह आयेगी भी), इसी प्रकार ई (ही), वी (भी) के अतिरिक्त 'तो' निपात भी प्रयुक्त होकर 'गो, गा, एवं गी' रूपों को सहायक क्रियाओं की कोटि में प्रतिष्ठित करने में सहायक होता है। भूतकालिक कृदन्त रूपों के अतिरिक्त प्राचीन भारतीय आर्यभाषा संस्कृत के वर्तमान एवं भविष्य काल के रूप अपनी तिङन्तीय विशेषता सहित शेखावाटी में चले आये, यथा—सं० चलति > म० भा० आर्यभाषा चलइ > शेखावाटी चलै, चालै; संस्कृत चलिष्यति > म० भा० आर्यभाषा चळिस्सइ > शेखावाटी चलसी, चालसी। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा से प्राप्त ये तीन रूप (दो तिङन्त तथा एक कृदन्त) शेखावाटी धातुओं के विविध काल-रूपों के आधार हैं और इनमें सहायक क्रियाओं के योग से शेखावाटी की काल-रचना प्रणाली प्रकट हुई है।

७. २. २. आज्ञार्थ तिङ् प्रत्यय:

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	चाल् + ऐ = चालै	चाल् + ऐ = चालै
म० पु०	चाल् + ० = चाल्	चाल् + ओ = चालो
उ० पु०	चाल् + ऊँ = चालूँ	चाल् + आँ = चालाँ

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य यह है कि मध्यम पुरुष एक वचन के रूप (चाल्) को छोड़कर शेष आज्ञार्थ रूप वर्तमान काल के ही समान हैं। इस प्रकार रूपों में परस्पर हेल-मेल हो जाने के कारण ही संयुक्त काल का विकास हुआ अर्थात् वर्तमान काल की अभिव्यक्ति के लिये सहायक क्रियाओं को भी साथ में स्थान मिलने लगा, जबकि आज्ञार्थ रूप स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होने के लिए छोड़ दिये गये। इस प्रकार दोनों आज्ञार्थ और वर्तमान के मध्य स्पष्ट भेद हो गया।

दूसरी बात उल्लेखनीय यह है कि शेखावाटी में आज्ञार्थ मध्यम पुरुष एक वचन एवं बहु वचन के रूप क्रमशः '-इए' तथा '-इओ' प्रत्ययों के योग से भी विरचित होते हैं, जो आज्ञा के साथ-साथ कुछ दृढ़ता का भाव भी प्रकट करते हैं। बुंदेली में भी ये प्रत्यय इसी प्रकार कार्य रत देखे जा सकते हैं।[1] इन प्रत्ययों के योग से रूप रचना इस प्रकार होती है :

	एक वचन	बहु वचन
म०पु०	(तू) चाल् + इए = चालिए	(थे) चाल् + इओ = चालियो

नोट: दीर्घ स्वरान्त धातुओं में -इए तथा -इओ के स्थान पर केवल -ए और -ओ ही संलग्न होते हैं, यथा :

	एक वचन	बहु वचन
म०पु०	(तू) आ + ए = आए	(थे) आ + ओ = आयो

७. २. ३. भविष्यकालिक तिङ् प्रत्यय :

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	चाल् + सी = चालसी	चाल् + सी = चालसी
म० पु०	चाल् + सी = चालसी	चाल् + स्यो = चालस्यो
उ० पु०	चाल् + स्यूँ = चालस्यूँ	चाल् + स्याँ = चालस्याँ

---

१. बुंदेली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, पृ० ११७।

उदाहरणार्थ कुछ वाक्य देखे जा सकते हैं :

छोरो काल् चालसी = लड़का कल चलेगा।
छोरी काल् चालसी = लड़की कल चलेगी।
छोरा काल् चालसी = लड़के कल चलेंगे।
तू काल् चालसी = तू कल चलेगा।
थे काल् चालस्यो = तुम लोग कल चलोगे।
मैं काल् चालस्यूं = मैं कल चलूंगा।
म्हे काल् चालस्यां = हम कल चलेंगे।

७. ३. कृदन्त रचना (कृदन्त रूप) :

७. ३. ०. शेखावाटी बोली के भूतकालिक संभावनार्थ तथा तात्कालिक रूप और सामान्य भूतकालिक रूप धातु में कृत् प्रत्ययों के योग से बनते हैं। आरम्भ में संकेत किया जा चुका है कि ये प्रत्यय लिंग-वचन से प्रभावित होते हैं, पुरुष से नहीं। शेखावाटी में कृत् प्रत्यय दो -त्- और -य्- हैं। इन प्रत्ययों के योग से बने कालों को कृदन्त काल कहा जा सकता है। अब क्रमशः इन दोनों प्रत्ययों के योग से रूप-रचना देखी जा सकती है।

७. ३. १. कृत् प्रत्यय -त्- : शेखावाटी के भूतकालिक संभावनार्थ तथा तात्कालिक कृदन्त रूपों में सहायक होता है। अतः लिंग-वचन से प्रभावित रूप इस प्रकार बनते हैं :

भूतकालिक संभावनार्थ कृदन्त-रूप :

	एक वचन	बहु वचन
पुं०	(वो) चाल् + त् + ओ = चाल्तो	(वै) चाल् + त् + आ = चाल्ता
स्त्री०	(वा) चाल् + त् + ई = चाल्ती	(वै) चाल् + त् + ई = चाल्ती

उदाहरणार्थ कुछ वाक्यों को देखा जा सकता है :

वो चाल्तो तो काम् वण् जातो = वह चलता तो काम बन जाता।
वै चाल्ता तो काम् वण् जातो = वे चलते तो काम बन जाता।
वा चाल्ती तो काम् वण् जातो = वह चलती तो काम बन जाता।
वै चाल्ती तो काम् वण् जातो = वे चलतीं तो काम बन जाता।

क्रियार्थक विशेषणों के रूप में भी इन्हीं चार रूपों का व्यवहार देखा जा सकता है। साथ ही कारक से प्रभावित होने के कारण ओकारान्त विशेषण की भांति

दोनों वचनों में दो रूप '-आ' और '-आँ' के योग से और बनते हैं जबकि विशेष्य विकारी रूपों के साथ कारक-चिन्ह ग्रहण करता हुआ होता है, यथा—

चाल्तो छोरो गिर गो = चलता हुआ लड़का गिर गया।
चाल्ता छोरा नैं गेर दियो = चलते हुए लड़के को गिरा दिया।
चाल्ता छोरा गिर गा = चलते हुए लड़के गिर गये।
चाल्ताँ छोराँ नैं गेर दियो = चलते हुए लड़कों को गिरा दिया।
चाल्ती छोरी गिर गी = चलती हुई लड़की गिर गयी।
चाल्ती छोरियाँ गिर गी = चलती हुई लड़कियाँ गिर गयीं।

किन्तु तात्कालिक कृदन्त रूपों का निर्माण पुल्लिग में ओकारान्त संज्ञा 'छोरो' तथा स्त्रीलिंग में 'छोरी' की भाँति होता है और चूंकि विकारी रूप ही तात्कालिक कृदन्तों के रूप में होते हैं, अतः ओकारान्त और ईकारान्त संज्ञा शब्दों की भाँति इनके विकारी रूप देखे जा सकते हैं। इसका कारण है—तात्कालिक कृदन्तों का संज्ञाओं की भाँति प्रयोग, जैसा कि नीचे के वाक्यों से स्पष्टीकरण होगा।

	ओकारान्त		ईकारान्त	
	एक वचन	वहु वचन	एक वचन	वहु वचन
वि०—	खाता (छोरा)	खाताँ (छोराँ)	खाती (छोरी)	खातियाँ (छोरियाँ)

तात्कालिक कृदन्तों का विकारी-रूपों में संज्ञाओं की भाँति प्रयोग के संबंध में कुछ वाक्य उदाहरण के लिये देखे जा सकते हैं :

वो खाता नैं टोक दियो = उसने खाते (लड़के) को टोक दिया।
वो खाताँ नैं टोक दियो = उसने खातों (लड़कों) को टोक दिया।
वो खाती नैं टोक दियो = उसने खाती (लड़की) को टोक दिया।
वो खातियाँ नैं टोक दियो = उसने खातियों (लड़कियों) को टोक दिया।

अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त तात्कालिक कृदन्त रूप ही होते हैं, यथा—

बँनैं काम् करता भोत् देर होगी — उसको काम करते बड़ी देर हो गई।
छोराँ नैं काम् करताँ भोत् देर होगी = लड़कों को काम करते बड़ी देर होगी।
छोरी काम् करती थक् गी = लड़की काम करती थक गयी।
छोरियाँ काम् करती थक् गी = लड़कियाँ काम करती थक गयीं।

नोट : स्त्रीलिंग विकारी बहुवचन में तात्कालिक कृदन्त 'कर्तियाँ' न होकर 'करती' मिल रहा है। शेष तीनों विकारी रूप तात्कालिक कृदन्त रूपों के समान ही हैं।

७. ३. २. कृत् प्रत्यय —य्—[१] : इस प्रत्यय को जब धातु के अन्त में लगा देते हैं तो भूतकालिक कृदन्त बन जाता है। फिर लिंग और वचन के प्रत्यय -ओ, -आ तथा -ई के योग से इसकी रूप-रचना होती है, यथा—

	एक वचन	बहु वचन
पुं०	(वो) खा + य् + ओ = खायो	(वै) खा + य् + आ = खाया।
स्त्री०	(वा) खा + य् + ई = खायी	(वै) खा + य् + ई = खायी।

पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त भूतकालिक कृदन्त के विकारी रूप होते हैं, यथा :

वैं नैं सोया भोत् देर् हो गी = उसको सोये बड़ी देर हो गयी।
म्हानैं सोयां भोत् देर् हो गी = हमको सोये बड़ी देर हो गयी।

किन्तु जब पूर्ण भूतकालिक कृदन्तों का विशेषणों की भाँति प्रयोग होता है तो '-ड़्-' प्रत्यय अन्य पुरुष के एक वचन रूप में लग जाता है और फिर ओकारान्त विशेषण की भाँति रूप बनते हैं अर्थात् लिंग-वचन के साथ कारक-प्रत्यय भी लगते हुये देखे जाते हैं—

एक वचन :

पुं० मूल—खायोड़ो आम् = खाया हुआ आम।
विं०—खायोड़ा आम् नैं = खाए हुए आम को।
स्त्री० मूल—खायोड़ी काकड़ी = खाई हुई ककड़ी।
वि०—खायोड़ी काकड़ी नैं = खाई हुई काकड़ी को।

बहु वचन :

पुं० मूल—खायोड़ा आम् = खाये हुये आम।
वि०—खायोड़ां आमां नैं = खाये हुए आमों को।
स्त्री० मूल—खायोड़ी काकड़ियां = खाई हुई ककड़ियां।
वि०—खायोड़ी काकड़ियां नैं = खाई हुई ककड़ियों को।

---

१. इस प्रत्यय के संबंध में यह कहा जा सकता है कि यह तो श्रुति मात्र है अर्थात् √खा + ओ दो स्वरों के मध्य की श्रुति है, किन्तु शेखावाटी में ऐसी कोई बात नहीं, क्योंकि उ + ओ, ऊ + ओ, ओ + ओ आदि स्वरों के मध्य वस्तुतः -व्- श्रुति होना चाहिए। किन्तु सभी स्थानों पर श्रुति -य्- मिलती है जो तथ्यतः प्रत्यय की कोटि में ठीक बैठती है, यथा—होयो ~ हुयो (हुवा), छूयो ~ छुयो (छुवा); इसके अतिरिक्त अधिक महत्त्व की बात यह है कि जब व्यंजनान्त धातुएँ होती हैं तब भी -य्- सुरक्षित रहता है, यथा—कर्यो, चल्यो, पढ्यो आदि।

७. ३. ३. शेखावाटी में पूर्वकालिक कृदन्त '-अर्' प्रत्यय के योग से बनते हैं। स्वरान्त धातुओं में केवल '-र्' प्रत्ययांश और व्यंजनान्त धातुओं में '-अर्' प्रत्यय दृष्टिगोचर होता है, यथा :

लिख्	+ अर् —	लिखर्	=	लिखकर
पढ्	+ अर् —	पढर्	=	पढ़कर
मार्	+ अर् —	मारर्	=	मार कर
आ	+ अर् —	आर्	=	आकर
जा	+ अर् —	जार्	=	जाकर
गा	+ अर् —	गार्	=	गाकर
सो	+ अर् —	सोर्	=	सोकर
रो	+ अर् —	रोर्	=	रोकर
छू	+ अर् —	छूर्	=	छूकर
पी	+ अर् —	पीर्	=	पीकर

शेखावाटी में लिंग-भेद केवल भूतकालिक संभावनार्थ, तात्कालिक एवं भूतकालिक कृदन्तों में ही पाया जाता है। इसीलिए इन्हें कृदन्त काल कहना अनुपयुक्त न होगा।

७. ४. सहायक क्रिया :

७. ४. ०. शेखावाटी में सहायक क्रियाओं की सहायता से वर्तमान तिङन्त तथा भूतकालिक कृदन्त क्रिया—रूपों से नए-नए कालों की अभिव्यंजना की जाती है, अतः इस संयुक्तता के द्वारा काल-बोध के कारण ही 'संयुक्त काल'[1] नाम देना समुचित है। पश्चिमोत्तरी शेखावाटी में प्रचलित तिङन्तीय भविष्य रूप-रचना को छोड़कर शेष शेखावाटी के सभी काल संयुक्तकाल के अन्तर्गत आते हैं अर्थात् वर्तमान, भूत और भविष्य तीनों कालों का ज्ञापन कराने के लिए तिङन्त धातु-रूपों तथा कृदन्त धातु—रूपों में सहायक क्रियाओं की सहायता ली जाती है। इन संयुक्त कालों का संबन्ध संस्कृत के कालों से किसी भी प्रकार से नहीं है, केवल क्रिया के तिङन्तीय तथा कृदन्तीय रूप और सहायक क्रिया का विकास संस्कृत—रूपों से अ . य हुआ है। धातु + तिङ्/कृत् प्रत्यय + सहायक क्रिया के द्वारा काल-रचना एवं . . आधुनिक है। संयुक्त-काल-निर्माण किस प्रकार होता है इस पर विचार करने . पूर्व सहायक क्रिया-धातुओं और उनकी रूप-रचना पर भी संक्षेप में दृष्टिपात कर ले . उपयुक्त होगा।

१. हिन्दी भाषा का इतिहास, पृष्ठ ३०३।

७.४.१. शेखावाटी में वर्तमान कालिक सहायक क्रिया की धातु √ह्- है और इसके विविध रूप अन्य क्रिया-रूपों की भांति पुरुष-वचन के प्रत्यय संश्लिष्ट करने से बनते हैं। स्वतंत्र क्रिया-धातु की वर्तमान कालिक रूप-रचना में जिन प्रत्ययों का पहले निरूपण किया है, वे ही इसमें पुरुष-वचन के अनुसार संश्लिष्ट होते हैं अर्थात् √ह्- के भी तिङन्तीय रूप बनते हैं, यथा—

वर्तमान निश्चयार्थ.

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	ह् + ऐ = है	ह् + ऐ = है
म० पु०	ह् + ऐ = है	ह् + ओ = हो
उ० पु०	ह् + ऊँ = हूँ	ह् + आँ = हाँ

शेखावाटी के पूर्वोत्तरी भाग को छोड़कर सारे शेखावाटी प्रदेश में √ह्- की मदद से ही भूतकालिक सहायक-क्रिया का निर्माण होता है। वर्तमान काल के सहायक क्रिया-रूपों की तुलना में अन्तर केवल इतना रहता है कि भूतकालिक रूप कृदन्त होते हैं अर्थात् लिंग से प्रभावित देखे जाते हैं, जबकि वर्तमान कालिक रूप तिङन्त होते हैं। शेखावाटी के पूर्वोत्तरी रूपान्तर में √ह्- के स्थान पर √थ्- मिलती है जिसके भूतकालिक रूप पश्चिमोत्तरी रूपान्तर की भाँति ही कृदन्त होते हैं। दोनों की भूतकालिक रूप-रचना निम्न प्रकार है :

भूत निश्चयार्थ

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	ह्, थ् + ओ = हो, थो	ह्, थ् + आ = हा, था
म० पु०	ह्, थ् + ओ = हो, थो	ह्, थ् + आ = हा, था
उ० पु०	ह्, थ् + ओ = हो, थो	ह्, थ् + आ = हा, था

नोट : लिंग से प्रभावित होने के कारण स्त्रीलिंग रूप धातु में -ई प्रत्यय के योग से बनता है। दोनों वचनों की रूप-रचना के लिये -ई प्रत्यय ही प्रयुक्त होता है, यथा—ह्, थ् + ई = ही, थी (एकवचन) : ह्, थ् + ई = ही, थी (बहुवचन)।

७.४.२. पूर्वोत्तरी शेखावाटी में भविष्य काल की रूप-रचना के लिए सहायक क्रिया-धातु √ग्- मानी जा सकती है क्योंकि यह भाग भी विश्लिष्टात्मक प्रवृत्ति रखता है जबकि हिन्दी में नहीं अर्थात् लिंगक 'ई, स, तो' वर्तमान तिङन्त रूपों और इस सहायक क्रिया के बीच प्रयुक्त होते हैं, यथा—

वो जावै ह गो = वह जावेगा है।

वै जावै वी गा = वे जायेंगे भी ।
वा जावै तो गी = वह जायेगी तो ।

अतएव स्पष्ट है कि √ग्- सहायक क्रिया-धातु है जो लिंग-वचन से प्रभावित प्रत्ययों को ग्रहण करती है । इस प्रकार √ग्- की रूप-रचना निम्न प्रकार देखी जा सकती है—

भविष्य काल

(पुल्लिंग)

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	ग् + ओ = गो	ग् + आ = गा
म० पु०	ग् + ओ = गो	ग् + आ = गा
उ० पु०	ग् + ओ = गो	ग् + आ = गा

(स्त्रीलिंग)

	एक वचन	बहु वचन
अ० पु०	ग् + ई = गी	ग् + ई = गी
म० पु०	ग् + ई = गी	ग् + ई = गी
उ० पु०	ग् + ई = गी	ग् + ई = गी

७. ४. ३. काल-बोधक सहायक क्रियाओं की रूप-रचना का निरूपण करने के उपरान्त अब तिङन्तीय रूप/कृदन्तीय रूप+सहायक क्रियाओं की सभी प्रकार की स्थितियों पर विचार करते हुये संयुक्त काल का निर्माण देखा जा सकता है :

(अ) १. मुख्य क्रिया (तिङन्तीय रूप) + सहायक क्रिया ह्-(तिङन्तीय रूपों में)

चलै	है	= (वह) चलता है ।
चलूँ	हूँ	= (मैं) चलता हूँ ।
चलाँ	हाँ	= (हम) चलते हैं ।
चलै	है	= (वह) चलती है ।

२. मुख्य क्रिया (तिङन्तीय रूप) + सहायक क्रिया ह्, थ्-(कृदन्तीय रूपों में)

चलै	हो ~ थो	= (वह) चलता था ।
चलै	हो ~ थो	= (मैं) चलता था ।
चलै	हा ~ था	= (हम) चलते थे ।
चलै	ही ~ थी	= (वह) चलती थी ।

३. मुख्य क्रिया (तिङन्तीय रूप) + सहायक क्रिया ग्-(कृदन्तीय रूपों में)

चलै	गो	= (वह) चलेगा ।
चलूँ	गो	= (मैं) चलूँगा ।

चलाँ	गा	= (हम) चलेंगे।
चलै	गी	= (वह) चलेगी।

(आ) १. मुख्य क्रिया (भूतकालिक कृदन्त) + सहायक क्रिया ह्-(तिङन्तीय रूपों में)

आयो	है	= (वह) आया है।
आयो	हूँ	= (मैं) आया हूँ।
आया	हाँ	= (हम) आये हैं।
आयी	है	= (वह) आयी है।

२. मुख्य क्रिया (भूतकालिक कृदन्त) + सहायक क्रिया ह्, थ्- (कृदन्तीय रूपों में)

आयो	हो ~ थो	= (वह) आया था।
आयो	हो ~ थो	= (मैं) आया था।
आया	हा ~ था	= (हम) आये थे।
आयी	ही ~ थी	= (वह) आयी थी।

३. मुख्य क्रिया (भूतकालिक कृदन्त) + सहायक क्रिया हो- (कृदन्तीय ग्- सहित)
या
(तिङन्तीय-स्-सहित)

आयो	होगो~होसी	= (वह) आया होगा।
आयो	होगो~होस्यूँ	= (मैं) आया होगा।
आया	होगा~होस्याँ	= (हम) आये होंगे।
आयी	होगी~होसी	= (वह) आयी होगी।

४. मुख्य क्रिया (भूतकालिक कृदन्त) + सहायक क्रिया हो- (वर्तमान तिङन्त रूपों में)

आयो	होवै	= (वह) आया होवे।
आयो	होवूँ	= (मैं) आया होऊँ।
आया	होवाँ	= (हम) आये होवें।
आयी	होवै	= (वह) आयी होवे।

५. मुख्य क्रिया (भूतकालिक कृदन्त) + सहायक क्रिया हो-(कृदन्तीय रूपों में)

आयो	होतो	= (वह) आया होता।
आयो	होतो	= (मैं) आया होता।
आया	होता	= (हम) आये होते।
आयी	होती	= (वह) आयी होती

(इ) १. मुख्य क्रिया (कृदन्तीय-संभावनार्थ) + सहायक क्रिया हो-(तिङन्तीय रूपों में)

आतो	होवै	= (वह) आता होवे।
आतो	होवूं	= (मैं) आता होऊँ।
आता	होवां	= (हम) आते होवें।
आती	होवै	= (वह) आती होवे।

२. मुख्य क्रिया (कृदन्तीय संभावनार्थ) + सहायक क्रिया हो-(कृदन्तीय रूपों में)

आतो	होतो	= (वह) आता होता।
आतो	होतो	= (मैं) आता होता।
आता	होता	= (हम) आते होते।
आती	होती	= (वह) आती होती।

३. मुख्य क्रिया (कृदन्तीय संभावनार्थ) + सहायक क्रिया हो-(तिङ् -स्य्-या कृत् ग्-सहित)

आतो	होसी~होगो	= (वह) आता होगा।
आतो	होस्यूं~होगो	= (मैं) आता हूँगा।
आता	होस्यां~होगा	= (हम) आते होंगे।
आती	होसी~होगी	= (वह) आती होगी।

७. ५. संयुक्त क्रिया :

७. ५. ०. संयुक्त क्रिया से तात्पर्य है—एकाधिक क्रियाओं के योग से निर्मित क्रिया। संयुक्त क्रिया में एक सहायक क्रिया का तिङन्त अथवा काल-वाची रूप और एक अथवा दो-तीन कृदन्त रूप प्राप्त होते हैं।

७. ५. १. शेखावाटी (अथवा अन्य आ० भा० आर्य भाषाओं) के संयुक्त क्रिया-रूपों से कहीं व्याकरणिक (Grammatical), कहीं अभिधा (Lexical) और कहीं लाक्षणिक (Stylistic) अर्थों की अभिव्यक्ति होती है। मुख्य क्रिया में √ ह्-, √ थ्-, √ग्- आदि के विविध सहायक क्रिया-रूपों की सहायता से कालों की, जा तथा वण्-के क्रिया-रूपों के योग से कर्मवाच्य की, यथा—वो मार्यो जावै है (वह मारा जाता है।), चोर बांध्यो गयो (चोर बांधा गया), मैरसैं कोन्या चाल्यो जावै (मेरे से नहीं चला जाता), वैंसैं कोन्या चलतो वणै (उससे नहीं चलते बनता), म्हारसैं कोन्या आतो वणै (हमसे नहीं आते बनता), और आ-, जा-, सक्-, चुक्-, पड़्- आदि के क्रिया-रूपों के योग से अभिधार्थों की सिद्धि की जाती है। व्याकरणिक अर्थों को स्पष्ट करने वाले संयुक्त क्रिया-रूपों की चर्चा पहले की जा चुकी है (देखिए काल-रचना)। अतएव अब यहाँ अभिधार्थों के लिये प्रयुक्त होने वाली संयुक्त क्रियाओं की रचनात्मक विधाओं की चर्चा ही अभीष्ट है।

क. सक्-, चुक्-, लग्-, चाह्-

ख. आ- जा-, खा- पी-, ले- दे-, पढ़्- लिख्-, उठ्- बैठ्-, न्हा- धो-

ग. हो-, रह्-, कर्-, बण्-, पा-, ला-, पड़्-, डाल्- आदि शेष समस्त सहायक क्रियाएँ।

उपर्युक्त वर्गीकरण 'संयुक्तता के प्रकार' के आधार पर है। क. वर्गीय सहायक क्रियाओं ने अपने अर्थ का समर्पण पूर्णतः नहीं किया है, जब कि ठीक इसके विपरीत ग. वर्गीय सहायक क्रियाओं ने अपने अर्थ को पूर्णतः समर्पित कर दिया है। ख. वर्ग की सहायक क्रियाएँ अर्थ-समर्पण की दृष्टि से तो तीसरे वर्ग ग. में ही आएँगी किन्तु अपने युग्म के साथ मिलने के कारण इनका एक पृथक वर्ग बना दिया गया है।

७. ५. ६. अब मुख्य एवं सहायक क्रियाओं के पारस्परिक गठन की दृष्टि से संयुक्त क्रियाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत किया जायेगा क्योंकि जैसाकि ऊपर कहा जा चुका है कि उनके द्वारा अभिव्यंजित अर्थ की दृष्टि से किये गये विभाजन में निश्चितता एवं पूर्णता का सर्वथा अभाव है। अतएव रचनात्मक या गठनात्मक वर्गीकरण को ही प्रमुखता दी जा रही है। निम्नांकित भेदों में मुख्य क्रिया के व्याकरणिक रूपों की परिगणना है और साथ ही सहायक क्रियाओं का संभव योग भी प्रदर्शित है :

१. धातु — सहायक क्रिया

धातु	सहायक क्रिया	
आ	जाणो	= आ जाना।
खा	जाणो	= खा जाना।
मिल्	जाणो	= मिल जाना।
फेंक्	देणो	= फेंक देना।
मोड़्	देणो	= मोड़ देना।
पढ़्	लेणो	= पढ़ लेना।
गिर्	पड़नो	= गिर पड़ना।
तोड़्	डालणो	= तोड़ डालना।
बोल्	उठणो	= बोल उठना।
रो	पड़नो	= रो पड़ना।

२. वर्तमान तिङन्त रूप — सहायक क्रिया

वर्तमान तिङन्त रूप	सहायक क्रिया	
आवै	जावै	= आता जाता।
खावै	पीवै	= खाता पीता।
पढ़ै	लिखै	= पढ़ता लिखता।
उठै	बैठै	= उठता बैठता।

लेवै	देवै	=	लेता देता ।
न्हावै	धोवै	=	नहाता धोता ।
करै	धरै	=	करता धरता ।

३. भूतकालिक संभावनार्थ कृदन्त सहायक क्रिया

जातो	रह्यो	=	जाता रहा (चल बसा) ।
पढतो	गयो	=	पढ़ता गया ।
होतो	आयो	=	होता आया ।
रोतो	गयो	=	रोता गया (सतत) ।

४. भूतकालिक कृदन्त सहायक क्रिया

पढायो	गयो	=	पढ़ाया गया ।
कियो	जावैगो	=	किया जायेगा ।
कूद्यो	पड़ै	=	कूदा पड़ता है ।
चल्यो	आवै	=	चला आता है ।
आयो	जावै	=	आया जाता है ।

५. (अ) क्रियार्थक संज्ञा (-णो सहित) सहायक क्रिया

जाणो	चाये	=	जाना चाहिए ।
कणों	चाये	=	करना चाहिये ।
पीणो	पड़ै	=	पीना पड़ता है ।
लिखणो	पड़ै	=	लिखना पड़ता है ।
लिखणो	होवै	=	लिखना होता है ।

५. (आ) क्रियार्थक संज्ञा (विकारी रूप)सहायक क्रिया

कहणै ~ कहण्	लाग्यो	=	कहने लगा ।
जाणै ~ जाण्	दियो	=	जाने दिया ।
आणै ~ आण्	पावै	=	आने पाता है ।
खाणै ~ खाण्	पावै	=	खाने पाता है ।
सोणै ~ सोण्	लागै	=	सोने लगता है ।
देखणै ~ देखण्	देवै	=	देखने देता है ।

६. नाम-रूप सहायक क्रिया

काम्	कर्यो	=	काम किया ।
वात्	करी	=	वात की ।
पूजा	करी	=	पूजा की ।

मार्	खावै	=	मार खाता है।
गम्	खायो	=	गम खाया।
धोखो	खायो	=	धोखा खाया।
लात्	मारै	=	लात मारता है।
सिर्	मारै	=	सिर मारता है।
काम्	देखै	=	काम देखता है।
हाथ्	देख्यो	=	हाथ देखा।
धोळो	होणो	=	काटो तो खून नहीं।
स्याह	होणो	=	बर्बाद होना।
नाम्	होणो	=	नाम होना।
बेरो	पड़्यो	=	पता लगा।
चोट	लागी	=	चोट लगी।

नोट : उपर्युक्त कोटि की संयुक्त क्रिया-रचना अधिकाधिक बढ़ रही है। इस प्रकार की संघटना में सर्वाधिक सहायक 'कर-' सहायक क्रिया है। वैसे कुछ और भी क्रियाएँ जैसे—खा, मार्, देख्, हो, लाग् आदि भी बराबर व्यवहृत होती देखी जाती हैं।

————

८. शब्द-रचना-विधान

[illegible]

[illegible]

[illegible]

1—(i) "Word means single combination with single pronunciation. A word is thus segment of a sentence bounded by successive points at which pausing is possible."—A Course in Modern Linguistics, P. 166.

(ii) "A free form which can not be divided entirely into smaller free form is a minimum free form or word."—Outline of Linguistic Analysis, P. 68.

(iii) "....The smallest unit which is isolable and can not be further broken into free forms."—An Introduction to Morphology and Syntax, page 75.

आदि शब्दों की √ कृ, √ धृ, √ सृप, √ पत्, √ स्था आदि धातुएँ बड़ी स्पष्ट हैं। अतएव ऐसे तद्भव शब्दों तथा अन्यान्य आगत विदेशी शब्दों को व्याकरणिक दृष्टि से 'अधातुज' मान कर 'मूल शब्द' के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

२. यौगिक शब्द : प्रकृति (free form) प्रत्यय (bound form) के योग से बनने वाले शब्द को यौगिक रूप में ग्रहण किया गया है। प्रत्ययों के मख्यत: दो भेद हो सकते हैं—(१) व्युत्पादक तथा (२) व्याकरणिक। व्याकरणिक प्रत्यय संबंधी विवेचन पद-विचार (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि अध्यायों) में हो चुका है। अतएव यहाँ केवल व्युत्पादक प्रत्यय-विचार प्रस्तुत करना ही अभीष्ट है। व्युत्पादक प्रत्यय वे हैं जो किसी धातु अथवा प्रकृति के पूर्वभाग अथवा परभाग में लगकर यौगिक शब्द-रचना करते हैं। कभी-कभी प्रकृति के दोनों भाग आदि और अंत में प्रत्ययों के योग से अभिनव शब्द निर्मित होते हैं। अस्तु ये व्युत्पादक प्रत्यय भी दो प्रकार के होते हैं—(१) पूर्वप्रत्यय और (२) परप्रत्यय। पूर्वप्रत्ययों को संस्कृत में उपसर्ग तथा पर प्रत्ययों को 'कृत्' एवं 'तद्धित' इन दो वर्गों में रखा गया है, यद्यपि विभक्तियाँ भी एक प्रकार के परप्रत्यय ही हैं। पूर्व या परभाग, साथ ही दोनों ओर लगने वाले प्रत्ययों के उदाहरण शेखावाटी में देखे जा सकते हैं, यथा—कपूत्, सपूत्, अनमोल्, अनजान्, बेईमान्, बचाव्, जमाव्, उड़ाऊ, खाऊ, कमाई, मोतिया, दूधिया, बेईमानी आदि।

३. समास[1] : दो या दो से अधिक मूल शब्दों (free forms) के संयोग से समास का निर्माण होता है। ये संयुक्त होने वाले शब्द क्रिया-धातु रूप में भी हो

---

१. (i) "If atleast one of the immediate Constituents of a word is a bound form the word is a complex, if both of the immediate constituents are free forms, is compound."—Outline of Linguistic Analysis, P. 66.

(ii) " Compound words have two (or more) free forms among their immediate constituents....the forms which we class as compound words exhibit some feature which in their language, characterizes single word in contradiction to phrases."—Language, P. 227.

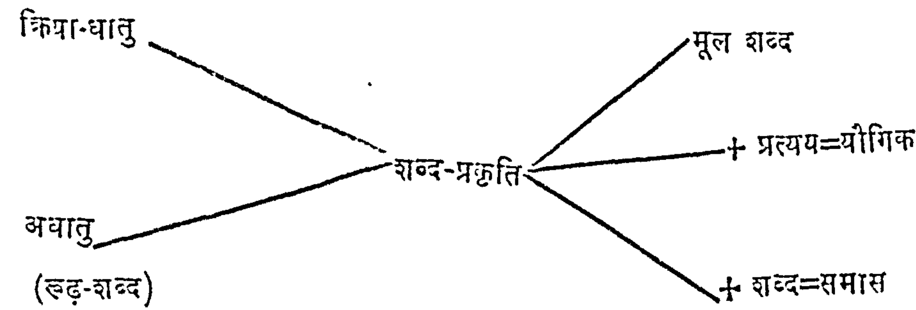
(iii) "A Compound may perhaps be provisionally defined as a combination of two or more words so as to function as a one word as a unit."—A Modern English Grammar, pt. vi, P. 134.

(iv) "दो या अधिक शब्दों का परस्पर संबंध बताने वाले शब्दों अथवा प्रत्ययों का लोप होने पर, उन दो या अधिक शब्दों से जो स्वतंत्र एक शब्द बनता है उस शब्द को सामासिक शब्द कहते हैं, और उन दो या अधिक शब्दों का जो संयोग होता है वह समास कहलाता है।"—पं० कामता प्रसाद गुरु : हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ ४८१।

(v) "जब एक से अधिक शब्द मिलकर वृहत् शब्द की सृष्टि करते हैं तब उसे समास कहते हैं।"—डा० उदयनारायण तिवारी : हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, पृष्ठ ४७१।

सकते हैं और रूढ़ शब्द-रूप में भी अथवा दोनों ही रूपों में हो सकते हैं, यथा खेल्-कूद्, ताड़्-फोड़्, खा-पी, न्हा-धो, हाथ्-पग्, माँ-बाप्, सुख्-दुख्, कनै-कनै (=पास-पास), रसोई-घर्, हँस्-मुख् आदि।

उपर्युक्त शब्द-रचना-विधान तालिका द्वारा निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है—



८. १. मूल शब्द-रचना—केवल धातु या अधातु (रूढ़ शब्द)—रूप-शब्द-प्रकृति ही मूल शब्द के रूप में ग्रहण की गई है। किसी भी प्रकार के प्रत्यय का योग न होने से प्रकृति और मूल शब्द एक रूप होते हैं। दूसरे शब्दों में, केवल प्रकृति ही नये अर्थों के अभिव्यंजक मूल शब्दों की संघटक है। उदाहरण के लिये कुछ मूल शब्द परिगणित किये जा सकते हैं, जिनकी प्रकृति या तो धातु-रूप है या फिर अधातु (रूढ़ शब्द) ही, यथा—बोल् (=ताना), तोल् (=वजन), भूल्, मार् (=ताड़ना), चोर, चिळक् (=चमक), चाल् (=गति), टाळ् (=स्थगन), पिछाण् (=पहिचान), बात्, काम्, नाम्, घर, दिन्, हेली (=भवन), इस्कूल, छोरो, जरा (=थोड़ा), ज्यादा, मैं, तू, म्हें (=हम), थे (=तुम), के (=क्या), किमि (=कुछ) कोई आदि। शेखावाटी में अधातु-रूप शब्द-प्रकृति रखने वाले मूल शब्दों की ही बहुलता है जो संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय आदि शब्दावली के अधिकांश भाग का निर्माण करते हैं।

८. २. यौगिक शब्द-रचना : मूल शब्दों में व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से तत्संबंधी अनेकार्थक शब्दों की रचना होती है। शब्दों की इस संरचना को भाषावेत्ता 'व्युत्पत्ति' नाम से अभिहित करते हैं। यह व्युत्पत्ति-विचार दो दृष्टियों से हो सकता है—(१) ऐतिहासिक दृष्टि से तथा (२) वर्णनात्मक दृष्टि से। यहाँ केवल वर्णनात्मक दृष्टि पर आधारित अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है जैसा कि पूर्व कहा जा चुका है। वर्णनात्मक अध्ययन की दृष्टि से व्युत्पत्ति से तात्पर्य प्रचलित शब्दों के सजीव प्रकृति एवं प्रत्यय-तत्वों के स्पष्टीकरण से है। उदाहरणार्थ—/मोटराळो/ शब्द/ मोटर्/ प्रकृति (रूढ़ शब्द) में/-आळो/ प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न

यौगिक शब्द है जिसका प्रचलन शेखावाटी में विशेषण-रूप में है। /मोटर्/ शेखावाटी की सजीव प्रकृति (free form) है और/ –आळो/ सजीव प्रत्यय (bound form) है। सजीव एवं निर्जीव के मिश्रण प्रकार शेखावाटी में अनेकानेक शब्दों का निर्माण करते देखा जाता है।

प्रकृति में प्रत्यय के योग से यौगिक शब्द-रचना होती है। प्रकृति के आदि या अंत या दोनों भागों में प्रत्यय के योग से शेखावाटी के अनेकानेक शब्द निर्मित होते हैं। आदिभागीय प्रत्यय संस्कृत में उपसर्ग रूप में स्वीकार किया गया है। प्रकृति के संबंध में ऊपर कहा जा चुका है कि यह धातु-रूप में भी हो सकती है और नामानुरूप (मूल शब्द) में भी। प्रत्ययों का योग इन दोनों प्रकार की प्रकृतियों में होता है जिससे शेखावाटी की एक अच्छी-खासी शब्दावली बनती है। अतएव अब आगे शेखावाटी के व्युत्पादक प्रत्ययों पर विचार किया जा रहा है।

८. २. ०. सर्वप्रथम उन प्रत्ययों की परिगणना की जा सकती है जो प्रकृति के आदि भाग में संयुक्त होते हैं। इन्हें पूर्वप्रत्यय-रूप में स्वीकार किया जा चुका है। शेखावाटी में पूर्वप्रत्ययों का प्रयोग संज्ञा, विशेषण, क्रियाविशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं के साथ होता है और इनके संयोग से प्रकृत्यर्थ में विविधता आ जाती है।

८. २. १. पूर्वप्रत्यय[1] (Prefixes) : शेखावाटी-शब्दावली पूर्वप्रत्यय (उपसर्ग) की दृष्टि से दो प्रकार की है—

१. ऐसे शब्द, जिनमें पूर्वप्रत्यय और शब्द-प्रकृति (word-base) बड़े स्पष्ट हैं, यथा—सपूत्-कपूत्, अनमोल्, सरनाम् आदि।

२. ऐसे शब्द, जिनमें पूर्वप्रत्यय ऐतिहासिक दृष्टि से तो बड़े स्पष्ट हैं किन्तु शब्द-प्रकृति स्पष्ट नहीं, यथा—दुबलो, निकर्मो, निहत्यो आदि। इन शब्दों में से यदि पूर्वप्रत्यय (उपसर्ग) दु-, नि- आदि अलग कर दिये जायें, तो बलो, कर्मो, हत्यो आदि शब्द-प्रकृतियाँ भाषा में अन्यत्र कहीं भी स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त नहीं होती हैं। अतएव वर्णनात्मक दृष्टि से इस प्रकार के शब्द यौगिक नहीं माने जा सकते। फलस्वरूप ये मूल शब्दों के अन्तर्गत ही परिगणित हो सकते हैं।

शेखावाटी में व्युत्पादक रचना की दृष्टि से पूर्वप्रत्ययों का विभाजन तीन वर्गों में प्रस्तुत किया जा सकता है—

क. वे पूर्वप्रत्यय जो संज्ञा, विशेषण आदि के पूर्व संलग्न होकर तद्वर्गीय शब्दा-

---

१ 'Prefix', The Categories and types of The present day English word formation, 3.2.1.

वली व्युत्पन्न करते हैं, यथा— /ओ-गुण/=ओगुण्, /स-पूत् /=सपूत्,/ पर-दादो/=परदादो,/ गुण्-तीस् /=गुणतीस (उन्तीस), / अ-कलंकी /=अकलंकी, /कु-मार्गी /=कुमार्गी आदि ।

ख. वे पूर्वप्रत्यय जो संज्ञा, विशेषण या धातु के साथ संयुक्त होकर भिन्न वर्गीय शब्दावली व्युत्पन्न करते हैं, यथा— /अन-मोल् /=अनमोल्, /अन-जाण् /= अनजाण् (अपरिचित), /अ-पढ्=अपढ्

ग. वे पूर्वप्रत्यय जो उपर्युक्त दोनों वर्ग की शब्दावली बनाते हैं अर्थात् संज्ञा, विशेषण, क्रियाधातु मे संयुक्त होकर तद्वर्गीय शब्दावली, साथ ही भिन्न वर्गीय शब्दावली व्युत्पन्न करते हे, यथा— /अ-न्याव् /=अन्याव् (संज्ञा), /अ-चेत् /=अचेत् (विशेषण), /अ-मर् /=अमर् (विशेषण), /कु-मारग्/ =कुमारग् (संज्ञा), /कु-रूप् /=कुरूप् (विशेषण), /कु-पढ् /=कुपढ (विशेषण)

पूर्वप्रत्ययों का यौगिक विधान तथा व्युत्पन्न शब्दावली : पहले कहा जा चुका है कि शेखावाटी में पूर्वप्रत्ययों का संयोग संज्ञा, विशेषण, क्रियाविशेषण और धातुओं के साथ होता हे और उनके योग से संज्ञा, विशेषण, क्रियाविशेषण आदि शब्दावली व्युत्पन्न होती हे । नीचे शेखावाटी के यौगिक विधान को सांगोपांग स्पष्ट किया जा रहा है—

१.	पूर्वप्रत्यय	+	संज्ञा	>	संज्ञा	अर्थ
	अ-		न्याव्		अन्याव्	'हीनता'
	अ-		काल्		अकाल्	,,
	अन-		हित्		अनहित्	'अभाव'
	ओ-		गुण		ओगुण्~ओगण्	,,
	क-		पूत्		कपूत्	'हीनता'
	कु-		मारग्		कुमारग्	,,
	दुर्-		असीस्		दुरसीस्	,,
	पर-		दादो		परदादो	'पूर्वपीढ़ी'
	पर-		देस्		परदेस्	'पराया भाव'
	स-		पूत्		सपूत्	'श्रेष्ठ'
	सर-		पंच		सरपंच	'प्रधानता'
	सर-		नाम्		सरनाम्	,,

२.	पूर्वप्रत्यय	+	संज्ञा	>	विशेषण	अर्थ
	अ-		चेत्		अचेत्	'अभाव'

अ-	थाह्	अथाह्	अभाव
अ-	छूत्	अछूत्	'हीनता'
अन-	मोल्	अनमोल्	'अभाव'
अन-	मेल्	अनमेल्	
कु-	रूप	कुरूप ~ करूप	,,
नि-	डर्	निडर्	'बिना'
नि-	पूत्	निपूत् ~ नपूत्	,,
नि-	रोग्	निरोग्	,,
बे-	काम्	बेकाम्	,,
बे-	रहम्	बेरहम्	,,
बे-	जान्	बेजान्	,,
बे-	ईमान्	बेईमान्	,,
बे-	कसूर्	बेकसूर्	,,
बे-	होस्	बेहोस्	,,
बे-	चैन्	बेचैन्	,,
ला-	जबाब्	लाजबाब्	'निषेध'
स-	रूप्	सरूप्	'सहित, श्रेष्ठ'
सु-	फल्	सुफल्	'श्रेष्ठ'
हम-	दर्द	हमदर्द	'सहित'

३. पूर्वप्रत्यय	+ संज्ञा	> क्रियाविशेषण	अर्थ
बे-	सक्	बेसक्	'रहित, बिना'
बे-	टेम्	बेटेम्	,,

४. पूर्वप्रत्यय	+ विशेषण	> विशेषण	अर्थ
अ-	कलंकी	अकलंकी	'अभाव'
कु-	नामी	कुनामी	'हीनता'
कु-	मार्गी	कुमार्गी	,,
गुण-	तीस्	गुणतीस्	'एक कम'
गुण-	चाळीस्	गुणचाळीस्	,,
गुण-	साठ् (~सठ्)	गुणसठ्	,,
गुण-	अस्सी (~असी)	गणासी	,,
नि-	गुणी	निगुणी	'हीनता'
सर-	नामी	सरनामी	'श्रेष्ठता'

५.	पूर्वप्रत्यय	+	क्रिया धातु	>	संज्ञा	
२	अन-		वन्		अनवन्	'अभाव'
५	कु-		चाल्		कुचाल्	'हीनता'
६.	पूर्वप्रत्यय	+	क्रियाधातु	>	विशेषण	अर्थ
१	अ-		टल्		अटल्	'अभाव'
१	अ-		चूक्		अचूक्	,,
२	अन-		पढ्		अनपढ्	,,
२	अन-		जाण्		अनजाण्	,,
५	कु-		पच्		कुपच्	,,
११	सु-		जाण्		सुजाण्	'श्रेष्ठता'

अस्तु शेखावाटी के प्रमुख पूर्वप्रत्यय/अ-, अन-, ओ- कु~क-, गुण-, दुर्-, नि-, पर-, वे-, ला-, सर-, सु~स-, हम-/ आदि हैं जिनका विवेचन वर्णनात्मक आधार पर हुआ है। इसके अतिरिक्त यदि कोई चाहे तो ऐतिहासिक दृष्टि(यथा – तत्सम,अर्धतत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी आदि) से भी पूर्वप्रत्ययों का विभाजन कर सकता है।

८. २. २. परप्रत्यय[१] : परप्रत्यय ऐसे तत्त्व हैं जो धातु तथा अधातु अर्थात् रूढ़ शब्द (संज्ञा, सर्वनाम, विशेपण आदि) के अन्त में संलग्न होकर तत्सम्बंधी शब्दावली व्युत्पन्न करते हैं। कतिपय प्रत्यय धातु में जुड़कर संज्ञा एवं विशेपण शब्दों की रचना करते हैं, यथा–/लड़्-आई/=लड़ाई,/दे–ऊ/=देऊ (देने का इच्छुक), /खा-ऊ/ =खाऊ,/घूम्-अक्कड़्/=घूमक्कड़् आदि, तो कुछ प्रत्यय रूढ़ शब्दों (संज्ञा, सर्वनाम, विशेपण आदि) में संयुक्त होकर पुनः अनेक प्रकार के संज्ञा, विशेपण, क्रियाविशेपण, धातु आदि शब्दों का निर्माण करते हैं, यथा

/ वंगाल	– ई	>	वंगाली	/ =	वंगाली	(विशेपण)
/ तीस्	-आयो	>	तिसायो	/ =	प्यासा	(विशेपण)
/ आप्	– ओ	>	आपो	/ =	आपा	(संज्ञा)
/ आप् (~अप्)	– ना	>	अपना	/ =	अपना-ना	(धातु)
/ यो (~ इ)	– सो	>	इसो	/ =	ऐसा	(विशेषण)
/ वो (~ उ)	– सो	>	उसो	/ =	वैसा	(,,)
/ यो (~ अ)	– इयाँ	>	अइयाँ	/ =	ऐसे, इस प्रकार	(क्रियाविशेपण)
/ वो (~ व,उ)	– इयाँ	>	वइयाँ, उइयाँ/	=	वैसे,उस प्रकार	(,,)

१- 'Suffix'–The Categories and Types of English word formation 3.1.1.

/ बुरो (~बुर) – आई > बुराई / = बुराई (संज्ञा)
/ लाल(~लल) – आई > ललाई / = ललाई (संज्ञा)

अतः स्पष्ट है कि पर प्रत्यय भी दो प्रकार के हैं—

(i) प्रथम परप्रत्यय : धातु में संलग्न होकर संज्ञाओं और विशेषणों का निर्माण करने वाले प्रत्यय। इस वर्ग के प्रत्यय संस्कृत को दृष्टि में रखकर 'कृत्' कहे जा सकते हैं और इनसे बने शब्द कृदन्त।

(ii) द्वितीय परप्रत्यय : संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों में संलग्न होकर अनुषंगी संज्ञा, विशेषण या धातु को व्युत्पन्न करने वाले प्रत्यय। इस वर्ग के प्रत्यय तद्धित (संस्कृत को दृष्टि में रखकर) कहे जा सकते हैं और इनसे व्युत्पन्न शब्द तद्धितान्त।

८.२.२.१ शेखावाटी के प्रमुख सजीव प्रथम परप्रत्यय (कृत्) निम्न हैं :

(१) {-अक्कड़्}—इसके योग से प्राय : हीनतासूचक विशेषण बनते हैं, यथा–

धातु +	परप्रत्यय	> विशेषण
भूल् (~भुल्-)	-अक्कड़्	भुलक्कड़्
कूद् (~कुद्-)	-अक्कड़्	कुदक्कड़्
घूम् (~घुम-)	-अक्कड़्	घुमक्कड़्

(२) {-अण्}—भाववाचक संज्ञाओं को व्युत्पन्न करता है, यथा–

धातु +	परप्रत्यय	> संज्ञा	
चल्	-अण्	चलण्	=चलन
न्हा	-अण्	न्हाण्	=नहान
जळ्	-अण्	जळन्	=जलन

(३) {-अत्}—इसके संयोग से भाववाचक संज्ञाओं की रचना होती है, यथा–

धातु +	परप्रत्यय	> संज्ञा
बच्	-अत्	बचत्
खप्	-अत्	खपत्

(४) {-आई}—केवल भाववाचक संज्ञा शब्दावली व्युत्पन्न होती है, यथा–

धातु +	परप्रत्यय	> संज्ञा
लड़्	-आई	लड़ाई
पढ़्	-आई	पढ़ाई
चढ़्	-आई	चढ़ाई

तोल (~तुल-)		-आई	तुलाई
कमा		-आई	कमाई
धोल् (~धुल-)		-आई	धुलाई

(५) {-आऊ}—इसके योग से विशेषण शब्द बनते हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>विशेषण
बिक्		-आऊ	बिकाऊ
टिक्		-आऊ	टिकाऊ
कमा		-आऊ	कमाऊ
खा		-आऊ	खाऊ

(६) {-आण्}—भाववाचक संज्ञा शब्दों को व्युत्पन्न करता है, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
मिल्		-आण्	मिलाण्
उठ्		-आण्	उठाण्
लग्		-आण्	लगाण्
चल्		-आण्	चलाण्

(७) {-आळ्}—इसके योग से विशेषण शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>विशेषण
दे (~दि-)		-आळ्	दिआळ्, दिवाळ्
ले (~लि-)		-आळ्	लिआळ्, लिवाळ्

(८) {-आव्}—इसके योग से भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण होता है, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
पाट् (~पट्)		-आव्	पटाव्
घूम् (~घुम्)		-आव्	घुमाव्
बच्		-आव्	बचाव्
चढ्		-आव्	चढाव्
जम्		-आव्	जमाव्

(९) {-ई}—इसके संयोग से भाववाचक संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
हँस्		-ई	हँसी
बोल्		-ई	बोली

फाँस्	-ई	फाँसी
खाँस्	-ई	खाँसी

{-ऊ} —इसके योग से विशेषण शब्दावली बनती है यथा—

धातु +	परप्रत्यय >	विशेषण	
बेच्	-ऊ	बेचू	=बेचने का इच्छुक
दे	-ऊ	देऊ	=देने का इच्छुक
माग्	-ऊ	मागू	=मागने का इच्छुक
खरीद्	-ऊ	खरीदू	=खरीदने का इच्छुक

(११) {-एरो ~ एड़ो} —यह जातिवाचक संज्ञा तथा विशेषण शब्दों का निर्माण करता है यथा—

धातु +	परप्रत्यय >	संज्ञा, विशेषण
बन्	-एरो	बनेरो
लूट्(~लुट्)	-एरो	लुटेरो
माग्(~मग्)	-एड़ो	मगेड़ो

(१२) {-एल्} —इसके योग से विशेषण शब्द व्युत्पन्न होते हैं यथा—

धातु +	परप्रत्यय >	विशेषण
रख्	-एल्	रखेल्
ठोट् (~ठुट्)	-एल्	ठुटेल्

(१३) {-ओ} —यह संज्ञा एवं विशेषण शब्द-रचना में सहायक है यथा—

धातु +	परप्रत्यय >	संज्ञा, विशेषण	
बाज्	-ओ	बाजो	=बाजा
झगड़्	-ओ	झगड़ो	=झगड़ा
छाप्	-ओ	छापो	=छापा, दलवार
डेर्	-ओ	डेरो	=डेरा
चाल्	-ओ	चालो	=चलन
झूल्	-ओ	झूलो	=झूला
बाड़्	-ओ	बाड़ो	=बाड़ा
सां	-ओ	सांयो	=मनुष्य
खो	-ओ	खोयो	=गुम

(१४) {-आंकड़ो} —यह विशेषण शब्दों की रचना करता है यथा—

धातु +	परप्रत्यय >	विशेषण	
हँस्	-आंकड़ो	हँसांकड़ो	=हँसोड़

लड़्	-ओकड़ो	लड़ोकड़ो	=लड़ाकू
[illegible]	-ओड़ो	[illegible]	[illegible]

(१५) {-ट}—इसके योग से भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं, यथा

धातु	+	परप्रत्यय	> संज्ञा	
घबरा		-ट	घबराट	=घबराहट
गुनगुना		-ट	गुनगुनाट	=गुनगुनाहट
[illegible]		-ट	[illegible]	=[illegible]

(१६) {-णो}—इसके जुड़ने से क्रियार्थक संज्ञाओं का निर्माण होता है, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	> क्रियार्थक संज्ञा
उठ्		-णो	उठणो
बैठ्		-णो	बैठणो
आ		-णो	आणो
जा		-णो	जाणो

क्रियार्थक संज्ञा रहने पर भी अपनी क्रिया सम्बन्धी विशेषता को बनाए रखती है और अपना कर्म ले सकती है, यथा—

काम करणो ठीक है।
दूध पीणो अच्छो है।
आम खाणो अच्छो है।

केवल विशुद्ध संज्ञाएँ भी व्युत्पन्न होती हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	> संज्ञा	
ढक्		-णो	ढकणो	=ढक्कन
ओढ़्		-णो	ओढ़णो	=ओढ़नी

इसके अतिरिक्त कृदन्त विशेषण शब्द भी -णो के संयोग से बनते हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	> कृदन्त विशेषण	
रो		-णो	रोणो	=रोना(लड़का)
सो		-णो	सोणो	=सोना(लड़का)
हो		-णो	होणो	=होना (काम)

(१७) {-ती}—इसके योग से भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	> संज्ञा
गिण्		-ती	गिणती
बढ्		-ती	बढती
भर्		-ती	भर्ती

(१८) {-तो}—इसके योग से कृदन्त विशेषण बनते हैं, यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> विशेषण	
सो	-तो	सोतो	=सोता (लड़का)
रो	-तो	रोतो	=रोता (लड़का)
न्हा	-तो	न्हातो	=नहाता (लड़का)
खेल्	-तो	खेलतो	=खेलता (लड़का)

(१९) {-माँ} —यह गुणवाचक विशेषण शब्द व्युत्पन्न करता है यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> विशेषण	
मिल्	-माँ	मिल्माँ	=मिश्रित
खिल्	-माँ	खिल्माँ	=सुंदर, आकर्षक
ढुळ्	-माँ	ढुळ्माँ	=ढालू

(२०) {-नी}—इससे जातिवाचक संज्ञा शब्द बनते हैं, यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> संज्ञा	
कतर्	-नी	कतर्नी	=कैंची
कर्	-नी	कर्नी	=कन्नी
चाळ्	-नी	चाळ्नी	=चलनी

(२१) {-णियो}—इसके योग से संज्ञा (या विशेषण) की रचना होती है, यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> संज्ञा	
खेल्	-णियो	खेलणियो	=खिलाड़ी
रो	-णियो	रोणियो	=रोनेवाला
आ	-णियो	आणियो	=आनेवाला

(२२) {-यो}—इसके योग से विशेषण शब्द बनते हैं, यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> विशेषण	
बँध्	-यो	बँध्यो	=आबद्ध
रूस्	-यो	रूस्यो	=रुष्ट
खुल्	-यो	खुल्यो	=मुक्त

(२३) {-वट्}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

धातु	+ परप्रत्यय	> संज्ञा
थका	-वट्	थकावट्
सजा	-वट्	सजावट
लिखा	-वट्	लिखावट्

मिला	-वट्	मिलावट्
बना	-वट्	बनावट्
रुका	-वट्	रुकावट्

(२४) {-वो}—यह संज्ञा शब्द व्युत्पादक है, यथा—

धातु +	परप्रत्यय	> संज्ञा	
बुला	-वो	बुलावो	=बुलावा
पहना	-वो	पहनावो	=पहनावा
चढा	-वो	चढावो	=भेंट

८. २. २. २. शेखावाटी के सजीव द्वितीय परप्रत्यय (तद्धित) निम्न हैं :

(१) {-अड़्}—इसके योग से संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> संज्ञा
आँध्/ई (~अंध्)	-अड़्	अंधड़्
भाँग् (~भंग्)	-अड़्	भंगड़्
भूख् (~भुक्ख)	-अड़्	भुक्खड़्
गाँठ् (~गट्ठ)	-अड़्	गट्ठड़्

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि इस परप्रत्यय के योग से आधारभूत संज्ञा प्रातिपदिकों में /आ>अ/ ,/आँ>अं/ ,/ऊ>उक्/ तथा /आँ>अट्/ परिवर्तन होते हैं। /ऊ>उक् / तथा /आँ>अट् / परिवर्तन के सम्बंध में कहा जा सकता है कि /ऊ, आ/ का परिवर्तन /उ,अ/ में हो जाता है तथा परवर्ती व्यजंन के पूर्व तद्वर्गीय व्यजंन का आदेश होता है, यथा / भुक्ख/ में /क्/ तथा /गट्ठ/ में /ट्/ तद्वर्गीय व्यजंन हैं।

(२) {-अण्}—इसके योग से स्त्री॰ जातिवाचक संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	>संज्ञा
धोबी (~धोब्)	-अण्	धोबण्
माली (~माल्)	-अण्	मालण्
भंगी (~भंग्)	-अण्	भंगण्
नाई (~ना)	-अण्	नाण् (नाइन)

(३) {-अल्लो}—इसके जुड़ने पर संज्ञा तथा विशेषण शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	>संज्ञा
पूंछ् (~पुछ्)	-अल्लो	पुछल्लो
विशेषण +	परप्रत्यय	>विशेषण
एक् (~इक्)	-अल्लो	इकल्लो

(४) {-आई}—इसके संयोग से संज्ञा शब्दों की रचना होती है, यथा—

संज्ञा + परप्रत्यय	> संज्ञा
लोग् (~लुग्) -आई	लुगाई
ठाकर् (~ठकर्) -आई	ठकराई
विशेषण + परप्रत्यय	**> संज्ञा**
अच्छो (~अच्छ) -आई	अच्छाई
बुरो (~बुर्) -आई	बुराई
खट्टो (~खट्) -आई	खटाई
मीठो (~मिठ्) -आई	मिठाई
साफ (~सफ्) -आई	सफाई

(५) {-आको}—इसके संयुक्त होने पर संज्ञा शब्द बनते हैं, यथा—

संज्ञा	+ परप्रत्यय	> संज्ञा
पट्	-आको	पटाको
धम्	-आको	धमाको
खट्	-आको	खटाको

(६) {-आणो~आनो}—इसके योग से संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+ परप्रत्यय	> संज्ञा
घर्	-आणो	घराणो
सिर्	-आणो	सिराणो
जुर्म	-आनो	जुर्मानो
दोस्त	-आनो	दोस्तानो

(७) {-आणी}—इसके संयुक्त होने पर स्त्री० संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+ परप्रत्यय	> संज्ञा
सेठ् (~सिठ्)	-आणी	सेठाणी, सिठाणी
जेठ् (~जिठ्)	-आणी	जेठाणी, जिठाणी
नोकर्	-आणी	नोक़राणी

(८) {-आँद्}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा व्युत्पन्न होती है, यथा—

संज्ञा + परप्रत्यय	> संज्ञा
कपड़ो (~कपड़)-आँद्	कपड़ाँद् (कपड़ाईंद)

(९) {-आपो}—इससे भाववाचक संज्ञाओं की रचना होती है, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
रांड् (~रंड्)		-आपो	रंडापो
विशेषण	+	**परप्रत्यय**	**>संज्ञा**
बूडो (~बुड्)		-आपो	बुडापो
मोटो (~मुट्)		-आपो	मोटापो, मुटापो

(१०) {-आर्}—इसके योग से कर्तृवाचक संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
चाम् (~चम्)		-आर्	चमार्
मणी (~मणि)		-आर्	मणियार्
सोनो (~सुन्)		-आर्	सुनार्
लोहो (~लुह्)		-आर्	लुहार्

(११) {-आळो}—इसके योग से कर्तृवाचक संज्ञा और विशेषण शब्दों की व्युत्पत्ति होती है,यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>संज्ञा, विशेषण
दूद्		-आळो	दूदाळो
ऊँट्		-आळो	ऊँटाळो
मोटर्		-आळो	मोटराळो

(१२) {-आस्}—इसके संयुक्त होने पर भाव-वाचक संज्ञाओं की रचना होती है, यथा—

विशेषण	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
खारो (~खर्)		-आस्	खरास्
खाटो (~खट्)		-आस्	खटास्
मीठो (~मिठ्)		-आस्	मिठास्
पीळो (~पिळ्)		-आस्	पिळास्

(१३) {-इयो}—इसके संयोग से संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>संज्ञा
आड़त् (~अड़त्)		-इयो	अड़तियो
डाक्		-इयो	डाकियो
जयपुर		-इयो	जयपुरियो
कलकत्तो (~कलकत्)		-इयो	कलकतियो

सिंघाणो (~सिंघाण)	-इयो	सिंघाणियो	=सिंघानिया (सिंघाना स्थान से सम्बंधित)

इसके अतिरिक्त गुणवाचक विशेषण शब्द भी बनते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	>विशेषण	
दूध्	-इयो	दूधियो	=दूधिया
मोती (~मोत)	-इयो	मोतियो	=मोतिया

(१४) {-इस्}—इसके जुड़ने से भाववाचक संज्ञा शब्द बनते है, यथा-

संज्ञा +	परप्रत्यय	>संज्ञा
रंज	-इस्	रंजिस्
पैमानो (~पैमा)	-इस्	पैमाइस्

(१५) {-ई}—(i) इसके योग से विशेषणों की रचना होती है, यथा-

संज्ञा +	परप्रत्यय	>विशेषण
गुलाब्	-ई	गुलाबी
ऊन्	-ई	ऊनी
सूत्	-ई	सूती
बंगाल्	-ई	बंगाली

(ii) इसके योग से ह्रस्वार्थक संज्ञाओं की रचना होती है, यथा-

संज्ञा +	परप्रत्यय	>संज्ञा	
डूंगर्	-ई	डूंगरी	=पहाड़ी
जेवड़ो (~जेवड़्-)	-ई	जेवड़ी	=रस्सी
डिब्बो (~डिब्ब्-)	-ई	डिब्बी	=डिबिया

(iii) इसके योग से भाववाचक संज्ञा शब्दों की रचना होती है, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	>संज्ञा
खेत्	-ई	खेती
चोर्	-ई	चोरी

विशेषण +	परप्रत्यय	>संज्ञा
गरीब्	-ई	गरीबी
बेईमान्	-ई	बेईमानी
होसियार्	-ई	होसियारी, हुसियारी
चलाक्	-ई	चलाकी

(iv) कर्त्तृवाचक संज्ञाओं की रचना में भी {-ई} परप्रत्यय योग देता है, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
तेल्	-ई	तेली
बैर्	-ई	बैरी
पाप्	-ई	पापी

(१६) {-ईन्}—इसके योग से विशेपणों की व्युत्पत्ति होती है, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	विशेपण
रंग्	-ईन्	रंगीन्
नमक्	-ईन्	नमकीन्
सोख्	-ईन्	सोखीन्

(१७) {-ईलो}—इसके योग से विशेषण का निर्माण होता है, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	विशेपण
जहर्	-ईलो	जहरीलो
रस्	-ईलो	रसीलो

(१८) {-उओ}—इसके योग से सम्वंधवाचक कर्तृवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
रांड (~रंड्-)	-उओ	रंडुओ
भाँड़् (~भँड़्-)	-उओ	भँड़ुओ
मच्छी (~मछ्-)	-उओ	मछुओ

(१९) {-ऊ}—इस परप्रत्यय के योग से विशेपण शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा-

संज्ञा	परप्रत्यय >	विशेषण
बजार्	-ऊ	बजारू
ढाळ्	-ऊ	ढाळू
पेट्	-ऊ	पेटू
घर्	-ऊ	घरू

(२०) {-एरो}—इसके योग से संज्ञा तथा विशेपण शब्द बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा,
साँप् (~सँप्-)	-एरो	सँपेरो
बाछो (~बछ्-)	-एरो	बछेरो, बछेड़ो

संज्ञा	परप्रत्यय >	विशेषण
मामो (~मम्-)	-एरो	ममेरो
चाचो (~चच्-)	-एरो	चचेरो

(२१) {-एल्}—इसका संयोग होने पर सम्बंधवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
नाक् (~नक्)	-एल्	नकेल्
फूल् (~फुल्)	-एल्	फुलेल्

(२२) {-एली}—इसका योग होने पर संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
हाथ् (~हथ्)	-एली	हथेली

(२३) {-ओ}—इसके योग से विशेषण शब्द बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	विशेषण
भूख्	-ओ	भूखो
मैल्	-ओ	मैलो

(२४) {-ओई}—इसके योग से सम्बंधवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
भाण् (~भण्)	-ओई	भणोई
नणद्	-ओई	नणदोई

(२५) {-ओट्}—इसके योग से संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
लाँग् (~लँग्)	-ओट्	लँगोट्
भार् (~भर्)	-ओट्	भरोट्

(२६) {-ओड़ो}—इसके योग से संज्ञा प्रातिपदिक (करणवाचक) व्युत्पन्न होता है, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
हाथ् (~हथ्)	-ओड़ो	हथोड़ो

(२७) {-ओलो}—इसके योग से ह्रस्वार्थक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय >	संज्ञा
खाट् (~खट्)	-ओलो	खटोलो

(२८) {-की}—इस परप्रत्यय के जुड़ने पर भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
धम	-की		धमकी
घुड़	-की		घुड़की
पट	-की		पटकी

(२९) {-कार्}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
जै	-कार्		जैकार्
दुत्	-कार्		दुत्कार्
झन्	-कार्		झंकार्
फुँप्	-कार्		फुँप्कार्
फुस	-कार्		फुसकार्
कला	-कार्		कलाकार्
इतिहास	-कार्		इतिहासकार्

(३०) {-गर्}—इसके योग से कर्तृवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
जादू	-गर्		जादूगर्
सोदो (~सोदा)	-गर्		सोदागर्
वाजी	-गर्		वाजीगर्

(३१) {-गार्}—इसके योग से सम्बंधवाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
याद	-गार्		यादगार्
मदद	-गार्		मददगार्

(३२) {-गी}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
बैंद	-गी		बैंदगी
वंद	-गी		बंदगी
मरद् (~मर्द)	-गी		मर्दगी

(३३) {-गीरी}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	>	संज्ञा
नेता	-गीरी		ने[illegible]

कुली	-गीरी	कुलीगीरी
बाबू	-गीरी	बाबूगीरी

(३४) {-ची}—इसके योग से संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> संज्ञा
रजानो (~रजान्)	-ची	रजांची
तबलो (~तबल)	-ची	तबलची
चिलम	-ची	चिलमची

(३५) {-जादो}—इसके योग से संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> संज्ञा
नवाब	-जादो	नवाबजादो
साह (~सह)	-जादो	सहजादो
माळ	-जादो	माळजादो

(३६) {-ड़ो}—इसके योग से संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं जो हेयतासूचक हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> संज्ञा
खाल	-ड़ो	खालड़ो
चाम (~चम)	-ड़ो	चमड़ो
दुख	-ड़ो	दुखड़ो
टूक (~टुक)	-ड़ो	टुकड़ो
जोगी	-ड़ो	जोगीड़ो

(३७) {-दान्}—इसके योग से कर्तृवाचक, पात्रवाचक तथा सम्बंधवाचक संज्ञा शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> संज्ञा
कदर	-दान्	कदरदान्
कलम	-दान्	कलमदान्
पान	-दान्	पानदान्
अतर	-दान्	अतरदान्
खान	-दान्	खानदान्

(३८) {-तणो}—इसके योग से विशेषण प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

सर्वनाम +	परप्रत्यय	> विशेषण
यो (~इ-)	-तणो	इतणो

[illegible] (~ऊ-)	-णो	ऊणो
[illegible] (~जि-)	-णो	जिणो

(३९) {-दार}—इसके योग से विशेषण प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
ईमान		-दार		ईमानदार
जमीन (~जमीं)		-दार		जमीनदार, जमींदार
दुकान		-दार		दुकानदार

(४०) {-णी ~ नी}—इसके योग से स्त्रीवाचक तथा सम्बन्धवाचक संज्ञाएं बनती हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
मोर		-णी		मोरणी
ऊंट		-णी		ऊंटणी
चांद (~चान)		-णी		चानणी
आनन्द		-णी		आणन्दणी, आनन्दणी

(४१) {-णो}—इसके योग से सम्बन्धवाचक संज्ञा शब्द बनता है, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
चांद (~चान)		-णो		चानणो (प्रकाश)

(४२) {-पणो}—इसके योग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा	
नाती		-पणो		नातीपणो	=[illegible]
धोबी		-पणो		धोबीपणो	=धोबीपना
पंडत		-पणो		पंडतपणो	=पंडितपना
विशेषण	**+**	**परप्रत्यय**	**>**	**संज्ञा**	
पागल		-पणो		पागलपणो	=पागलपना
उल्लू		-पणो		उल्लूपणो	=उल्लूपना

(४३) {-ली}—इसके योग से ह्रस्वार्थक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
टिको (~टिक)		-ली		टिकली
ढप		-ली		ढपली
सूत		-ली		सूतली

(४४) {-वाड़ो}—इसके योग से स्थानवाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
आगो (~अग)		-वाड़ो		अगवाड़ो
पीछो (~पिछ)		-वाड़ो		पिछवाड़ो

(४५) {-वान्}—इसके योग से संज्ञा तथा विशेषण शब्द व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
रथ		-वान्		रथवान्
गाड़ी		-वान्		गाड़ीवान्
बाग		-वान्		बागवान्
संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
धन		-वान्		धनवान्
भाग्य (~भाग-)		-वान्		भागवान्

(४६) {-हरो}—इसके योग से गुणवाचक विशेषण बनते हैं, यथा—

विशेषण	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
एक् (~इक-)		-हरो		इकहरो
दो (~दु-)		-हरो		दुहरो
तीन (~ति-)		-हरो		तिहरो

(४७) {-स्}—इसके योग से तिथिवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा—

विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
ग्यारा (~ग्यार-)		-स्		ग्यारस्
बारा (~बार-)		-स्		बारस्
तेरा (~तेर-)		-स्		तेरस्
चौदा (~चौद-)		-स्		चौदस्

(४८) {-ज्}—इसके योग से भी तिथिवाचक संज्ञाएँ बनती हैं, यथा—

विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
दो (~दु)		-ज्		दुज्
तीन (~ती)		-ज्		तीज्

(४९) {-एँ}—इसके योग से भी तिथिवाचक संज्ञा शब्द बनते हैं, यथा—

विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
एक्		-एँ		एकैँ

. C. F. Hockett —Course in Modern Linguistics, 1957.

. C. R. Sankaran —Process of speech, 1963.

. Daniel Jones —An Outline of English Phonetics, 1956.

" —The Phoneme, its nature and use, 1950.

.. E. H. Sturtevant —An Introduction to Linguistic Science, 1956.

2. Edward Sapir —Language, 1949.

3. E. A. Nida —Morphology, 1957.

4. Ferdinand de Saussure —Course in General Linguistics, 1960.

5. George A. Grierson —Linguistic Survey of India, Vol. 9, part II

6. (Rev.) G. Macalister —Survey of the Dialects spoken in the state of Jeypore, 1899.

17. G. V. Tagare —Historical Grammar of Apabhramsa, 1948

18. Government of India, Ministry of Education & Scientific Research. —A Basic Grammar of Modern Hindi, 195.

19. H. A. Gleason —An Introduction to Descriptive Linguistics, 1955.

20. Hans Merchand —The Categories and Types of Present day English Word-formation, 1960.

21. Herald B. Allen —Readings in Applied English Linguistics,

22. Ida C. Ward —A Practical Phonetics for the Students of African Languages, 1949.

" " —The Phonetics English, 1956.

23. I. J. S. Taraporewala —Elements of the Science of Language, 1951

24. J. R. Firth —Papers in Linguistics, 1957.

25. J. Vendryes —Language, 1952.

26. James Tod —Annals and Antiquities of Rajasthan, Vol. II, 1884.

27. John Beames —A Comparative Grammar of the Modern Aryan Languages of India, 1819.

28. John B. Carrol —The Study of Language, 1955.

29. Kenneth L. Pike —Phonemics, 1956.

30. Leonard Bloomfield —Language, 1950.

31. Mario A. Pei & F. Gaynor —A Dictionary of Linguistics, 1954.

32. Martin Joos (Ed.) —Readings in Linguistics, 1958.

33. M. A. Mahandale —Historical Grammar of Inscriptional Prakrits, 1948.

34. M. R. Kale — A Higher Sanskrit Grammar, 1931.
35. M. Khan — A Phonetic & Phonological Study of Word in Urdu, 1957.
36. Otto Jespersen — Modern English Grammar.
37. Prem Swarup Sharma — Facts about Rajasthan, 1960.
38. Roman Jakobson and Morris Halle — Fundamentals of Language, 1956.
39. R. N. Vale — Verbal Composition in Indo-Aryan, 1
40. R. M. S. Heffner — General Phonetics, 1952.
41. S. H. Kellogg — A Grammar of Hindi Language, 1938.
42. Simeon Potter — Modern Linguistics, 1960.
43. S. K. Chatterji — Origin and Development of Bengali Language.
— Indo-Aryan & Hindi, 1942.
44. Sukumar Sen — Comparative Grammar of Middle Indo-Aryan, 1951.
45. Z. S. Harris — Structural Linguistics, 1961

पत्र-पत्रिका

१. इण्डियन लिंग्विस्टिक्स: [illegible] वाल्यूम, १९५७ ई।
२. इण्डियन लिंग्विस्टिक्स: 'टर्नर वाल्यूम' १९५८ ई।
३. परम्परा, भाग ११ तथा १२—प्रकाशक: राजस्थानी शोध-संस्थान, जोधपुर, १९६१।
४. बाम्बे गजेटियर, जिल्द १, भाग १, १८९६ ई।
५. भारतीय साहित्य, क. मु. हिन्दी विद्यापीठ, आगरा, १९५६ तथा १९५७ ई।
६. राजस्थान भारती—श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, १९५३ तथा १९५४ ई।
७. राजपूताना म्यूजियम, अजमेर रिपोर्ट, १९१८-१९ ई।
८. शिक्षा पत्रिका, शिक्षा-विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, अप्रैल, १९६२ ई।

पाँच्	-ऐँ	पाँचैँ
सात्	-ऐँ	सातैँ
आठ्	-ऐँ	आठैँ

(५०) {-मी}—इसके योग से भी तिथिवाचक संज्ञा शब्द बनते हैं, यथा—

विशेषण	परप्रत्यय	> संज्ञा
दस	-मी	दसमी
नौ	-मी	नौमी

(५१) {-हारो}—इसके योग से व्यवसायवाचक संज्ञा प्रातिपदिक बनते हैं, यथा—

संज्ञा	परप्रत्यय	> संज्ञा
लड़ी (~लकड़)	-हारो	लकड़हारो
पाणी (~पणि)	-हारो	पणिहारो

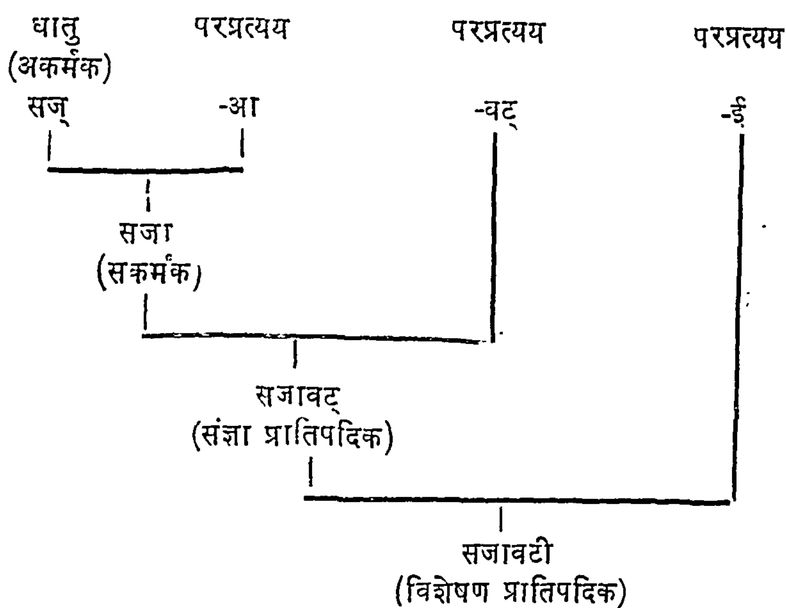
अस्तु शेखावाटी में हिन्दी की भाँति ही परप्रत्ययों का व्यवहार प्रातिपदिकों एवं धातुओं के पश्चात् होता है और उनके योग से अन्य प्रकार के प्रातिपदिक या धातु-रूप व्युत्पन्न होते हैं। उपर्युक्त पूर्व एवं परप्रत्यय के अतिरिक्त शेखावाटी में कतिपय अन्तः प्रत्यय (infix) भी स्वीकार किए जा सकते हैं जिनके योग से धातुओं से प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं, यथा— √मिल् + -ए- > मेल्, √सज् + -आ- > साज् (सजावट), √बढ् + -आ- > वाढ्(वाढ़) इत्यादि। इन उदाहरणों में -ए- तथा -आ- अन्तः प्रत्यय हैं जिनके योग से अन्तः धातु-स्वर (यथा -इ-, -अ-) का लोप होकर मेल्, साज्, बाढ् आदि प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं।

उपर्युक्त प्रत्ययों (पूर्व एवं परप्रत्यय) के विवेचन के उपरान्त यदि हम शेखावाटी के यौगिक शब्द-रचना-विधान में उनका संभावित योग चार्ट द्वारा प्रदर्शित करना चाहें तो इस प्रकार संभव है—

पूर्वप्रत्यय	मूल शब्द	प्रथम परप्रत्यय	द्वितीय परप्रत्यय	उदाहरण
✓	+	×	×	स-पूत् =सपूत्
✓	+	✓	×	बे-चैन-ई =बेचैनी
✓	+	✓	✓	बे-चल्-अन्-ई=बेचलनी
×	+	✓	×	लोग्-आई =लुगाई
×	+	✓	✓	दुकान-दार्-ई =दुकानदारी

इसके अतिरिक्त शेखावाटी में मूल शब्द के बाद अधिकतम तीन परप्रत्ययों तक का योग भी संभव है, पर अत्यल्प मात्रा में ही। वैसे दो परप्रत्ययों के योग के उदाहरण

पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं । यौगिक प्रक्रिया में साथ साथ आने वाले तीन परप्रत्ययों का समीपी सम्बंध निम्न प्रकार से प्रदर्शित हो सकता है—



इसी प्रकार एकसाथ तीन परप्रत्ययों के योग से बनने वाले अन्य विशेषण शब्द लिखावटी, मिलावटी, बनावटी आदि भी हैं ।

८. २. ३. शेखावाटी के परप्रत्यय और उनके वर्ग— मूल शब्दों की सिद्धि की दृष्टि से शेखावाटी में उपलब्ध परप्रत्ययों के निम्न वर्ग हैं—

(१) संज्ञा शब्द व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा	अर्थ
घर्		-आणो		घराणो	घराना
लोग्		-आई		लुगाई	औरत, स्त्री
विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा	अर्थ
गरीब्		-ई		गरीबी	दरिद्रता
मीठो (~मिठ्)		-आस्		मिठास्	मधुरता
धातु	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा	अर्थ
चल्		-अण्		चलण्	प्रचलन
बुला		-वो		बुलावो	बुलावा
बच्		-अत्		बचत्	बचत
क्रिया विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा	अर्थ
जरूर्		-अत्		जरूरत्	आवश्यकता
दूर्		-ई		दूरी	दूरी

इस वर्ग के अन्तर्गत निम्न परप्रत्यय परिगणित हो सकते हैं—

/-अड़्, -अण, -अत्, -अल्लो, -आई, -आको, -आण्, -आणी, -आणो, -आंद्, -आळो, -आपो, -आर्, -आव्, -आस्,-इयो, -इस्, -ई, -ईन्, -उओ,-एरो, -एल्, -एली, -एं, -ओ, -ओई, -ओट्, -ओड़ो, -ओलो, -कार्, -की, -गर्, -गार्, -गी, -गीरी, -ची, -ज्, -जादो, -ट्, -ड़ो, -णियो, -णो, -ती, -दान्, -नी, -पणो, -मी, -ली, -वट्, -वान्, -वाड़ो, -वो, -स्, -हारो/ आदि।

(२) विशेषण शब्द व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	अर्थ
गुलाव्		-ई		गुलावी	रंग विशेष
वंगाल्		-ई		वंगाली	वंगाल का निवासी
सूत्		-ई		सूती	सूत से वना हुआ
ऊन्		-ई		ऊनी	ऊन से वना हुआ
सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	अर्थ
यो (~इ)		-सो,-तणो		इसो, इतणो	ऐसा, इतना
वो (~उ)		-सो,-तणो		उसो, उतणो	वैसा, उतना
विशेषण	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	अर्थ
एक (~इक-)		-हरो		इकहरो	इकहरा
दो (~दु-)		-हरो		दुहरो	दुहरा
चोथो (~चोथ्-)		-आई		चोथाई	चौथाई
धातु	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	अर्थ
रूस्		-यो		रूस्यो	रुष्ट
हँस्		-ओकड़ो		हँसोकड़ो	हंसोड़
जळ्		-ओकड़ो		जळोकड़ो	ईर्ष्यालु
वेच्		-ऊ		वेचू	वेचने का इच्छुक
खा		-ऊ		खाऊ	खाऊ
क्रिया विशेषण	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	अर्थ
ऊपर		-ई		ऊपरी	ऊपरी
नीचैं (~नीच-)		-लो		नीचलो	नीचे वाला
वाहर्		-ई		वाहरी	वाहरी

इस वर्ग के अन्तर्गत परिगणित होने वाले प्रमुख परप्रत्यय ये हैं—/—अवकड़्, —अल्लो, -आऊ, —आळ्, —आळो, —इयो, —ई, —ईन्, —ईलो, —ऊ, —एरो, —एल्, —ओ, —ओकड़ो, —णो, —तणो, —तो, —दार्, —माँ, —यो, —वान्, —हरो/।

(३) क्रिया विशेषण शब्दों के व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	क्रियाविशेषण	अर्थ
यो (~अ-)		-इयाँ		अइयाँ	ऐसे
वो (~उ, व-)		-इयाँ		उइयाँ, वइयाँ	वैसे
धातु	+	परप्रत्यय	>	क्रिया विशेषण	अर्थ
जाण्		-ओ		जाणो	मानो
मान्		-ओ		मानो	मानो
चाह्		-ए		चाहे,चाए	चाहे

इस वर्ग के अन्तर्गत आने वाले परप्रत्यय अत्यल्प हैं, यथा—/--इयाँ, –ए, --ओ/ आदि ।

(४) संज्ञा तथा विशेषण शब्द व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा,	विशेषण
गाडी		-वान्		गाडीवान्	
रथ		-वान्		रथवान्	
धन		-वान्			धनवान्
भाग्य		-वान्			भाग्यवान्

धातु	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा,	विशेषण
वस्		-एरो		बसेरो	
लूट्		-एरो			लुटेरो

इस वर्ग के अन्तर्गत आने वाले परप्रत्यय ये हैं—/ -अल्लो, -आळो, -इयो, -ई, -ईन्, -एरो, -एल्, -ओ, -णो, -वान्/ आदि ।

(५) विशेषण तथा क्रिया विशेषण शब्द व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	>	विशेषण,	क्रिया-विशेषण
सो		-ओ		सोयो	
खो		-ओ		खोयो	
मान्		-ओ			मानो
जाण्		-ओ			जाणो

इस वर्ग का केवल यही एक परप्रत्यय मिल रहा है ।

(६) संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया-विशेषण व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

धातु +	परप्रत्यय	> संज्ञा,	विशेषण,	क्रिया-विशेषण
झगड़्	-ओ	झगड़ो		
झूल्	-ओ	झूलो		
सो	-ओ		सोयो	
खो	-ओ		खोयो	
मान्	-ओ			मानो
जाण्	-ओ			जाणो

इस वर्ग का भी केवल यही परप्रत्यय उपलब्ध है।

(७) क्रिया-धातु व्युत्पादक परप्रत्यय, यथा—

संज्ञा +	परप्रत्यय	> क्रिया-धातु (नाम)	अर्थ
दुख्	-आ	दुखा	दुख देना
सरम्	-आ	सरमा	शर्म खाना
बात् (~बत्-)	-आ	बता	कहना
खट्-खट्	-आ	खटखटा	खटखटाना
गट	-क्	गटक्	गटकना
लप	-क्	लपक्	लपकना
सर्वनाम +	**परप्रत्यय**	**> क्रिया-धातु (नाम)**	**अर्थ**
आप (~अप-)	-ना	अपना	अपनाना
विशेषण +	**परप्रत्यय**	**> क्रिया-धातु (नाम)**	**अर्थ**
गरम्	-आ	गरमा	गर्म होना
हर्यो (~हर्-)	-इया	हरिया	हरा होना
लाल् (~लल्-)	-इया	ललिया	लाल होना
धातु +	**परप्रत्यय**	**> क्रिया-धातु (सकर्मक)**	
हट्	-आ	हटा	—प्रथम प्रेरणार्थक धातु
कर्	-आ	करा	
लिख्	-आ	लिखा	
हट्	-वा	हटवा	
कर्	-वा	करवा	—द्वितीय प्रेरणार्थक धातु
लिख्	-वा	लिखवा	

८. २. ४. परप्रत्यय और उनका यौगिक विकास : [illegible] योग संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया-धातु के [illegible] होता है [illegible] प्रकार के योग से अन्य प्रकार की [illegible] और [illegible] होते हैं [illegible] में सुलभ सम्पूर्ण यौगिक विकास [illegible]

(१)	संज्ञा		परप्रत्यय	>	संज्ञा
	तेल्		-ई		तेली
	रांड (~रंड)		-उओ		रंडुओ
(२)	सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
	आप्		-ओ		आपो
(३)	विशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
	खारो (~खर-)		-आस्		खरास्
	मीठो (~मिठ्-)		-आस्		मिठास्
	गरीब्		-ई		गरीबी
	चलाक्		-ई		चलाकी
(४)	धातु	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
	उठ्		-आव्		उठाव्
	बच्		-अत्		बचत्
	चल्		-अण्		चलण्
	जळ्		-अन्		जळन्
(५)	क्रियाविशेषण	+	परप्रत्यय	>	संज्ञा
	जरूर्		-अत्		जरूरत्
(६)	सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	सर्वनाम
	आप्		-अस्		आपस्
(७)	संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
	सूत्		-ई		सूती
	ऊन्		-ई		ऊनी
	रेसम्		-ई		रेसमी
	ईमान्		-दार्		ईमानदार्
(८)	सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
	यो (~इ-)		-तणो, त्तो		इतणो, इत्तो
	वो (~उ-)		-तणो, त्तो		उतणो, उत्तो
	आपस्		-ई		आपसी
(९)	विशेषण	+	परप्रत्यय	>	विशेषण
	तीन् (~ति-)		-हरो,-गणो		तिहरो, तिगणो
	एक् (~इक-)		-हरो		इकहरो

(१०) धातु	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	
ढाळ्		-ऊ		ढाळू	
मिल्		-माँ		मिल्माँ (मिश्रित)	
खा		-ऊ		खाऊ (बेईमान)	
(११) क्रिया-विशेषण	+	परप्रत्यय	>	विशेषण	
जरूर्		-ई		जरूरी	
बाहर्		-ई		बाहरी	
नीचै (~नीच-)		-लो		नीचलो	
(१२) संज्ञा	+	परप्रत्यय	>	क्रियाधातु	
बात्(~बत्-)		-आ		बता	—नाम धातुएँ
दुख्		-आ		दुखा	
(१३) सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	क्रियाधातु	
आप् (~अप्)		-ना		अपना	—नाम धातु
(१४) विशेषण	+	परप्रत्यय	>	क्रियाधातु	
गरम्		-आ		गरमा	—नाम धातुएँ
नरम्		-आ		नरमा	
हर्यो (~हर-)		-इया		हरिया	
(१५) धातु	+	परप्रत्यय	>	क्रियाधातु	
हट्		-आ		हटा	-प्रथम प्रेरणार्थक धातुएँ
कर्		-आ		करा	
हट्		-वा		हटवा	-द्वितीय प्रेरणार्थक धातुएँ
कर्		-वा		करवा	
(१६) सर्वनाम	+	परप्रत्यय	>	क्रिया-विशेपण	
यो (~अ-)		-इयाँ		अइयाँ	
वो (~उ,व-)		-इयाँ		उइयाँ, वइयाँ	
जो (~ज-)		-इयाँ		जइयाँ	
(१७) धातु	+	परप्रत्यय	>	क्रियाविशेषण	
मान्		-ओ		मानो	
चाह्		-ए		चाहे~चाए	
(१८) क्रियाविशेपण		परप्रत्यय	>	क्रिया-विशेपण	
अठै (~अठि-)		-नैं		अठिनैं	(इधर)
कठै (~कठि-)		-नैं		कठिनैं	(किधर)
बठै (~वठि-)		-नैं		बठिनै	(उधर)

८. ३. समास रचना:

८. ३. ०. एक ओर जहाँ धातु अथवा प्रातिपदिक, प्रत्यय रहित स्थिति में मूल शब्द-रचना तथा प्रत्यय सहित स्थिति में यौगिक शब्द–रचना करते हैं, वहाँ दूसरी ओर एक से अधिक धातु अथवा प्रातिपदिक के संयोग से भी शब्द-रचना होती है, जिसे समास-रचना कहते हैं। समास-रचना करते समय धातुओं अथवा प्रातिपदिकों का परस्पर सम्बंध जोड़ने वाले शब्दों या प्रत्ययों अथवा कारकचिन्हों का प्रायः लोप कर दिया जाता है, यथा– मार-कूट, जाण-पिछाण, माँ-वाप, रसोईघर आदि। इन उदाहरणों में क्रमशः प्रत्येक समास में दो-दो धातुओं तथा प्रातिपदिकों का संयोग हुआ है– प्रथम तीन में समुच्चयबोधक अव्यय शब्द 'और' का तथा अन्तिम सामासिक शब्द में सम्बंध कारक–चिन्ह 'को' (हिन्दी 'का') का लोप करके। कहने का अभिप्राय यह है कि वाक्य में शब्दों का योग समास-रूप में एक शब्द बनकर प्रकट होता है। शेखावाटी में प्रायः दो शब्द-प्रकृतियों के योग से बने समास ही मिल रहे हैं। कारण यह है कि समास और संधि के उपयुक्त जो लोच संस्कृत भाषा में है, उसका यहाँ सर्वथा अभाव है। अब धातुओं तथा प्रातिपदिकों के योग से बनने वाले समासों को पृथक-पृथक परिगणित किया जा रहा है। दो धातुओं के योग से व्युत्पन्न समास निम्न हैं—

८.३.१. धातु	+	धातु	>	समास
हाल्		चाल्		हाल्-चाल्
मार्		कूट्		मार्-कूट्
वोल्		चाल्		वोल्-चाल्
उठ्		वैठ्		उठ्-वैठ्
चल्		फिर्		चल्-फिर्
खेल्		कूद्		खेल्-कूद्
जाण्		पिछाण्		जाण्-पिछाण्
तोड़्		फोड़्		तोड़्-फोड़्
उछल्		कूद्		उछल्-कूद
हल्		चल्		हल्-चल्
धर्		पटक्=		धर्-पटक्

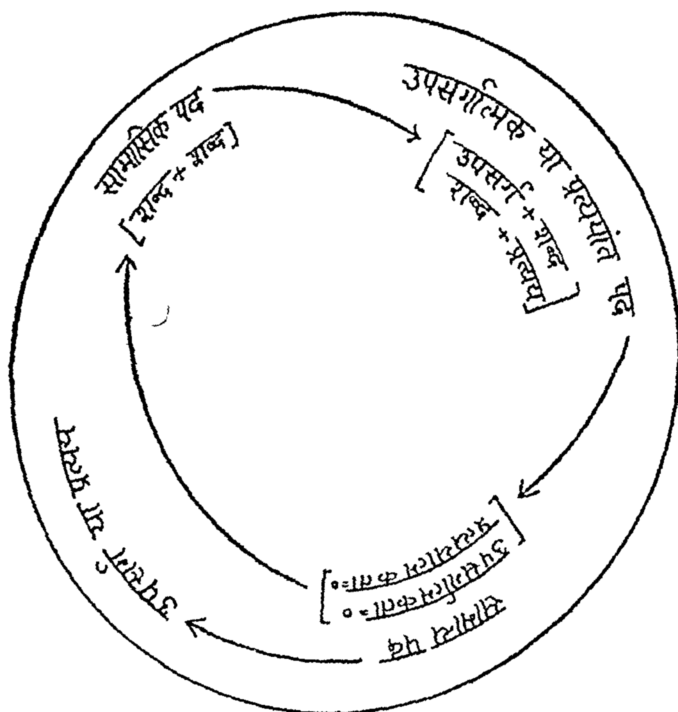
८.३.२. प्रातिपदिक	+	प्रातिपदिक	>	समास
माँ		वेटो		माँ-वेटो
वाप्		वेटो		वाप्-वेटो
माँ		वाप्		माँ-वाप्
भाण्		भाई		भाण्-भाई(=वहिन-भाई)

दिन्	रात्	=दिन्-रात्
सुख्	दुख्	=सुख्-दुख्
हाथ्	मूँ	=हाथ्-मूँ
हाथ्	पैर्	=हाथ्-पैर्
आँख्	कान्	=आँख्-कान्
नाक्	कान्	=नाक्-कान्
सिर्	पैर्	=सिर-पैर
रसोई	घर्	=रसोई-घर
हाथ्(~हथ्, हत्)	कड़ी	=हथकड़ी, हतकड़ी
राज्	कुमार्	=राज्-कुमार्
काम्	चोर्	=काम्-चोर्
लील्	कंठ	=लील्-कंठ
लाल्	पीळो	=लाल्-पीळो
पाप्	पुण्य	=पाप्-पुण्य
अठै	उठै~बठै	=अठै-उठै
भलो	बुरो	=भलो-बुरो

८.३.३. धातु	+	प्रातिपदिक	>समास
हँस्		मुख्	=हँस्-मुख्
८.३.४. प्रातिपदिक	+	धातु	>समास
लीला		धर्	=लीलाधर्
बंसी		धर्	=बंसीधर्
गिरह		कट्	=गिरहकट्
चिड़ी		मार्	=चिड़ीमार्

८. ३. ५. सामासिक प्रक्रिया पर यदि ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाय तो कहा जा सकता है कि भाषा में निरंतर एक ऐसा चक्र चला करता है जिससे सामासिक शब्द में जुड़ने वाले पूर्वापर शब्द घिस-घिसाकर उपसर्ग और प्रत्यय की कोटि में परिणत हो जाते हैं और फिर एक ऐसी भी स्थिति आती है कि उपसर्ग और प्रत्यय को शब्द से पृथक तक नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे भी घिस कर क्षीण जो हो जाते हैं और इस प्रकार आज का सामासिक शब्द एक लम्बी यात्रा के बाद कल का केवल एक साधारण सप्रत्यय-शब्द (यौगिक शब्द) या शब्द (प्रातिपदिक) मात्र ही रह जाता है। फिर यह पता लगाना दुरुह हो जाता है कि किन-किन शब्दों का कब समास हुआ, कब वे घिस-घिसा कर उपसर्ग और प्रत्यय की कोटि में आये और कब उनसे केवल एक सामान्य शब्द ही

रह गया। ऐतिहासिक सामग्री की उपस्थिति में इस क्रम का सम्यक् तारतमिक अध्ययन हो जाये, सो बात दूसरी है। इस ऐतिहासिक प्रक्रिया को निम्न चक्र से प्रदर्शित किया जा रहा है—



८.३.६. सामासिक शब्द > उपसर्गात्मक या प्रत्ययान्त शब्द

सं० सुपुत्र	सपूत्	(स + पूत्)
सं० कुपुत्र	कपूत्	(क + पूत्)
सं० अर्धपक्व:	अद्पको	(अद् + पको)

८.३.७. सामासिक शब्द > सामान्य शब्द

सं० पक्वान्नं	पकवान्
सं० किमपि	किमि
सं० कोऽपि	कोई
सं० पितृ-गृह	पीहर्, पीर्
सं० मुरारि	मुरारी

८.३.८. उपसर्गात्मक या प्रत्यायान्त शब्द > सामान्य शब्द

सं० संध्या	साँज्, संज्या
सं० प्रलय	परलै

सं० उपालंभः	>	ओळमो
सं० निश्चित		नचीत्
सं० कर्म(कृ+मनिन्)		काम्, करम्
सं० धर्म(धृ+मनिन्)		धाम्, धरम्

८.३.९. सामान्य शब्द > उपसर्ग, कारक-चिन्ह तथा परसर्ग

सं० कु (विशेषण)	कु, क
सं० सु (.....)	सु, स
सं० अर्द्ध(..)	अद्
सं० मध्ये (अव्यय)	में (अधिकरण कारक-चिन्ह)
सं० उपरि (अव्यय)	पै, पर् (.. .. ..)
सं० कर्णे (अव्यय)	कनै (पास)-(परसर्ग)

८. ३. १०. पुनरुक्ति प्रधान समास-रचना : विषय-क्रम ८. ३. ०. में उल्लिखित समास-रचना के अतिरिक्त पुनरुक्ति तथा ऐतिहासिक विकास-प्रवृत्ति के कारण ऐसी भी सामासिकता मिल रही है जिसे न यौगिक शब्द-रचना के अन्तर्गत ही स्थान मिल पा रहा है और न वह मुहावरों (Phraseology) के अन्तर्गत ही आ पा रही है। शेखावाटी में यह सामासिकता दो शब्दों से अधिक की नहीं है। इस प्रकार की समास-रचना में प्रथम संयोगी अवयव बोली में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त मिलता है जबकि द्वितीय संयोगी अवयव अपने ध्वनि-विकार के कारण स्वतंत्र शब्द (free morpheme) के रूप में व्यवहृत होते नहीं देखा जाता है। अस्तु उपर्युक्त समास-रचना का अध्ययन निम्न वर्गों के अन्तर्गत व्यवस्थित किया जा सकता है।

(i) समस्त पद क्रिया--

१. सामान्य धातु की पुनरुक्ति से निर्मित समासों में ध्वनि-विकार द्वितीय संयोगी अवयव में ही होता है। ध्वनि-विकार-भेद को दृष्टि में रखकर निम्न दो नियम बनाये जा सकते हैं—

क. ई, ऊ, ए, ऐ तथा ओ > आ, यथा—

पी-पा	=पीना
चीर-चार	=चीरना
छू-छा	=छूना
कूट-काट	=कूटना
दे-दा	=देना
खेल-खाल	=खेलना
बैठ़- बाठ़	=बैठ़ना

सो-सा =सोना

खोल-खाल =खोलना

ख. आ > ऊ, यथा—

आ-ऊ =आना

पा-पू =पाना

खा-खू =खाना

जा-जू =जाना

पाट-पूट =पाटना

चाट-चूट =चाटना

भाग-भूग =भागना

मार-मूर =मारना

२. ह्रस्वीकृत धातु की पुनरुक्ति से व्युत्पन्न समासों में ध्वनि-विकार द्वितीय संयोगी अवयव में होता है अर्थात् उसमें -आ का आगम देखा जाता है, यथा—

बिठ-बिठा =बैठा जाना

चिर-चिरा =चिरना

चुचुर-चुरा =चुरना

खुल-खुला =खुलना

पट-पटा =पटना

भग-भगा =भगना

चल-चला =चलना

(ii) समस्त पद संज्ञा—

१. संज्ञा प्रातिपदिक की पुनरुक्ति से बनने वाले समासों में भी ध्वनिविकार द्वितीय संयोगी अवयव में देखा जाता है। ध्वनि-विकार-भेद की दृष्टि से उपर्युक्त वर्ग की भाँति ही दो नियम बनते हैं—

क. ई, ऊ, ए, ऐ तथा ओ > आ, यथा—

चील-चाल =चील (पक्षी) आदि

बील-बाल =बेल (फल) आदि

टूक-टाक =टुकड़े आदि

दूद-दाद =दूध वगैरा

भूक-भाक =भूख आदि

तेल-ताल =तेल आदि

जेळ-जाळ =जेल आदि

तेली-ताली =तेली वगैरा

खोट-खाट =खोट आदि

छोरो-छारो =लड़के वगैरा

छोरी-छारी =लड़की आदि

चोर-चार =चोर वगैरा

ख. आ > ऊ, यथा—

खाट-खूट =खाट आदि

दाळ-दूळ =दाल आदि

साग-सूग =साग-सब्जी

घाट-घूट =घाट आदि

वाट-वूट =वाट आदि

ताळो-तूळो =ताला आदि

२. संज्ञा प्रातिपदिक की पुनरुक्ति से निर्मित ऐसे भी समास उपलब्ध हैं कि जिनके द्वितीय संयोगी अवयव ध्वनि-विकार की दृष्टि से आदि व्यंजन विहीन देखे जाते हैं, यथा—

रोटी-ओटी =रोटी आदि

साग-आग =साग आदि

भाई-आई =भाई वगैरा

साळो-आळो =साले वगैरा

खुर्सी-उर्सी =कुर्सी वगैरा

किन्तु यदि मुख्य प्रातिपदिक स्वर से आरंभ होने वाला है तो पुनरुक्ति में 'स्' का आगम आदि भाग में हो जाता है, यथा—

आटो-साटो =आटा वगैरा

आलू-सालू =आलू इत्यादि

ईंट-सींट =ईंट वगैरा

ऊँट-सूँट =ऊँट आदि

साथ ही, कुछ अपवाद भी द्रष्टव्य हैं, यथा—

हल्लो-गुल्लो =हल्ला-गुल्ला

झूठ-मूठ =झूठ-मूठ

३. धातु (सामान्य एवं ह्रस्वीकृत) की पुनरुक्ति से व्युत्पन्न समासों के दोनों संयोगी अवयवों में क्रमशः -आ तथा -ई के आगम से 'समस्त पद संज्ञा' बनते हैं, यथा—

पीआ-पीई =

चीरा-चीरी

लूटा-लूटी	=लूटा-लाटी
खेला-खेली	=खेला-खाली
देखा-देखी	=देखा-दाखी
बैठा-बैठी	=बैठा-बाठी
खाया-खाई	=खाने की प्रक्रिया
मारा-मारी	=मारा-मूरी
भागा-भागी	=भागा-भूगी
चाटा-चाटी	=चाटा-चूटी
पटा-पटी	=पटा-पटी
नटा-नटी	=इन्कार करने की प्रक्रिया
भगा-भगी	=भगा-भगी
चिरा-चिरी	=चिराई
खुला-खुली	=खुलाई

इनके अतिरिक्त वर्ग (३) के 'समस्त पद क्रिया' को आधार बनाकर दोनों संयोगी अवयवों से भी क्रमशः -आ और -ई के आगम से 'समस्त पद संज्ञा' बनते हैं, यथा —

पीसा-पाई	=पीसा-पाई
चीरा-चारी	=चीरा-चारी
लूटा-लाटी	=लूटा-लाटी
खेला-खाली	=खेला-खाली
देखा-दाखी	=देखा-दाखी
बैठा-बाठी	=बैठा-बाठी
खोला-खाली	=खोला-खाली
खाना-खूई	=खाने की प्रक्रिया
मारा-मूरी	=मारा-मूरी
भागा-भूगी	=भागा-भूगी
चाटा-चूटी	=चाटा-चूटी
पटा-पटाई	=पटाई
नटा-नटाई	=इन्कार करने की प्रक्रिया
भगा-भगाई	=भगा-भगी
चिरा-चिराई	=चिराई
खुला-खुलाई	=खुलाई (खुलने की प्रक्रिया)

४. कतिपय विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरुक्ति से उत्पन्न समासों के दोनों संयोगी अवयवों में भी क्रमशः -आ तथा -ई के आगम से 'समस्त पद संज्ञा' बनते हैं, यथा—

गर्मा-गुर्मी	=गर्मा-गर्मी
नर्मा-नर्मी	=नर्मा-नर्मी

(iii) समस्त पद विशेषण—

१. कृदन्त विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरुक्ति से व्युत्पन्न समास, यथा—

मार्यो-मार्यो	=मारा-मारा
पीयो-पीयो	=पिए हुए
खायो-खायो	=खाये हुए
बैठ्यो-बैठ्यो	=बैठे हुए
सोतो-सोतो	=सोते हुए
खेल्तो-खेल्तो	=खेलते हुए
बैठतो-बैठतो	=बैठते हुए
मर्तो-मर्तो	=मरते हुए
भाग्तो-भाग्तो	=भागते हुए

२. वर्ग (i) के 'समस्त पद क्रिया' को आधार बनाकर दोनों संयोगी अवयवों में -यो के आगम से 'समस्त पद विशेषण' बनते हैं, यथा—

चीर्यो-चार्यो	=चीरा-चारा
लूट्यो-लाट्यो	=लूटा-लाटा
देख्यो-दाख्यो	=देखा-दाखा
लेयो-लायो	=लिया-लाया
भेयो-भायो	=भीगा-भागा
बैठ्यो-बाठ्यो	=बैठा-बाठा
सोयो-सायो	=सोया-साया
खोल्यो-खाल्यो	=खोला-खाला
मोड़्यो-माड़्यो	=मोड़ा-माड़ा

३. कतिपय विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरुक्ति से व्युत्पन्न समासों के प्रथम संयोगी अवयव में –आ के आगम से 'समस्त पद विशेषण' बनते हैं, यथा—

गर्मा-गरम	=गर्मा-गर्म
नर्मा-नरम	=नर्मा-नर्म

४. शेखावाटी में अत्यल्प ऐसे भी 'समस्त पद विशेषण' समास मिल रहे हैं जिनकी रचना विशेषण प्रातिपदिक की पुनरुक्ति से तो मानी जा सकती है किन्तु प्रथम संयोगी अवयव के आदि में यदि व्यंजन होता है तो पुनरावृत्ति में उसका लोप हो जाता है और 'म्' का आगम कर लिया जाता है, यथा—

टेढ़ो-मेढ़ो =टेढ़ा-मेढ़ा

सीत-मीत =मुफ्त

झूठो-मूठो =झूठा-मूठा

छोटो-मोटो =छोटा-मोटा

अपवाद भी मिल जायेंगे, यथा—

खट्टो-सट्टो =खट्टा-सट्टा

गलत-सलत =गलत-सलत

और प्रथम संयोगी अवयव के आदि में यदि स्वर होता है तो पुनरावृत्ति में उसके पूर्व 'स' का आगम हो जाता है, यथा—

अलग-सलग =अलग-सलग

अनाप-सनाप =अनाप-सनाप

आदो-सादो =आधा-साधा

उल्टो-सुल्टो = उल्टा-सुल्टा

ओळो-सोळो =उल्टा-सीधा

५. विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरुक्ति मात्र से व्युत्पन्न समास, यथा—

लाल-लाल =लाल-लाल

हर्यो-हर्यो =हरा-हरा

काळो-काळो =काला-काला

धोळो- धोळो =सफेद-सफेद

लीलो-लीलो =नीला-नीला

सूदो-सूदो =सीधा-साधा

टेडो-टेडो =टेढ़ा-टेढ़ा

एक-एक =एक-एक

दो-दो =दो-दो

आदो-आदो =आधा-आधा

६. ऐसे भी समास कम नहीं कहे जा सकते जो विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरुक्ति से तो बनते हैं किन्तु पुनरुक्त रूप में ध्वनि विकार करके, जिसके सम्बन्ध में प्रमुख दो नियम बनाये जा सकते हैं—

क. ई, ऊ, ए, ऐ, तथा ओ >आ, यथा—

सीळो-साळो =ठण्डा-वण्डा

भूखो-भाखो =भूखा-भाखा

सूदो-सादो =सीधा-साधा

भेळो-भाळो =इकट्ठा-विकट्ठा

धोळो-धाळो	=सफेद-वफेद

ख. आ>ऊ, यथा—

काळो-कूळो	= काला-वाला
खाटो-खूटो	= खट्टा-वट्टा
खारो-खूरो	= खारा-वारा
न्यारो-न्यूरो	= अलग-सलग

नोट :—ओकारांत 'समस्त पद विशेषण' समास के दोनों ही संयोगी अवयव विशेष्य के लिंग-वचन के अनुसार परिवर्तनशील हैं। इस सम्बन्ध में विशेषण पद-रचना अध्याय के अन्तर्गत ओकारांत विशेषण द्रष्टव्य हैं।

(iv) समस्त पद अव्यय—

१. अनुरणनात्मक संज्ञा प्रातिपदिकों की पुनरावृत्ति से व्युत्पन्न समासों के प्रथम संयोगी अवयव में –आ के आगम से 'समस्त पद अव्यय' बनते हैं, यथा—

फटा-फट	= फटाफट
खटा-खट	= खटाखट
सटा-सट	= सटासट
गटा-गट	= गटागट
झटा-झट	= झटाझट
चटा-चट	= चटाचट
तड़ा-तड़	= तड़ातड़

२. अन्य संज्ञा प्रातिपदिकों की पुनरावृत्ति से निर्मित समासों के प्रथम संयोगी अवयव में -ऊँ (~यूँ) के आगम से भी 'समस्त पद अव्यय' बनते हैं, यथा—

रातूँ~रात्यूँ-रात	= रातों-रात
दिनूँ-दिन	= दिनों-दिन
कानूँ-कान	= कानों-कान
हाथूँ-हाथ	= हाथों-हाथ
बीचूँ~बीच्यूँ-बीच	= बीचों-बीच

३. कतिपय क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों की पुनरावृत्ति मात्र से भी समास-रचना देखी जाती है, यथा—

पाछै-पाछै	= पीछे-पीछे
लैर-लैर	= पीछे-पीछे
गैल-गैल	= पीछे-पीछे
कनै-कनै	= पास-पास
कदे-कदे	= कभी-कभी

[illegible]	= जहाँ-जहाँ
[illegible]	= कहाँ-कहाँ
[illegible]	= सामने-सामने
[illegible]	= साथ-साथ
[illegible]	= आगे-आगे
[illegible]	= आन-आन
[illegible]	= कल-कल

[illegible] जो क्रिया-विशेषण प्राति- [illegible] द्वितीय संयोगी अवयव [illegible] प्रथम संयोगी अवयव [illegible] सामान्य नियम बनाया जा सकता [illegible] 'समस्त पद अव्यय' [illegible] यथा—

[illegible]	= अगल-बगल
[illegible]	= आमने-सामने
[illegible]-सामे	= आमने-सामने
[illegible]	= आस-पास
[illegible]	= अड़ोस-पड़ोस
[illegible]	= इर्द-गिर्द

८. ३. [illegible] समास-रचना-विचार : हिन्दी [illegible] की भांति ही शेखावाटी में [illegible] संयोगी अवयव या तो (१) [illegible] होते हैं। [illegible] इसका द्वितीय पद प्रायः [illegible] यथा—

[illegible]	= काम-काज
काम-[illegible]	= काम-धंधा
[illegible]-आम	= काम-आम
[illegible]	= वस्तु आदि
कपड़ो-[illegible]	= कपड़ा-लत्ता
[illegible]	= पोथी-पत्रा
टाबर-टीकर	= बाल-बच्चे
देख-भाल	= देख-भाल

सूज-बूज	=सूझ-बूझ
हाथा-पाई	=हाथा-पाई
खेल-कूद	=खेल-कूद
सज-धज	=सज-धज
दस-बारा	=दस-बारह

(२) व्यतिरेकी अर्थधारी उभय पद समास, यथा—

सुख-दुख	=सुख-दुख
उल्टो-सीधो	=उल्टा-सीधा
खट्टो-मीठो	=खट मीठा
काळो-पीळो	=क्रुद्ध
नीचो-ऊंचो	=ऊंचा-नीचा
ऊँच-नीच	=ऊँच-नीच
आणो-जाणो	=आना-जाना
धरा-पटकी	=मार-कूट
उठा-बैठी	= उठा-बैठी
ऊठक-बैठक	= कसरत
कहा-सुनी	= कहा-सुनी
धर-पटक	= धर-पटक

अर्थात्मक दृष्टि से शेखावाटी समासों के स्पष्टतः चार वर्ग बन रहे हैं—

(i) प्रथम पद प्रधान समास - अर्थ की दृष्टि से समास का प्रथम पद ही प्रमुख होता है। विषय-क्रम ८ ३. १० में परिगणित पुनरुक्ति प्रधान समास प्रायः इसी वर्ग में स्थान पायेंगे। उदाहरण के लिए कुछ परिगणित किए जा सकते हैं—खेल-खाल, मार-मूर, तेली-ताली, खाट-खूट, रोटी-ओटी, आलू-सालू, टेडो-मेडो, भागतो-भागतो, मार्यो-मार्यो, काम-काज, काम-धाम, चीज-वस्त, भागा-भूगी इत्यादि।

(ii) द्वितीय पद प्रधान समास—अर्थ की दृष्टि से समास का द्वितीय पद ही प्रमुख होता है, यथा—रसोईघर, डाकघर, हथकड़ी, हाथी-दाँत, राजकुमार, कामचोर, हँसमुख, गिरहकट, चिड़ीमार, मुँहतोड़ (~मूँतोड़) इत्यादि।

(iii) उभय पद प्रधान समास—अर्थ की दृष्टि से समास के दोनों ही पद प्रमुख होते हैं, यथा—माँ-बाप, बाप-बेटो, भाण-भाई, रात-दिन, नाच-गाणो, जी-जान, पाप-पुण्य, चिट्ठी-पत्री, सुख-दुख, हाथ-मूं, हाथ-पग, भलो-बुरो इत्यादि।

(iv) अन्य पद प्रधान समास—समासगत पदों के अर्थ से भिन्न अन्य पद के अर्थ की प्रमुखता होती है, यथा—मक्खीचूस, लीलाधर, वंसीधर, बगलो-भगत,

गोबर-गनेस, मारामाड़, हुआहुई, सांम-सवेरे, काळो-पीळो (आक्रोश), चल्तो-पुर्जो, खाण-पाणो (भोग-विलास) इत्यादि।

उपर्युक्त समास-रचना-विचार के अतिरिक्त समासों का अध्ययन अन्य प्रकार के वर्गीकरणों के आधार पर भी किया जा सकता है, यथा—परम्परागत वर्गीकरण--द्वन्द्व, द्विगु, अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, बहुव्रीहि आदि; ऐतिहासिक वर्गीकरण—तत्सम+तत्सम, तत्सम+तद्भव, तद्भव+तद्भव, तद्भव+विदेशी, विदेशी+विदेशी आदि और रूपात्मक वर्गीकरण—संज्ञावाची समास, सर्वनामवाची समास, विशेषणवाची समास, अव्ययवाची समास, क्रियावाची समास आदि। अर्थोत्कर्ष, अर्थापकर्ष, अर्थविनिमय, अर्थ-विस्तार एवं अर्थ-संकोच आदि अर्थप्रक्रियाओं को ध्यान में रखकर अर्थात्मक वर्गीकरण भी संभव है।

-----

९. वाक्य-रचना

९.०. वाक्य कथन की पूर्णता की परिचायक शब्द या शब्दों की एक संयोजित व्यवस्था का नाम है। संयोजित व्यवस्था से अभिप्राय शब्द या शब्दों की सार्थक योजना से है। वाक्य के अन्तर्गत सार्थक एवं साभिप्राय संयोजित शब्द या शब्दों (मुहाविरों-कहावतों, वाक्यांशों आदि) का अनुक्रम होता है अर्थात् कथन को पूर्णता देने वाले ये विविध अंश पारस्परिक सम्बन्ध-सूत्र में आबद्ध होते हुए एक सार्थक तथा साभिप्राय संघटन बनाते हैं। दूसरे शब्दों में, संघटन को बनाने वाले ये विविध तत्त्व संघटक होते हैं। किसी संघटन के समस्त लघुतम संघटकों का पारस्परिक सम्बन्ध समान नहीं होता। कुछ संघटकों में सम्बन्ध-नैकट्य देखा जाता है जो परस्पर संयुक्त होकर किसी अन्य संघटक या संघटकों से निकटस्थ सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं। अस्तु गठन की दृष्टि से संघटनों में विविध सतहों को देखा जा सकता है। किसी भी संघटन के समस्त खण्डध्वनिग्रामानुक्रम का समकालिक संघटक सुरलहर मानी गई है जो भाषा की प्रकृति पर प्रकाश डालती है और जिसके विश्लेषण के लिये यंत्रों की आवश्यकता पड़ती हैं। आधुनिक भाषा तत्त्व-वेत्ता अभिव्यक्ति की इस पूर्णता को आधार न बनाकर वाक्य का परिसीमन करने के लिये समयावकाश सूचक विवृति तथा सुरलहर का आश्रय लेते हैं।[१] वाक्य-रचना सम्बन्धी अध्ययन का क्षेत्र वस्तुतः उतना ही व्यापक है जितना कि पद-रचना का। संघटकों के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन यों तो पद-रचना के अन्तर्गत भी होता है, किन्तु वाक्य-रचना में उसका अपना महत्त्व है। ऐसे संघटक जो प्रत्यक्षतः किसी सम्पूर्ण संघटन या उसके साधक लघु संघटकों की रचना करते हैं, समीपी संघटक कहलाते हैं। इन समीपी संघटकों में पारस्परिक प्रगाढ़ सम्बन्ध रहता है जिससे अर्थ की स्वाभाविकता का निर्वाह होता है। संक्षेप में, वाक्य भाषा में कथन की पूर्णता की परिचायक एक सुगठित इकाई है जो अपने लघुतम रूप में एक शब्द और महत्तम रूप में अनेक शब्दों (मुहाविरों-कहावतों, वाक्यांशों) के संयोजन से बनती है और प्रायः सुरलहर तथा विवृति सम्बन्धी विशेषताओं से आच्छन्न रहती है।

---

१ "In additon, in many languages sentences will be characterized by certain junctural and intonational features. Some Linguists appear to believe, as an article of faith, that this is true of all languages.............. However, the investigator should certainly look for the intonational morphemes which may be found to accompany segmental morphemes to form sentences."

—An Introduction To Morphology And Syntax, P. 82.

इन संघटनों में से प्रथम के अन्तर्गत 'थक्यो-थकायो' संघटक 'वो' संघटक के सम्बन्ध में विधान कर रहा है, किन्तु द्वितीय संघटन में 'थायो-थकायो है' संघटक 'वो' के 'सोने' के कारण-रूप में प्रयुक्त है। अतः इस प्रकार की अभिव्यंजना कोमा (अल्प-विराम) विवृति के माध्यम से स्पष्ट की जाये तो अनुचित न होगा। कथन में पूर्ण विराम-रूप विवृति वाक्य की सीमान्त-स्थिति की दृष्टि से आवश्यक है। साहित्यिक भाषा में समुपलब्ध अन्यान्य चिन्ह जैसे डैश, हायफन, सेमीकोलन, कोलन आदि संभवतः ऐसे अलंकरण हैं जिनसे कथनों के बीच भिन्नता स्पष्ट की जाती है। कथ्य-रूप में सुरलहर इस कार्य की स्थानापन्न देख पड़ती है, यथा —

(vii) वो आदमी बण कै चालै = वह, शरीफ बन कर चलता है या वह शराफत का जीवनयापन करता है।

(viii) वो आदमी बण कै चालै = वह आदमी, पाखण्ड करता है।

९. ३. वाक्य-वर्ग सर्वेक्षण—वाक्य को कथन की पूर्णता की परिचायक एक संयोजित व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया गया है। कथन के स्वाभाविक प्रवाह में तीन चार पदों वाला वाक्य ही व्यवहृत होता है, यथा—एक मोट्यार थो। वैंकै दो छोरियाँ थी। दोनूं पढ्या करती। माँ-बाप बणका चाव करता। किन्तु कभी-कभी क्षिप्रता के कारण कथन-प्रवाह में ऐसे एकाधिक संघटन सम्मिलित होकर श्रुतिगत होते हैं जो संयोजक तत्त्वों से प्रायः संयोजित रहते हैं और रूपान्तरित सुरलहर सहित जान पड़ते हैं। फलतः, वाक्यों के प्रथमतः दो प्रमुख वर्ग निर्धारित किये जा सकते हैं—१. स्वतंत्र (Independent) और २. सम्बद्ध (Dependent)।

९. ३. १. स्वतंत्र वाक्य—स्वतंत्र वाक्य से अभिप्राय कम से कम एक स्वतंत्र संघटन रखने वाले तथा अग्रगामी वाक्य के साथ किसी प्रकार के सम्बन्धवाची संयोजक तत्व से आबद्ध न होने वाले वाक्य से है। स्वतंत्र वाक्य के स्पष्टतः तीन प्रभेद हो सकते हैं—

(i) सामान्य (Simple) स्वतंत्र वाक्य—सामान्यतः उद्देश्य एवं विधेय के रूप में दो रचनात्मक संघटक अवश्य प्राप्त होते हैं। इन्हें महत्तम समीपी संघटक (Major Immediate Constituents) भी कहा जा सकता है।[1] उद्देश्य एवं विधेय की स्थितियों को

१—"A Linguistic study of word arrangement in Sentence Groups of standard Hindi"—
डा० जे० पार्थसारथि, शिक्षा पत्रिका, अप्रैल, १९६२, पृ० ६९।

स्पष्ट करने वाले सामान्य स्वतंत्र वाक्यों के कुछ वर्गीकृत उदाहरण निम्न हैं—

कर्तृ प्रयोग—

अ. छोरो रोवै है =लड़का रोता है।
छोरो सोणो है =लड़का सुन्दर है।
छोरो वेकूफ है =लड़का मूर्ख है।
छोरो आयो =लड़का आया।

साथ ही,

छोरो मोटर नैं देखै =लड़का मोटर देखता है।
छोरो सांप देख्यो =लड़के ने साँप को देखा।

कर्म-कर्तृ प्रयोग—

आ. लीची खवै है =लीची खाई जा रही है।
लीची सड़ी है =लीची सड़ी हुई है।
लीची धरी है =लीची रखी हुई है।

कर्म-भावे प्रयोग—

इ. (वैंको) खाणो होर्यो है।=(उसका) खाना हो रहा है।
(वैंकी) सुवाई होरी है।=(उसकी) सुलाई हो रही है।

उपर्युक्त वाक्यों में या तो 'छोरो' क्रिया का सम्पादक कर्त्ता या फिर उसके सम्वंध में कुछ विधान किया गया है। 'लीची' वाले वाक्यों में 'लीची' के सम्वंध में विधान है अर्थात् यह यथार्थ कर्त्ता न होकर व्याकरणिक कर्त्ता है। तीसरे वर्ग में 'खाणो' और 'खुवाई' के सम्बंध में कुछ कहा गया है ; अतएव व्याकरणिक कर्त्ता है।

सामर्थ्य एवं असामर्थ्य बोधक वाक्यों का निम्न वर्ग भावे प्रयोग के अन्तर्गत ही वनता है, यथा—

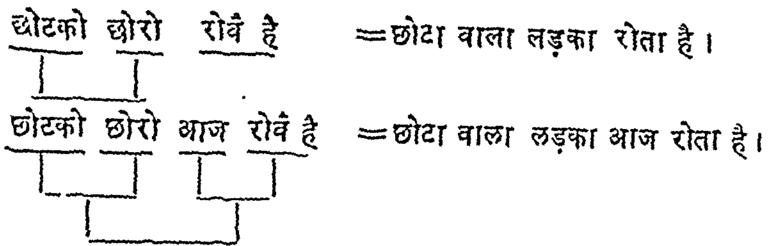
ई. मेरसैं चढता वणै =मुझसे चढ़ते वनता है।
(मेरसैं, वणै — १: चढता)

मेरसैं चढता कोनी वणै=मुझसे चढ़ते नहीं वनता।
(मेरसैं, कोनी वणै — १: चढता)

सामान्य स्वतंत्र वाक्य-संघटन—

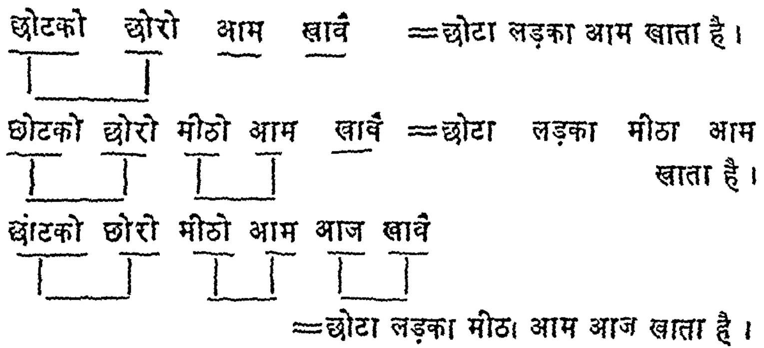
१- उद्देश्य + विधेय (अकर्मक क्रिया युक्त)
छोरो रोवै है =लड़का रोता है।

इन दोनों संघटकों का, समीपी संघटकों के योग से वृहत् संघटन सदैव संभव है, यथा—

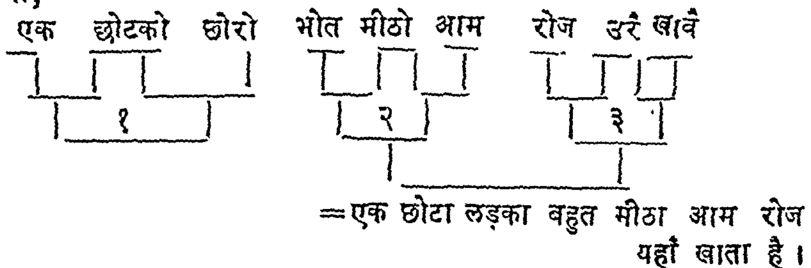


२- उद्देश्य + कर्म + विधेय (सकर्मक क्रिया युक्त)
छोरो आम खावै =लड़का आम खाता है।

इन तीनों संघटकों का, समीपी संघटकों के योग से वृहत् संघटन सदैव संभव है, यथा—

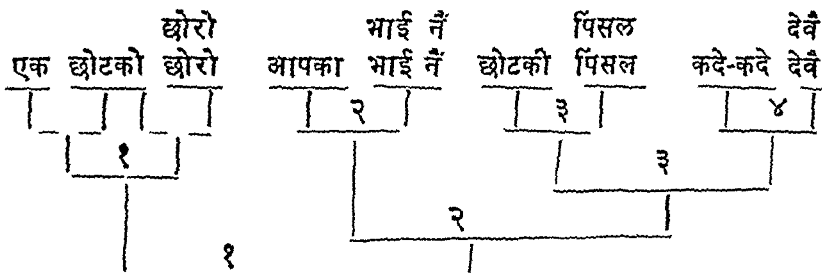


और भी,



=एक छोटा लड़का बहुत मीठा आम रोज यहाँ खाता है।

इसके अतिरिक्त द्विकर्मक क्रियाओं की उपस्थिति से और तत्सम्बन्धी समीपी संघटकों के योग से एक महत्तम सामान्य स्वतंत्र वाक्य संघटन सम्भव है, यथा—



विशेष—उपर्युक्त संघटकों का क्रम शैलीगत (Stylistic) प्रयोगों के कारण विशृंखलित भी हो सकता है किन्तु विशृंखलित क्रम में बलाघात

(Stress) का समावेश अवश्येव हो जाता है। विषय क्रम ९. ४. १° में इस सम्बन्ध में चर्चा की जाएगी। इसके अतिरिक्त शैलीगत प्रयोगों में हम प्रश्नवाचक वाक्यों को भी मान्यता दे सकते हैं। ऐसे वाक्य का संघटन प्रश्नवाची हो सकता है अथवा वे प्रश्नवाची सुरलहर संघटक-युक्त सामान्य स्वतंत्र संघटनों को अपने में समेट सकते हैं, यथा—

मोहन घर जार्यो है | =मोहन घर जा रहा है, क्या यह सही है ?

अर्थात् यह एक प्रकार का ऐसा प्रश्नवाचक वाक्य है जिसका मूलाधार एक स्वतंत्र संघटन है जिसमें एक प्रकार का प्रश्नवाची सुरलहर संघटक संयुक्त हो गया है।

(ii) सहयोगी वाक्य (Coordinate Sentences)—यदि वाक्य की रचना एकाधिक स्वतंत्र संघटनों के योग से होती है तो उनमें सामान्यत: एक प्रकार का सम-स्तरीय सम्बन्ध देखा जाता है। इस प्रकार के सम्बन्ध विविध ढंग से प्रदर्शित किए जा सकते हैं।

कभी दो स्वतंत्र संघटन सुरलहर से एक साथ आवद्ध रहते हैं—

वो एकदम ठीक है आपाँ चालाँ | =वह एकदम ठीक है हम-तुम चलें।

अर्थात् (एक प्रकार का) सहयोगी वाक्य एक स्वतंत्र संघटन और असीमान्त सुरलहर के योग से वना है जिसका परवर्ती संघटन भी एक स्वतंत्र संघटन है किन्तु सीमान्त सुरलहर के साथ। अन्य शब्दों में, परवर्त्ती स्वतंत्र संघटन मुख्य संघटन के रूप में है जबकि पूर्ववर्त्ती स्वतंत्र सघटन सहयोगी संघटन के रूप में।

इसके अतिरिक्त सहयोगी वाक्य संयोजक संघटकों से आवद्ध भी देखे जाते हैं जबकि दो स्वतंत्र संघटनों का संयोजन होता है, यथा—

वो छोरा नै पढ़ावै है पण छोरो पढै कोनी
१ २

=वह लड़के को पढ़ाता है पर लड़का पढ़ता नहीं।

मैं बठै गयो अर तू अठै आयो
१ २

=मै वहाँ गया और तुम यहाँ आए।

इस प्रकार के वाक्यों में सुरलहर-वैविध्य सदैव संभव रहता है।

(iii) आश्रित वाक्य (Subordinating Sentences)—आश्रित वाक्यों की रचना प्राय: एक स्वतंत्र तथा एक सम्वद्ध संघटन के योग से होती है, यथा—

(१) जैं तू काम कर देवैंगो तू बोळा रुपिया पावैंगो

२ (सम्वद्ध संघटन) — १ (स्वतंत्र संघटन)

=यदि तुम काम कर दोगे, तुम्हें बहुत धन मिलेगा।

(२) मैं तनैं पीसा देऊँगो जैं तू मन लगाकर पढ़ैगो

१ (स्वतंत्र संघटन) — २ (संवद्ध संघटन)

=मैं तुम्हें पैसे दूँगा यदि तुम मन लगाकर पढ़ोगे।

९. ३. २. सम्वद्ध वाक्य (Dependent Sentences)—सम्वद्ध वाक्य से अभिप्राय उस वाक्य से है जो न तो स्वतंत्र संघटन रखता है, न उच्चस्तरीय रचना के आरम्भ में स्थानापन्न हो सकता है और न ही सीमान्त सुरलहर धारण करता है। ऐसे वाक्य अपने पूर्व प्रसंग से सम्वद्ध होते हैं। इनके चार सामान्य प्रभेद विचारणीय हैं—संलापात्मक, व्याख्यात्मक, अनुक्रमात्मक तथा वाधित।

(i) संलापात्मक सम्वद्ध वाक्य (Response Dependent Sentences)—संभवत: सर्वाधिक सर्वप्रचलित ऐसे वाक्य होते हैं जो वार्तालाप के आश्रित अंगों के रूप में होते हैं। संलाप खाली शब्दों में, मुहावरों-कहावतों में, सम्वद्ध संघटनों में अथवा शब्दांशों में हो सकता है। निम्न उदाहरण दर्शनीय है—

(१) "मेरै घर सैं थे कठै गया था ?" ="मेरे घर से आप कहाँ गये थे ?"

(२) "दुकान" = "दूकान"

(३) "वैंकै वाद ?" = "उसके वाद ?"

(४) "वजार" = "वाजार"

(५) "वजार ?" = "क्या वाजार ?"

(६) "हाँ, वजार" = "हाँ, वाजार।"

उपर्युक्त वाक्यों में (२), (३), (४), (५), तथा (६) वाक्य संलापात्मक प्रकार के सम्वद्ध वाक्य हैं जो शव्दानुक्रमों से विरचित हैं। वस्तुत: शेखावाटी में प्रत्येक समुचित सुरलहर के साथ प्रयुक्त होता है। वाक्य (६) दो कार्यकारी सम्वद्ध वाक्यों के रूप में भी विचारणीय है जो एक (वाक्य-स्तरीय) सुरलहर के द्वारा आवद्ध हैं।

(ii) व्याख्यात्मक सम्बद्ध वाक्य (Addition Dependent sentences) व्याख्यात्मक सम्बद्ध वाक्य भी खाली शब्दों, मुहावरों-कहावतों या सम्बद्ध संघटनों के योग से बन सकते हैं। यद्यपि कभी किसी भाषा में, गठन की दृष्टि से, ये संलापों से पूर्णतः भिन्न हो सकते हैं। वे सामान्यतः अपने पूर्ववर्त्ती वाक्य से सम्बद्ध होते हैं और पुनर्विचार के रूप में या पूर्व कथन का स्पष्टीकरण करते दिखाई पड़ते हैं, यथा—

के तू गांव जावै है ? मेरो मतलब सिघाणै ?

=क्या तुम गाँव जा रहे हो ? मेरा मतलब सिघाने गांव को ?

मैं ऐंनै पसंद करतो ? एं छोटकी नै ?

=क्या मैं इसको पसंद करता ? इस छोटी वाली (वस्तु) को ?

तू मनैं के पढावै है ? सोळा दूणी आठ ?

=तुम मुझे क्या पढ़ाते हो ? सोलह दूनी आठ ?

यह पूर्व निश्चित है कि ये वाक्य समुचित सुरलहर के साथ ही प्रयुक्त होते हैं।

(iii) अनुक्रमात्मक (Sequence) वाक्य—इस कोटि के वे वाक्य हैं जो अनुक्रमवाची संघटक यथा— ओर बी, साथ ई, दूसरी तरफ, खासकर, पण्, पर, अर, जैं कै वास्तै, जद्, तव, ऐं तराँ, ऐं तरियाँ (इस प्रकार) इत्यादि से युक्त स्वतंत्र संघटन को आत्मसात करते हैं। अस्तु, "दूसरी तरफ, वैं नैं नाचणो बी पड़्यो" वाक्य में विश्लेषण करते समय हमें तीन संघटक तत्त्व दिखाई पड़ते हैं—एक अनुक्रम वाची संघटक तत्त्व 'दूसरी तरफ,' एक आधार संघटक तत्त्व (स्वतंत्र संघटन) 'वैंनैं नाचणो बी पड़्यो' और अन्तिम सुरलहर संघटक तत्त्व जो वाक्य के आद्यन्त आच्छन्न है।

इसके अतिरिक्त दूरवर्त्ती तथा निकटवर्ती सकेतवाचक सर्वनाम शब्दों से आरम्भ होने वाले वाक्य भी इसी कोटि में परिगणित हो सकते हैं जिसको वाटर-हाउस ने 'स्थानापन्न' (Substitutional) नाम दिया है।

(iv) वाधित (Interrupted) वाक्य— कथन-प्रवाह में कभी-कभी ऐसे भी वाक्य देखे जाते हैं कि वक्ता वाक्य को शुरू तो करता है पर इस निश्चय के कारण कि वह अन्य ढंग से अभिव्यक्ति करे तो ज्यादा अच्छा हो, वह बीच में ही वाक्य तोड़ देता है अथवा कभी किसी एकाएक ध्यानाकृष्ट करने वाले क्रियाकलाप के कारण भी कथन-प्रवाह में अवरोध आ जाता है।

इस प्रकार के वाक्यों का पृथक वर्ग बना कर विश्लेषण हो तो असंगत न होगा। निस्संदेह ये वाक्य के अपूर्ण अंश, संभ्रमात्मक समारंभ, Parenthetical अभिव्यक्तियाँ ही होती हैं। सामान्यत: इस कोटि के वाक्य एक आधार (संघटन) और किसी एक प्रकार की सुरलहर के योग से बनते हैं।

९. ४.पद-व्यवस्था : वाक्य-रचना के अन्तर्गत पद-व्यवस्था का अध्ययन कई प्रकार से हो सकता है। पहले कहा जा चुका है कि पद-रूप-संघटक वाक्य में अपनी एक संयोजित व्यवस्था रखते हैं। अतएव इस व्यवस्था के विश्लेपण के अनेक आधार बन सकते हैं। यहाँ क्रमश: सभी वैज्ञानिक आधारों के आधार पर पद-व्यवस्था का अध्ययन किया जा रहा है।

९. ४. १. समीपी संघटकों के विभाजन के आधार पर, सर्वप्रथम, पद-व्यवस्था का एक सामान्य परिचय दिया जा रहा है। कहने की आवश्यकता नहीं, इस प्रकार के अध्ययन के लिए अनिवार्यत: एकाधिक संघटकों का संघटन होना चाहिए। कोई संघटन जिन दो या दो से अधिक संघटकों के योग से बनता है तो उनमें प्रत्येक समीपी संघटक होता है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय बात यह है कि समीपी से अभिप्राय स्थानगत सामीप्य रखने से नहीं, अर्थगत सामीप्य रखने से है। यथा— पाँच था आदमी (=पाँच थे आदमी) इस वाक्य में यद्यपि 'पाँच' तथा 'आदमी' स्थान की दृष्टि से सामीप्य नहीं रखते, पर अर्थ की दृष्टि वे परस्पर निकट हैं। अत: इस वाक्य में 'पाँच' और 'आदमी', 'पाँच आदमी' संघटन के संघटक है और पुन: ये दोनों मिलकर पाँच था आदमी' वाक्य या संघटन के समीपी संघटक हैं। दूसरी ओर 'छोरा म्हारा है' (=लड़के हमारे हैं) संघटन में 'म्हारा' और 'है' स्थान की दृष्टि से निकटस्थ हैं, पर अर्थ की दृष्टि से नहीं; अतएव ये समीपी संघटक नहीं कहे जा सकते। इस वाक्य में प्रथम स्तर पर समीपी संघटकों की तीन इकाइयाँ मानी जा सकती हैं—'छोरा', 'म्हारा' तथा 'है'। किन्तु द्वितीय स्तर पर दो इकाइयाँ ही बनती हैं— 'छोरा म्हारा' या 'म्हारा छोरा' तथा 'है'।

उपर्युक्त प्रकार के वाक्य शेखावाटी के शैलीगत प्रयोग हैं और इस प्रकार शैलीगत वाक्यों में, निस्संदेह, कहा जा सकता है कि पद-व्यवस्था अपने भाषागत स्वाभाविक संघटन में नहीं मिलती, साथ ही इस प्रकार की विशृंखलित शैलीगत पद-व्यवस्था बलात्मकता लिये हुये रहती है जो भावों की विविधता की अभिव्यक्ति कर सकती है, यथा—

म्हे आम खायो =हमने आम खाया।

१—An Introduction to Morphology And Syntax, P. 125, 18. 4. 3.

खायो म्हे आम =हमने आम खाया ही।

आम म्हे खायो =आम हमने ही खाया।

आम खायो म्हे =वस्तुत: आम हमने ही खाया।

यहाँ इस प्रकार के शैलीगत प्रयोगों को आधार न बना कर भाषा के स्वाभाविक वाक्य-संघटन के आधार पर ही अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। वाक्य-संघटन का समीपी संघटकों के आधार पर विश्लेषण करके पद-व्यवस्था सम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते है, यथा—

१—

म्हारो	बड़ो	छोरो	बोली	मारै	है

१. म्हारो बड़ो छोरो बोली मारै है।

२—

रामू	की	छोरी	राधा	आज	कलम	सैं	लिखै	है

२. रामू की छोरी राधा आज कलम सैं लिखै है।

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रत्येक संघटन में दो संघटक हैं, किन्तु समीपी संघटक की दृष्टि से उनका विभाजन विविध स्तरों पर उक्त ढंग से होगा।

'समीपी संघटक' की दृष्टि से उपर्युक्त विभाजन देख कर स्पष्ट होता है कि कई स्तरों पर समीपी संघटकों को पृथक किया जा सकता है। समीपी संघटक पद-क्रम पर आधारित है। वाक्य में समीपी संघटकों का बड़ा महत्त्व है। अर्थ की प्रतीति इन्हीं की व्यवस्था के आधार पर होती है। भाषा-भाषी प्रत्यक्ष-प्रच्छन्न इससे परिचित रहता है। यदि ऐसा न हो तो वह अर्थ कैसे समझे?

यहाँ यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि भाषा सर्वत्र अपने अर्थ स्पष्ट नहीं कर पाती। ऐसे स्थलों पर समीपी संघटकों का सम्यक् विभाजन कर पाना कुछ दुस्साध्य होता है। उदाहरणार्थ यदि यह वाक्य लें—"लाल कागच अर पिंसल धरी हैं" तो इसमें यह कहना कठिन है कि "लाल" विशेषण केवल 'कागच' के लिए है अथवा 'कागच अर पिंसल' दोनों के लिये। यदि केवल 'कागच' के लिये है तो समीपी संघटक का विभाजन इस प्रकार होगा—

लाल	कागच	अर	पिंसल

किन्तु यदि दोनों के लिये है तो अन्य प्रकार से विभाजन होगा—

लाल	कागच	अर	पिंसल

इस सम्बन्ध में एक और बात भी उल्लेखनीय है। 'वाक्य-सुर' भी समीपी संघटक होता है, क्योंकि बिना इसके कभी-कभी सही अर्थ की प्रतीति में बाधा पड़ती है। 'रमेस बात की' (=रमेश ने बात की) वाक्य को वाक्य-सुर के आधार पर प्रश्नसूचक, विस्मयसूचक अथवा सामान्य इन तीन रूपों में देखा जा सकता है। यहाँ तीनों में ही विविध प्रकार के वाक्य-सुर वाक्य के समीपी संघटक होंगे।

९. ४. २. इस प्रकार भाषागत स्वाभाविक वाक्य-रचना के आधार पर कहा जा सकता है कि वाक्य में प्राप्त होने वाले पद एक सुनिश्चित व्यवस्था रखते हुये परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। उनके इन व्यवस्था-सम्बन्धों को 'सामान्य वाक्य' के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि सामान्य वाक्य में दो रचनात्मक संघटक—उद्देश्य एवं विधेय अनिवार्य हैं। इन्हें ऊपर 'महत्तम समीपी संघटक' भी कहा गया है। इन दोनों संघटकों को पृथक-पृथक नीचे स्पष्ट किया जा रहा है—

उद्देश्य : संज्ञापरक (Nominals) होता है। संज्ञापरक अर्थात् संज्ञा या संज्ञा के स्थानापन्न जैसे सर्वनाम, विशेषण, क्रिया-विशेषण, संज्ञा-कृदन्त या कोई वाक्यांश, यथा—

राधा आच्छी है	=राधा अच्छी है। [संज्ञा]
या आच्छी है	यह अच्छी है। [सर्वनाम]
वड़ली आच्छी है	=बड़ी (बहन) अच्छी है। [विशेषण]
वार आच्छी है	=बाहर अच्छी है। [क्रिया-विशेषण]
जयपुर की रहवाळी आच्छी है	=जयपुर की रहने वाली अच्छी है। [संज्ञा-कृदन्त]
बडाँ की सीख आच्छी है	=बड़े लोगों का कहना अच्छा है। [वाक्यांश]

विधेय : क्रिया प्रधान होता है। इसमें सामान्य, संयुक्त एवं अपूर्ण सभी क्रिया-रूप आ जाते हैं। यथा—

वो जावै है	=वह जाता है	[सामान्य]
वो बोली मारै	=वह व्यंग्य करता है	[संयुक्त]
वो दर्जी थो	=वह दर्जी था	[अपूर्ण]

उद्देश्य (कर्त्ता) तथा विधेय (क्रिया) को असाधारण रूप से विस्तार भी दिया जा सकता है। विस्तारक अवयव निम्न हैं-

१. विशेषण-परक शब्दावली (Adjectivals)-

(i) सामान्य, संख्यावाचक तथा सर्वनाममूलक विशेषण—

छोरो आवै है	=लड़का आता है।
वडो छोरो आवै है	=वड़ा लड़का आता है।
च्यार वडा छोरा आवै है	=चार बड़े लड़के आते हैं।
इत्ता बडा च्यार छोरा आवै है	=इतने बड़े चार लड़के आते हैं।

(ii) को (की, का) कारक-चिन्ह-युक्त संज्ञा शब्दावली तथा अपने संश्लिष्ट प्रत्ययों सहित कुछ सर्वनाम पद —

रामू को छोरो आवै	=रामू का लड़का आता है।
रामू की छोरी आवै	=रामू की लड़की आती है।
रामू का छोरा आवै	=रामू के लड़के आते हैं।
म्हारो छोरो आवै	=हमारा लड़का आता है।
म्हारी छोरी आवै	=हमारी लड़की आती है।
म्हारा छोरा आवै	=हमारे लड़के आते हैं।

यह उद्देश्य तथा विधेय किसी के अन्तर्गत पाई जाने वाली संज्ञाओं की गुण-विस्तारक वन सकती है। साधारणत: इसका प्रयोग संज्ञाओं के पूर्व भाग में ही होता है पर विधेयात्मक प्रयोग भी प्रचुरता से प्राप्त होंगे।

२- क्रिया-विशेषण-परक शब्दावली (Adverbials) यह विधेय विस्तारक मात्र मानी जायेगी। इसके अन्तर्गत—

(i) सामान्य (विषयक्रम ६.१.) तथा सर्वनाम-मूलक (विषयक्रम ४. [illegible]०) अव्यय शब्दावली आती है। जैसे—

वो रोजीना आवै	=वह प्रति दिन आता है।
वो होळाँ-होळाँ आवै	=वह धीरे-धीरे आता है।
वो अठै रोजीना आवै	=वह यहाँ पर रोज आता है।

(ii) से, में, कै कारक-चिन्ह और परसर्गों से युक्त संज्ञा-परक तथा अन्य शब्दावली भी विधेय-विस्तारक होती है। यथा—

वो दिन कै आवै =वह दिन में आता है।
वो खाता मैं आवै =वह खाते समय पर आता है।
वो कलम सैं मांडै =वह कलम से लिखता है।
वो पेट भर खायो =उसने पेट भर खाया।

३- संज्ञा-परक शब्दावली—यह विधेय क्रिया का विस्तार कारक-चिन्ह (नैं) सहित या रहित कर्म के रूप में करता है—
वो मोहन नैं बुलावै =वह मोहन को बुलाता है।
वो बजार आवै =वह बाजार आता है।

वस्तुतः क्रियाएँ दो प्रकार की मिलती हैं—समापिका (Finite) तथा असमापिका (Infinite)। समापिका क्रिया के विस्तारकों की जितनी कोटियां हैं, उतनी ही असमापिका क्रियाओं की भी हो सकती है। कृदन्त शब्दावली असमापिका क्रियाएँ ही है जो कि विस्तारक भी है और स्वयं विस्तृत होने वाली भी हैं। इनकी अधोलिखित तीन कोटियां बनाई जा सकती हैं—

(१) संज्ञापरक, जो कि उद्देश्य का विस्तार समानाधिकरण बनकर करता है। यथा—

जयपुर को रैणियो वो छोरो आवै है
=जयपुर का रहने वाला वह लड़का आता है।

दिल्ली नैं जाणियो वो आदमी आवै है
=दिल्ली को जाने वाला वह आदमी आता है।

(२) विशेषण-परक, यह वर्तमान या भूतकालिक प्रत्यय लेकर आता है और संज्ञापरक शब्दों का उद्देश्यात्मक (Attributive) तथा विधेयात्मक (Predicative) गुणवाचक बनकर विस्तार करता है। जैसे—
टूट्यो-टाट्यो घर देख्यो =टूटा-फूटा घर देखा।
आयो-अवायो समान पड्यो है=आया हुआ सामान पड़ा है।
वै छोरा थक्या-थकाया है =वे लड़के थके-थकाये हैं।

(३) अव्यय-परक, यह पूर्वकालिक प्रत्यय -कै लेकर प्रयुक्त होता है। जैसे—
वो खा-पीकै सोवै है =वह खा-पीकर सोता है।
वो हांड-फिरकै लेटै है =वह घूम-फिर कर लेटता है।

इस संवंध में यह उल्लेखनीय है कि ये विस्तारक [illegible] निन्हों द्वारा भी पर्याप्त मात्रा में वढ़ाये जा सकते हैं। शेखावाटी के ये संयोजक [illegible] अव्यय विषयक्रम ६.२. में परिगणित किये गये हैं। किन्तु कभी-कभी [illegible] भी संयोजक का काम करता है। यथा—

दस, वारा लोग जावै है =दस या वारह आदमी जाते हैं।
आठ, दस छोरा खेलै है =आठ या दस लड़के खेलते हैं।

९.४.३. वाक्यगत पदों में जिस सुनिश्चित व्यवस्था की आवश्यकता होती है, उसका विश्लेपण निम्न विभागों के अन्तर्गत कर सकते हैं।

१- क्रम (Order)
२- अन्वय (Concord)
३- अधिकार (Government)

१. पद-क्रम (Word-order) अर्थ-शृंखला में आवद्ध प्रत्येक वाक्य-संघटन में पदों का एक पूर्वापर क्रम रहता है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषाएँ विभक्ति प्रधान थीं, अतः व्याकरणिक संवंधों को स्पष्ट करने के लिये प्रत्येक पद [illegible] स्वाधीन था। सामान्यतः दूसरे पद पर आश्रित न था। किन्तु मध्य काल की विभक्त्यात्मकता की क्रमिक क्षीणता ने पद-क्रम को स्थायित्व देना शुरू किया और [illegible] वाक्य-विश्लेपण के अन्तर्गत पद-क्रम-विश्लेपण ही [illegible] पाने लगा है। [illegible] और पदाधिकार उक्त विभक्त्यात्मकता के स्मृति-चिह्न बन कर [illegible] दिखाई पड़ रहे हैं। विभिन्न वाक्य संघटनों में शेखावाटी बोली के [illegible] सुनिश्चित [illegible] नियम वनाये जा सकते हैं। आलंकारिक शैली ने [illegible] वलात्मकता की परिचायक है. यथा—

वो थारसैं वात करी=[illegible]
करी, वो थारसैं [illegible]=[illegible]
थे वैकी चाल देखी=[illegible]
देखी, थे वैकी [illegible]=[illegible]

वाक्य में कभी-कभी [illegible] कर पाना कठिन हो जाता है, जैसे—

[illegible]
[illegible]
[illegible]

१. उद्देश्य, अपने विस्तारकों को तथा कुछ वैकल्पिक प्रयोगों जैसे समय और स्थान-सूचक अव्यय-परक शब्दावली को छोड़कर, वाक्यारंभ में ही प्रयुक्त होता है। यथा—

काल वो खेताँ मैं पाणी सींच्यो=कल उसने खेतों में पानी सींचा।
वो काल खेताँ मैं पाणी सींच्यो=उसने कल खेतों में पानी सींचा।
तिबारी मैं सगळी जणी भेळी थी=बरोठे में सब जनी एकत्र थीं।
वा सगळा गाँव मैं कोनी मिली=वह सारे गाँव में नहीं मिली।

२. कर्म या पूरक (यदि वाक्य में हैं तो) विस्तारकों को छोड़कर ठीक कर्ता के पश्चात् प्रयोग में आता है। द्विकर्मक वाक्यों में सजीव कर्म प्रथम तथा निर्जीव द्वितीय स्थान ग्रहण करता है—

म्हे सगळा नैं न्योतो दियो =हमने सबको न्योता दिया।
वो बड़ा भाई नैं पावाँधोक कही=उसने बड़े भाई को चरण-स्पर्श कहा।
राम भायला नैं कलम दी =राम ने मित्र को कलम दी।
नोकर गाय नैं पाणी प्यायो = नौकर ने गाय को पानी पिलाया।

३. सामान्यतः क्रिया-पद वाक्य के अन्त में ही आते हैं।

४. समापिका (Finite) अथवा असमापिका (Infinite) क्रिया पद वाले वाक्यों के विस्तारक अपने विशेष्य कर्त्ता, कर्म अथवा क्रिया के सामान्यतः ठीक पहले व्यवहृत होते हैं। यदि अन्तर है, तो परिवर्तन में बलात्मकता का भाव अन्तर्हित रहता है।

५. बलात्मक निपात—ई, बी, तो, तक आदि बलाकांक्षी पदों के ठीक बाद में प्रयुक्त होते हैं। यथा—

राम बजार ई गयो दोखै =राम बाजार ही गया जान पड़ता है।

तू बी को आयो ना =तुम भी नहीं आये।

वो दुकान तो गयो थो =वह दुकान तो गया था।

तू तक मार्यो गयो =तुम तक मारे गये।

६. सकारात्मक 'हाँ' तथा नकारात्मक 'ना, नई' वाक्यादि में ही स्थान ग्रहण करते हैं। नकारात्मक प्रवृत्ति के 'कोनी, कोन्या' क्रिया-पद के ठीक पहले और प्रश्न-सूचक 'ना' वाक्यांत में व्यवहृत होते हैं। जैसे—

हाँ, मैं दुकान गयो थो	=हाँ, मैं दूकान गया था।
ना, मैं दुकान कोनी गयो थो	=नहीं, मैं दूकान नहीं गया था।
दुकान चालैगो ना	=दूकान चलोगे न ?

७. प्रश्नवाचक के (=क्या) की स्थिति वाक्य में अस्थिर रहती है। सामान्यत: अन्त में ही आता है। यथा—

के गाडी आ गी	=क्या, गाड़ी आ गई ?
के गाडी आ गी के	=क्या, गाड़ी आ गई, क्या ?
गाडी आ गी के	=गाड़ी आ गई क्या ?
गाडी के आ गी के	=गाड़ी क्या आ गई, क्या ?

२. पदान्वय (Concord) : पद-रचनात्मक विभक्ति-प्रत्ययों की दृष्टि से पदों का एक वर्ग दूसरे वर्ग से एक सापेक्ष्य सम्बन्ध रखता है। वस्तुत: इसी व्याकरणिक सम्बन्ध को 'पदान्वय' की संज्ञा दी जाती है। कभी-कभी व्याकरणिक विधाओं के सादृश्य के साथ-साथ विभक्ति-प्रत्ययों में भी पूर्णत: मेल रहता है। इस स्थिति को 'पूर्ण पदान्वय' और यदि केवल व्याकरणिक विधाओं में ही मेल है, विभक्ति-प्रत्यय भिन्न हैं तो इसे 'अपूर्ण पदान्वय' माना जाता है। शेखावाटी में प्राप्त होने वाले इन अन्वय-सम्बन्धों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है—

(१) लिंग-वचन [कर्त्ता एवं क्रिया]

(i) -तो (-ती, -ता) प्रत्यय-युक्त क्रिया-रूप जो कि संभाव्य भूत का अर्थ स्पष्ट कर रहे हैं (विषय-क्रम ७. ३)

(ii) -यो (-ई,-या) तथा -णो (-णी, -णा) प्रत्यय-युक्त क्रिया-रूप जो कि सामान्य भूतकाल का अर्थ प्रकाशन कर रहे हैं (विषयक्रम ७. ३) प्रथम कर्तृ एवं कर्म-कर्तृ और द्वितीय केवल कर्म-कर्तृ प्रयोग के उदाहरण हैं।

(२) पुरुष-वचन (कर्त्ता एवं क्रिया)

(i) विभक्ति-प्रत्यय-युक्त क्रिया के तिङन्त रूप जिनका उल्लेख विषय-क्रम ७. २ में किया जा चुका है।

(३) लिंग-वचन और पुरुष-वचन [कर्त्ता एवं क्रिया]

(i) -गो (-गी, -गा) सहायक क्रिया-युक्त भविष्यकाल के रूप जिनमें मुख्य क्रिया द्वितीय और सहायक क्रिया प्रथम सम्बन्ध रख रही है (विषयक्रम ७. ४.), यथा—

वो जावैगो	=वह जायेगा।
थे जावोगा	=तुम लोग जावोगे।

वा जावैगी = वह जायेगी।
वै जावैगी = वे जायेंगी।
म्हे जावांगा = हम जायेंगे।

(४) लिंग-वचन [कर्म एवं क्रिया]

(i) (-यो -ई, -या) प्रत्यय-युक्त सकर्मक क्रिया-रूप कारक-चिन्ह रहित कर्म के अनुसार लिंग-वचन धारण करते हैं। यथा—
राधा रोटी खाई = राधा ने रोटी खाई।
राधा आम खायो = राधा ने आम खाया।
राधा आम खाया = राधा ने आम खाए।

(५) लिंग-वचन-कारक [विशेषण तथा विशेष्य]

(i) ओकारान्त विशेषण तथा निकट-दूरवर्ती सर्वनाम ही इस अन्वय संबंध में भाग लेते हैं। यह नियम सभी प्रकार की विशेषणपरक शब्दावली पर लागू होता है।

पदान्वय के कुछ अन्य उदाहरण भी विचारणीय हैं—

(१) यदि विविध पुरुषवाची एकाधिक कर्त्ता एक संघटन में हैं तो वाक्य में क्रिया-पद क्रमशः उत्तम, मध्यम और फिर अन्य पुरुष के अनुरूप होता है—

मैं अर वो जावां हां = मैं और वह जाते हैं।
तू अर वो जावो हो = तुम और वह जाते हो।
थे अर म्हे चालां हां = तुम और हम चलते हैं।
राम अर वो जावै है = राम और वह जाते हैं।

(२) यदि किसी संघटन में भिन्न-भिन्न लिंग-वचन वाली संज्ञायें कर्त्ता अथवा कर्म बनकर आयें तो क्रिया-पद के लिंग-वचन समीपी कर्त्ता अथवा कर्म के अनुसार होंगे—

बोळा आदमी अर लुगायाँ आई = बहुत से आदमी और औरतें आईं।
बोळी लुगायाँ अर आदमी आया = बहुत सी औरतें और आदमी आये।
दो पीसा अर च्यार अन्नी पड़ी है = दो पैसे और चार इकन्नी पड़ी हैं।
दो अन्नी अर च्यार पीसा पड़्या है = दो इकन्नी और चार पैसे पड़े हैं।

(३) ओकारान्त विशेषण शब्द यदि भिन्न लिंग वाले एकाधिक विशेष्य से संबंधित है तो वह समीपी विशेष्य से लिंग-संबंध स्थापित करता है, यथा—

वडो छोरो अर छोरी = बड़ा लड़का और लड़की।

वडी छोरी अर छोरो = बड़ी लड़की और लड़का।

छोटनो भाई अर भाण = छोटा भाई और बहन।

छोटनी भाण अर भाई = छोटनी बहन और भाई।

यद्यपि भाषा में इस प्रकार के कथन द्विविधात्मक होते हैं जिसकी चर्चा विषयक्रम ९.४.१ में की गई है।

३. पदाधिकार (Government) वाक्य-संघटन में कुछ पद (संघटक) अन्य पदों (संघटकों) के रूप को अधिकृत करते देखे जाते हैं, अतएव इस प्रकार की प्रवृत्ति ही पद-व्यवस्था में 'पदाधिकार' कहलाती है।[1] यथा—

वो आवै है = वह आता है।

किन्तु—

वैनै आनो है = उसे आना है।

नटको ल्या = घड़ा लाओ।

किन्तु—

नटका नै ल्या = घड़े को लाओ।

इन वाक्य युग्मों से स्पष्ट है कि एक शब्द के दो मूल और विकारी रूप (वो और वै; नटको और नटका) परवर्ती पदों पर आधारित हैं। पद-व्यवस्था में यही प्रवृत्ति 'पदाधिकार' कही गई है। वाक्य में मुख्यतः कारक-चिन्ह तथा क्रियाएँ ही पदाधिकारी रूप में प्रस्तुत होती हैं। ये अपना अधिकार केवल संज्ञा पदों पर ही नहीं, अपितु सर्वनाम पदों पर भी रखते हैं और इस प्रकार अपने अनुकूल उन्हें रूपान्तरित करके ही वाक्य में वास्तविक संबंध स्थापित करने योग्य बनाते हैं। यथा, दान के अर्थ में चतुर्थी; भय के अर्थ में पंचमी; 'अभितः' के योग में द्वितीया; साकं, समं, सार्धं, सह के योग में तृतीया इत्यादि की व्यवस्था करने वाले संस्कृत व्याकरण के सूत्र वस्तुतः पदाधिकार के उदाहरण ही स्वीकार किये जायेंगे। मेवाड़ी के कारक-चिह्नों की भी ऐसी ही व्यवस्था की जा सकती है। मेवाड़ी में पदाधिकार संबंधी नियम यों निर्दिष्ट किये जा सकते हैं—

१—"Certain constituents in a construction are said to govern the form of the other constituents, relation of this kind is called Government"—Outline of Linguistic Analysis, Page 73.

१. कारक-चिन्हों तथा परसर्गों से अधिकृत शब्दावली : कारक-चिन्ह नाम (संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण) शब्दावली को विकारी रूप में ग्रहण करते हैं (देखिए, विषय-क्रम ३.४.४.) ।

कारक-चिन्हों के अतिरिक्त अनेक अव्यय जिन्हें परसर्ग (विषय-क्रम ६. ५.) की कोटि में रखा गया है, नाम (संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण) के विकारी रूपों के साथ ही अपना संबंध स्थापित करते हैं अर्थात् परसर्ग पद नाम पदों के पश्चात् प्रयुक्त होकर उन्हें विकारी रूप प्रदान करते हैं। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार कहा जायेगा कि परसर्ग पदों से नाम पद अनुशासित होते हैं, यथा—

(छोरो>) छोरा ताईं आम ल्यायो = लड़के के लिये आम लाइएगा।
(तू>) तेर ताईं कलम आयो = तेरे लिये कलम आया।
(वो>) वैं ताईं वाणच आयो = उसके लिये फल आये।
(मोटलो>) मोटला ताईं किमि मता ल्यायो = मुटल्ले के लिये कुछ मत लाइएगा।

(छोरो>) छोरा तक नैं कोनी बुलायो = लड़के तक को नहीं बुलाया।
(तू>) तेर तक कोनी आयो = तुम्हारे तक नहीं आया।
(वो>) वैं तक तो आयो थो = उस तक तो आया था।
(मोटलो>) मोटला तक मैं गयो थो = मुटल्ले तक मैं गया था।

२. क्रियार्थक संज्ञाओं तथा क्रिया-रूपों से अधिकृत शब्दावली :

(i) क्रियार्थक संज्ञा (–णो रूप), कर्त्ता का अर्थ देने वाली नाम शब्दावली को विकारी रूप + नैं कारक-चिन्ह सहित, ग्रहण करती है। यथा—

(छोरो) छोरा नैं जाणो है = लड़के को जाना है।
(मैं) मनैं जाणो है = मुझे जाना है।
(मोटलो) मोटला नैं जाणो है = मुटल्ले को जाना है।

(ii) गत्यर्थक धातुओं जा-, आ-, चाल्- आदि से बने क्रिया-पदों की उपस्थिति से स्थान-सूचक ओकारान्त तथा आकारान्त कर्म संश्लिष्ट विभक्ति (-ऐ) ग्रहण करता है।[1] यथा—

थे धरमसाळै (<धरमसाळा) जावो = तुम लोग धर्मशाला में जाओ।
म्हे सिंघाणै (<सिंघाणो) गया था = हम सिंघाना (नगर विशेष) गये थे।
छोरो कलकत्तै (<कलकत्तो) गयो = लड़का कलकत्ते गया।

१. "Intransitive verbs are not capable of governing an object other than one denoting space, time etc."—Sanskrit Grammar, Page 481.

छोरी मदर्सँ (<मदर्सो) गई=लड़की स्कूल गई।

(iii) सारी सकर्मक क्रियाएँ कर्म-रूप में प्रयुक्त सजीव संज्ञाओं, सर्वनामों तथा विशेषणों को विकारी रूप प्रदान करती हैं, यथा—

(छोरो>) छोरा नैं बुला=लड़के को बुलाओ।
(घोडो>) घोड़ा नैं खुवा=घोड़े को खिलाओ।
(मैं>) मनैं किताव दे=मुझे किताब दो।
(वो>) वैंनैं रोटी खुवा=उसको रोटी खिलाओ।
(मोटलो>) मोटला नैं घर बुला=मुटल्ले को घर बुलाओ।

३. आदरार्थक 'जी' पद से अधिकृत शब्दावली : आदरार्थक 'जी' पद वाक्य में व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के बाद ही प्रयुक्त होता है और जब यह संज्ञाओं के साथ व्यवहृत होता है तो एक वचन के कर्त्ता के साथ क्रियाओं के बहु वचन रूप प्रयुक्त होते हुए देखे जाते हैं, यथा—

बाई जी आया = बहन जी आई।
भाई जी गया = भाई जी गये।
काको जी न्हाया = चाचा जी नहाये।
ताऊ जी सोया = ताऊ जी सोये।

अर्थात् वाक्य में क्रिया-पद आदरार्थक 'जी' पद के अधिकृत होते हैं।

———

१०. संधि-विचार

१०. ०. पूर्ववर्ती अध्यायों (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय, क्रिया, शब्द-रचना आदि) में प्रातिपदिकों (Word-bases) के संपरिवर्तकों (Alternants) और उनके ध्वनिग्रामीय (Phonemic shapes) के अध्ययन सम्बंधी चर्चा नहीं की गई। उदाहरणार्थ—घरां, छोरां, छोरियां, लुवां आदि संज्ञा-पदों में प्रत्येक पद दो (प्रातिपदिक + विभक्ति-प्रत्यय) के संयोग से निर्मित है अर्थात् प्रत्येक पद में एक पृथकत: संज्ञा-प्रातिपदिक | घर |, | छोरो |, | छोरी | और | लू | है, जबकि समस्त पदों में संलग्न होने वाला दूसरा विकारी बहु वचन रूप-व्युत्पादक प्रत्यय | -आँ | है। इस | -आँ | के संयोग से विविध अन्त्य वाले संज्ञा प्रातिपदिकों में ध्वन्यात्मक परिवर्तनों के फलस्वरूप उनके अनेकानेक ध्वनिग्रामीय स्वरूप (संपरिवर्तक रूप में) उपलब्ध होते हैं जिनके सम्बंध में चर्चा संबंधित अध्याय अर्थात् संज्ञा-पद-रचना में नहीं की गई। वहाँ इस प्रकार का विवेचन संभवत: असंगत जान पड़ता।[१]

१०. १. क्षेत्र-सीमा : प्रस्तुत अध्याय में प्रकृति (धातु और प्रातिपदिक) तथा प्रत्ययों (शब्द-व्युत्पादक और रूप-व्युत्पादक) के अनेकानेक संपरिवर्तकों (Alternants) से सम्बंधित अध्ययन किया जा रहा है। ये संपरिवर्तक प्रकृति + प्रत्यय अथवा प्रकृति + प्रकृति के परिणाम कहे जा सकते हैं, यथा—

चम्-	<	चाम्	+	-आर्	= चमार्			
लुग-	<	लोग्	+	-आई	= लुगाई			
वत्-	<	वात्	+	-आ	= वता (क्रियाधातु)			
डिब्ब्-	<	डिब्बो	+	-ई	= डिब्बी			
घुड़-	<	घोड़ो	+	-सवार	= घुड़सवार्			
पण्-	<	पाणी	+	घट्	<	घाट्	=पणघट्	

दूसरे शब्दों में, प्रकृति और प्रत्यय या प्रकृति और प्रकृति की संधि से कभी प्रकृति में कभी प्रत्यय में तो कभी दोनों में ध्वनि-परिवर्तन हो जाते हैं अर्थात् उनका ध्वनिग्रामीय संघटन परिवर्तित हो जाता है। पुनश्च ये संपरिवर्तक परिस्थितिबद्ध होते हैं। परिस्थितियाँ मुख्यत: दो प्रकार की होती हैं ध्वनि-प्रतिबंधित (Phonologic Conditioing) और रूप-प्रतिबंधित (Morphologic Conditioning)। अतएव संपरिवर्तकों के भी स्पष्टत: दो प्रभेद हो सकते हैं—ध्वनि-प्रतिबंधित संपरिवर्तक और रूप-प्रतिबंधित संपरिवर्तक। ध्वनि-प्रतिबंधित संपरिवर्तक ध्वनि-नियमों और

१. A Course in Modern Linguistics, Page 271.

रूप-प्रतिबंधित संपरिवर्तक रूप-रचनात्मक नियमों के अन्तर्गत आते हैं। एक ही प्रकृति या प्रत्यय के संपरिवर्तकों के अर्थ विभिन्न नहीं होते अपितु एक ही आधारभूत अर्थ को उद्दिष्ट करते हैं। इसी प्रसंग में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न विचारणीय है कि एक ही प्रकृति या प्रत्यय के संपरिवर्तकों में किसको आधारभूत संपरिवर्तक मानें? इसका सीधा सा उत्तर हो सकता है कि आधारभूत संपरिवर्तक उसी को माना जाये जिसका प्रयोग-प्राचुर्य हो। उदाहरणार्थ / घोड़ो /, / घोड़्- / और / घुड़- / तीन संपरिवर्तक हैं। तीनों का अर्थ भी एक है। पर, प्रयोग-बहुलता की दृष्टि से, साथ ही शब्द-रूप में, / घोड़ो / महत्त्वपूर्ण है। शेष दो /घोड़्-/ तथा / घुड़्-/ संपरिवर्तकों की भाषा में प्रयोग-सीमा है। इनका प्रयोग तो सम्बद्ध परिस्थितियों में ही संभव है। /घोड़्-/ व्याकरणिक स्तर-सम्बद्ध है तो / घुड़्- / समास रचना-सम्बद्ध। यों तो / घोड़ो / की भी अपनी प्रयोग-सीमा है किन्तु यही एक ऐसा ध्वन्यात्मक स्वरूप है जो भाषा में स्वतंत्र रूप से व्यवहृत और व्याकरणिक स्तर पर पद-रूप में भी प्रतिष्ठित है। कहने की आवश्यकता नहीं, यहाँ संस्कृत की अपेक्षा 'संधि' का क्षेत्र व्यापक हो गया है।

प्रत्येक भाषा या बोली में कुछ ऐसी भी प्रकृतियाँ मिलती हैं जो अपने ध्वनिग्रामीय स्वरूप में परिवर्तन किये बिना ही समस्त व्याकरणिक रूपों में यथावत् प्रतिष्ठित रहती हैं, यथा—शेखावाटी के 'करै, करो, कर्यो, करैगो, कर्मी, कर्तो, कर्णो' आदि सभी रूपों में साथ ही धातु √ कर् में भी एक ही ध्वनिग्रामीय स्वरूप / कर् / उपलब्ध है। यदि भाषा में सारी प्रकृतियाँ इसी कोटि की हों तो उस भाषा का संधि-विचार अत्यंत सुबोध हो जाये और फिर उसका अधिक महत्त्व ही न रहे।[१] किन्तु बात ऐसी नहीं, प्रत्येक भाषा में संधि सम्बंधी जटिलताएँ देखी जाती हैं। शेखावाटी में विकारी बहुवचन रूप-व्युत्पादक प्रत्यय/-आँ / है जो 'घराँ'—/ घर् +आँ/ में स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो रहा है पर 'छोरियाँ'—/ छोरिय् + आँ / तथा 'लुवाँ'— /लुव् + आँ/ में 'छोरी' और 'लू' प्रातिपदिकों के -ई और -ऊ के स्थान पर -इय् एवं –उव् के साथ। इसके अतिरिक्त 'छोराँ'— / छोर् + आँ/ में प्रातिपदिक 'छोरो' के –ओ का लोप करके /-आँ/ संयुक्त होता देखा जाता है। निष्कर्ष यह कि जैसे / कर / अपने अपरिवर्तनशील ध्वनिग्रामीय स्वरूप को प्रदर्शित करता है, वैसे / छोरो/, /छोरी/ और /लू/ नहीं अर्थात् इन संज्ञा-प्रातिपदिकों के संपरिवर्तक निम्न प्रकार से निश्चित किये जा सकते हैं—

{छोरो} | छोरो |
| छोर्- |
{छोरी} | छोरी |
| छोरिय्- |

---

१. A Course in Modern Linguistics, Page 271.

{लू} | लू |
| लुव्- |

इन संपरिवर्तकों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि इनमें से प्रथम तो स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होते हैं जब कि दूसरे अन्यत्र अर्थात् विभक्ति-प्रत्ययों के साथ। इसी प्रकार √जा का ध्वनिग्रामीय स्वरूप /जा/—जाणो, जायों, जासी, जावैगो, जाऊँ, जाओ आदि क्रिया-रूपों में स्पष्टतः मिल रहा है, किन्तु भूतकालिक क्रिया-रूपों—गयो, गया, गई में /जा/ न मिल कर /ग/ मिलता है। अतएव यह /ग/ भी उपर्युक्त अन्य संपरिवर्तकों की भांति रूप-प्रतिबंधित है। अस्तु: प्रत्येक भाषा या बोली में सन्ध्यात्मक जटिलताओं के कारण ही संधि-विचार महत्वपूर्ण होता है।

१०. १. २. यदि एक प्रातिपदिक एकाधिक संपरिवर्तकों (विभिन्न ध्वनिग्रामीय स्वरूपों) में मिले तो कहा जा सकता है कि वे सारे संपरिवर्तक परिस्थिति बद्ध हैं और उस एक प्रातिपदिक विशेष के ही संपरिवर्तक हैं।[१] यथा—/घोड़ो/, |घोड्-/ और |घुड् / तीनों प्रातिपदिक {घोड़ो} के ही संपरिवर्तक हैं जो अपनी प्रयोग-सीमाओं के साथ प्रयुक्त होते हैं अर्थात् /घोडो/ स्वतंत्र रूप से शब्द एवं पद-रूप में व्यवहृत देखा जाता है तो /घोड्-/ व्याकरणिक स्तर (Grammatical level) पर। इसके अतिरिक्त शब्द-रचना करते समय तात्कालिक सन्धि-नियम के अनुसार प्रातिपदिक {घोडो} का /घुड्-/ संपरिवर्तक भी देखा जा सकता है, यथा—घुड्दौड़, घुड्चढी आदि सामासिक शब्दों में। कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रातिपदिक और उसके संपरिवर्तक परिस्थितियों से आबद्ध हैं। ये परिस्थितियां ध्वनि-प्रतिबंधित (Phonologic Conditioning) एवं रूप-प्रतिबंधित (Morphologic Conditioning) होती है, यथा—डाग्घर् (डाक्घर), आस्सेर् (आध् + सेर), मनैं (मैं + नैं) इक्तीस् (एक् + तीस्) आदि शब्दों एवं रूपों में प्रातिपदिक {डाक्}, {आध्}, {मैं}, एवं {एक्} के क्रमशः रूपान्तर /डाग्/, /आस्-/, /म-/ और /इक्-/ उपलब्ध हैं, जिनमें /डाग्-/ और /आस्-/ तो ध्वनि-प्रतिबंधित हैं और /म-/ एवं /इक्-/ संपरिवर्तक रूप-प्रतिबंधित हैं। इसके अतिरिक्त {बेच्}, {फाड्} आदि धातुएं ह्रस्वीकृत रूपों में /बिक्-/ और /फट्-/ ध्वनिग्रामीय स्वरूप धारण करती हैं। /-ए-/ और /-आ-/ का क्रमशः /-इ-/ और /-अ-/ में .रिवर्तन तो ध्वनिप्रतिबंधित है किन्तु /-च्/ और /-ड्/ का /-क्/ तथा /-ट्/ हो जाना ध्वन्यात्मक नहीं, अतएव इस प्रकार के उदाहरण उपर्युक्त दोनों प्रकार की परिस्थितियों के मध्य के ही माने जायेंगे।

१. A Course in Modern Linguistics, Page 272.

१०. १. ३. उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट है कि संधि-विचार दो परिस्थितियों—ध्वनि-प्रतिबंधित एवं रूप-प्रतिबंधित से संबंधित है। इन दोनों प्रकार की परिस्थितियों के अध्ययन के लिए शेखावाटी भाषा में तीन स्तर बनाये जा सकते हैं- शब्द, पद और वाक्य। प्रायः ध्वनि-प्रतिबंधित परिस्थिति शब्द एवं वाक्य-स्तर पर ही देखी जाती है जबकि रूप-प्रतिबंधित परिस्थिति पद-स्तर पर। इन दोनों परिस्थितियों से समुत्पन्न प्रातिपदिकों के संपरिवर्तक क्रमशः तीनों स्तरों पर देखे जा सकते हैं और यथा-संभव तत्सम्बन्धी नियमों का निर्माण भी किया जा सकता है। संधि-नियमों के सम्बन्ध में यहाँ यह कहा जा सकता है कि वे प्रायः तद्भव सामग्री पर ही चरितार्थ होते है।

१०. २. शब्द-स्तर :

१०. २. १. शब्द-रचना करते समय हमें प्रातिपदिकों में जो ध्वन्यात्मक परिवर्तन मिलते हैं उनके आधार पर प्रातिपदिकों के संपरिवर्तकों तथा तत्सम्बन्धी कुछ ध्वनि-प्रक्रिया के नियमों को निश्चित किया जा सकता है। पहले कहा जा चुका है कि जब यौगिक एवं सामासिक शब्दों की रचना होती है तो पास-पास आने वाली ध्वनियों (यथा—पाणी-हारो=पणिहारो, डाक्-घर् = डाग्घर्) में कुछ प्रतिक्रिया (समीकरण, दीर्घ स्वरों का ह्रस्वीकरण आदि) देखी जाती है और यही प्रतिक्रिया प्रातिपदिकों के ध्वनिग्रामीय स्वरूपों में परिवर्तन करके उनके विविध संपरिवर्तक प्रस्तुत करती है। कभी-कभी इस प्रतिक्रिया का क्षेत्र इतना व्यापक हो जाता है कि दूरवर्ती ध्वनियाँ (प्रायः स्वर) भी परिवर्तित होती देखी जाती है। इस प्रकार के परिवर्तन का उत्तरदायित्व बहुत कुछ स्वराघात पर होता है, यथा—भाण् + ओई = भणोई (बहनोई), लाल् + आई = ललाई, पाणी + हारो = पणिहारो (पनिहारा) आदि अर्थात् स्वराघात-स्थलों के परिवर्तन से भी शब्दों में ध्वनि-प्रक्रिया देखी जाती है जिसके सम्बन्ध में निम्न नियम बनाये जा सकते हैं—

१. दीर्घ-स्वरों का ह्रस्व होना-

(१) /आ/ का /अ/ में परिवर्तन /आ > अ/, यथा—

{आम्}	आम्	—	स्वतंत्र प्रयोग
	अम्-	—	अम्चूर, अम्रस
{बात्}	बात्	—	स्वतंत्र प्रयोग
	बत्-	—	बतक्कड़्
{भाड़्}	भाड़्-	—	स्वतंत्र प्रयोग
	भड़्-	—	भड़भूजो

{भाण}	/भाण्/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/भण्-/	—	भणोई
{लाल्}	/लाल्/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/लल्-/	—	ललाई

इसके अतिरिक्त यह उपर्युक्त नियम सामान्य धातुओं से ह्रस्वीकृत धातुओं के निर्माण मे भी नियमित रूप से कार्य करता हुआ देखा जाता है—

{कात्}	/कात्/	—	सामान्य धातु
	/कत्-/	—	ह्रस्वीकृत
{चाट्}	/चाट्/	—	सामान्य धातु
	/चट्-/	—	ह्रस्वीकृत
{पाट्}	/पाट्/	—	सामान्य धातु
	/पट्-/	—	ह्रस्वीकृत

(२) /ई/, /ए/, /ऐ/, /का/ /इ/ में परिवर्तन / ई, ए, ऐ > इ /, यथा—

{पाणी}	/पाणी/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/पणि-/	—	पणिहारो
{मणी}	/मणी/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/मणि-/	—	मणियार्
{मेल्}	/मेल्/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/मिल्-/	—	मिलणियो
{खेल}	/खेल्-/	—	स्वतंत्र प्रयोग
	/खिल्-/	—	खिलाड़ी

सामान्य धातुओं से ह्रस्वीकृत धातुओं के निर्माण करने में उपर्युक्त ध्वनि-प्रक्रिया नियमित रूप से कार्य करती है—

{पीट्}	/पीट्/	—	सामान्य
	/पिट्-/	—	ह्रस्वीकृत
{खींच्}	/खींच्/	—	सामान्य
	/खिच्-/	—	ह्रस्वीकृत
{खेल्}	/खेल्/	—	सामान्य
	/खिल्-/	—	ह्रस्वीकृत
{देख्}	/देख्/	—	सामान्य
	/दिख्-/	—	ह्रस्वीकृत

{बैठ्}	|बैठ्|	—	सामान्य
	|बिठ्-|	—	ह्रस्वीकृत
{तैर्}	|तैर्|	—	सामान्य
	|तिर्-|	—	ह्रस्वीकृत

(३) /ऊ/ तथा /ओ/ का /उ/ में परिवर्तन /ऊ, ओ > उ/, यथा—

{लूट्}	|लूट्|	—	स्वतंत्र प्रयोग
	|लुट्-|	—	लुटेरो
{मूत्}	|मूत्|	—	स्वतंत्र प्रयोग
	|मुत्-|	—	मुतास्
{बूढ़ो}	|बूढ़ो|	—	स्वतंत्र प्रयोग
	|बुढ़्-|	—	बुढ़ापो
{मोटो}	|मोटो|	—	स्वतंत्र प्रयोग
	|मुट्-|	—	मुटापो, मुटाई
{सोनो}	|सोनो|	—	स्वतंत्र प्रयोग
	|सुन्-|	—	सुनार्

नोट: बूढ़ो, मोटो और सोनो प्रातिपदिकों के /-ओ/ का लोप ध्वनि-प्रतिबंधित नहीं है। यदि है तो रूप-प्रतिबंधित।

सामान्य धातुओं से ह्रस्वीकृत धातुएं बनाते समय उपर्युक्त ध्वनि-प्रक्रिया नियमित रूप से प्राप्त होती है—

{लूट्}	|लूट्|	—	सामान्य
	|लुट्-|	—	ह्रस्वीकृत
{छूट्}	|छूट्|	—	सामान्य
	|छुट्-|	—	ह्रस्वीकृत
{चोर्}	|चोर्|	—	सामान्य
	|चुर्-|	—	ह्रस्वीकृत
{खोल्}	|खोल्|	—	सामान्य
	|खुल्-|	—	ह्रस्वीकृत
{पोत्}	|पोत्|	—	सामान्य
	|पुत्-|	—	ह्रस्वीकृत

२. समीकरण—सामासिक शब्दों की रचना करते समय पास-पास आने वाली व्यंजन ध्वनियां (विशेषतः अघोष अल्पप्राण और सघोष) यदि उच्चारण-स्थान एवं उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से भिन्न हैं तो प्रायः उनमें समीकरण के

प्रवृत्ति देखी जा सकती है और यह समीकरण परवर्ती ध्वनि के अनुरूप ही प्राप्त होता है जिसके संबंध में निम्न नियम बनाये जा सकते हैं—

(१) उच्चारण-स्थान की दृष्टि से, यथा—

{दाँत्} | दाँत् | — स्वतंत्र प्रयोग
| दाँज्- | — दाँज्-जीव् (दाँत-जीभ)
{पात्} | पात् |
| पज्- | — पज्झड़्

(२) उच्चारण-प्रयत्न की दृष्टि से, यथा—

{डाक्} | डाक् |
| डाग्- | — डाग्घर्
{रात्} | रात् |
| राद्- | — राद्-दिन—राद्दिन
{बाप्} | बाप् |
| बाब्- | — बाब्-बेटो
{आध्} | आध् |
| आस्- | — आस्सेर

१०. ३. पद-स्तर :

१०. ३. १. पद-रचना करते समय विभक्ति-प्रत्ययों के योग से हमें प्रातिपदिकों के विविध संपरिवर्तक मिलते हैं। ये संपरिवर्तक रूप-प्रतिबंधित होते हैं जिनका ध्वनिग्रामीय स्वरूप हम निम्न प्रकार से निश्चित कर सकते हैं—

(१) ओकारान्त एवं आकारान्त प्रातिपदिकों के /-ओ/ तथा /-आ/ का लोप, यदि स्वर से आरम्भ होने वाले विभक्ति-प्रत्यय परे हों, यथा—

{छोरो} | छोरो |
| छोर्- | —छोरा—छोर्+आ (पुं० मूल बहु० प्रत्यय)
छोरा—छोर्+आ (पुं० वि० एक० प्रत्यय)
छोराँ—छोर्+आँ (पुं० वि० बहु० प्रत्यय)

{काळो} | काळो |
| काळ्- | —काळा—काळ्+आ (पुं० मूल बहु० प्रत्यय)
काळा—काळ्+आ (पुं० वि० एक० प्रत्यय)
काळाँ—काळ्+आँ (पुं० वि० बहु० प्रत्यय)

{काया} | काया |

| काय्- | — कायाँ—काय् + आँ (स्त्री०मूल बहु० प्रत्यय)

काया—काय् + आ(स्त्री०वि०एक० प्रत्यय)

कायाँ—काय् + आँ (स्त्री०वि०बहु०प्रत्यय)

{छाया} | छाया |

| छाय्- | — छायाँ—छाय् + आँ(स्त्री०मूल बहु०प्रत्यय)

छाया—छाय् + आ(स्त्री० वि०एक०प्रत्यय)

छायाँ—छाय् + आँ(स्त्री०वि०बहु०प्रत्यय)

(२) ईकारान्त एवं ऊकारान्त प्रातिपदिकों के /-ई / तथा /-ऊ / का /-इय्/ एवं /-उव् / में परिवर्तन, यथा–

{छोरी} | छोरी |

| छोरिय्- | — छोरियाँ—छोरिय्+आँ (स्त्री०मूल बहु०प्रत्यय)

छोरियाँ—छोरिय्+आँ (स्त्री० त्रि० बहु०....)

{धोबी} | धोबी |

| धोबिय्- | — धोबियाँ—धोबिय्+आँ (पुं०वि०बहु० प्रत्यय)

{ताऊ} | ताऊ |

| ताउव्- | — ताउवाँ—ताउव्+आँ (पुं०वि०बहु प्रत्यय)

{लू } | लू |

| लुव्- | — लुवाँ—लुव् +आँ(स्त्री० मूल बहु० प्रत्यय)

लुवाँ—लुव् +आँ (स्त्री० वि० बहु० प्रत्यय)

इस वर्ग के संपरिवर्तक ध्वनि-प्रतिबंधित भी माने जा सकते हैं।

१०. ३. २. *उपर्युक्त दो प्रमुख नियमों के अतिरिक्त सामान्यतः अन्य सर्व*-नाम, विशेषण, अव्यय, क्रिया आदि पदों में मिलने वाले प्रातिपदिकों और उनके संपरिवर्तकों का विवेचन निम्न प्रकार किया जा सकता है—

{ मैं } | मैं |

| म- | — कर्म रूप

| मे- | — अन्यत्र

{ तू } | तू |

| त- | — कर्म रूप

| ते- | — अन्यत्र

{ यो } | यो | –
| ऐं~ईं | — कारक-चिन्हों के साथ
{ वो } | वो |
| वैं~वीं | — कारक-चिन्हों के साथ
{ जो } | जो |
| जैं~जीं | — कारक-चिन्ह सहित
{ सो } | सो |
| तैं~तीं | — कारक-चिन्ह सहित
{ कुण्} | कुण् |
| कैं~कीं | — कारक-चिन्ह सहित
{ के } | के |
| क्यां | — कारक-चिन्ह सहित

१०. ३. ३. उपर्युक्त सर्वनाम प्रातिपदिकों के संपरिवर्तकों के अतिरिक्त संख्या-वाचक विशेषण प्रातिपदिकों के संपरिवर्तक भी देखे जा सकते हैं जो शेखावाटी में रूप-प्रतिबंधित ही हैं—

{ एक्} | एक् |
| इक्- | — इकीस्, इक्तीस्, इक्ताळिस्
{ दो } | दो |
| दू- | — दूसरो, दूणो
| दु- | — दुगणो, दुहरो, दुबारा
{तीन्} | तीन् |
| ती- | — तीसरो, तीणो
| ति- | — तिगणो, तिहत्तर्, तिहाई
| ते- | — तेरा, तेइस्
| तैं- | — तैंतीस
| तिर्- | — तिराळिस्, तिरपन्, तिरसठ्
{च्यार} | च्यार् |
| चोर्- | — चोरासी, चोराणबै
| चो- | — चोथो, चोगणो, चोबीस्
| चौं- | — चौंतीस्, चौंसठ्
{पाँच्} | पाँच् |
| पच्च~पच | — पच्चीस, पच्पन्
| पिच- | — पिचहत्तर, पिचासी

| पैं- | — पैंतीस्, पैंसठ्
| पन्- | — पन्द्रा, पन्ताळिस्

इसी प्रकार आगे आठ संख्या तक के विशेषण प्रातिपदिकों एवं उनके संपरिवर्तकों के मध्य पर्याप्त ध्वनि-ग्रामीय परिवर्तन आभासित होते हैं। यही कारण है कि एक से लेकर आठ तक के संख्यावाची विशेषण प्रातिपदिकों के अनेकानेक ध्वनिग्रामीय स्वरूप हमें उनके संपरिवर्तकों में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त शेखावाटी में {बीस्,} {चाळीस्,} {सत्तर} आदि के उपलब्ध संपरिवर्तक क्रमशः / ईस् ~ इस्/, /ताळीस् एवं आळीस् / और / हत्तर / भी रूप-प्रतिबंधित हैं।

(१०.) ३. ४. 'अव्यय' अध्याय में भी हमें कुछ अव्यय प्रातिपदिक अपने संपरिवर्तकों सहित मिलते हैं, यथा--

{ अठै } | अठै | — यहाँ
| अठि | — अठिनैं (इधर)
{ उठै } | उठै | — वहाँ
| उठि- | — उठिनैं (उधर)
{ कठै } | कठै | — कहाँ
| कठि- | — कठिनैं (किधर)
{ जठै } | जठै | — जहाँ
| जठि- | — जठिनैं (जिधर)

(१०.) ३. ५. क्रिया-पद-रचना में भी हमें कुछ ऐसी धातुएँ मिलती हैं जो पद-स्तर पर अपने संपरिवर्तकों सहित दिखाई पड़ती हैं। सामान्यतः भूतकाल की रचना करते समय ही ये संपरिवर्तक देखे जाते हैं, यथा—

{ जा } | जा |
| ग- | — गयो, गया, गई
{ दे } | दे |
| द- | — दई (दी)
| दि- | — दियो, दिया
| द्- | — द्यो (दीजिये)
{ ले } | ले |
| ल- | — लई (ली)
| लि- | — लियो, लिया
| ल्- | — ल्यो (लीजिये)

इसके अतिरिक्त वर्तमान काल की तिङन्त रूप-रचना करते समय भी हमें -व्- सहित स्वरांत धातुओं के संपरिवर्तक नियमित रूप से प्राप्त होते हैं, यथा—

{आ}	आ	
	आव्-	— आवै, आवो, आवूँ, आवाँ
{जा}	जा	
	जाव्-	— जावै, जावो, जावूँ, जावाँ
{पी}	पी	
	पीव्-	— पीवै, पीवो, पीवूँ, पीवाँ
	प्य-	— प्याणो (पिलाना)
{ले}	ले	
	लेव्-	— लेवै, लेवो, लेवूँ, लेवाँ
{छू}	छू	
	छूव्-	— छूवै, छूवो, छूवूँ, छूवाँ
{रो}	रो	
	रोव्-	— रोवै, रोवो, रोवूँ, रोवाँ

१०. ४. वाक्य-स्तर :

१०. ४. १. शेखावाटी में वाक्य-स्तर पर संधि-स्थल तभी देखे जाते हैं जबकि कथन-प्रवाह में क्षिप्रता होती है। ऐसे संधि-स्थलों (समीपस्थ पदों के अन्तिम एवं आदिभागीय ध्वनियों) पर समीकरण की प्रवृत्ति ही विशेषतः दृष्टिगत होती है, ऐसे -ए, -ई और -ऊ स्वर भी परवर्ती आ- के प्रभाव से -इ और -उ में परिवर्तित देखे जाते हैं। समीकरण में परवर्त्ती व्यंजन ध्वनि के अनुरूप ही पूर्ववर्ती व्यंजन सघोष अथवा अघोष रूप धारण करते देखे जाते हैं, साथ ही उच्चारण-स्थान भी परवर्ती ध्वनि से प्रभावित होता देखा जाता है। समीकरण में भाग लेने वाली ध्वनियाँ प्रायः क्, च्, ट्, त्, प्, र्, ग्, घ्, ज्, झ्, ड्, ढ्, द्, ध्, ब्, म् आदि ही हैं, यथा—

वैनैं माड् डाल् =उसे मार डालो।

वो हाच् चलायो =उसने हाथ चलाया।

मटका में हाड् डाल् =घड़े में हाथ डालो।

या वाद् भोट् ठीक हुई =यह बात बहुत ठीक हुई।

एक आयो, एग् गयो	=एक आया, एक गया।
गाय खेच् चर गी	=गाय खेत चर गयी।
थे बजार आच् चालो	=आप बाजार आज चलें।

उपर्युक्त उदाहरणों में पद-रूप प्रातिपदिकों { मार् }, { हात् }~{ हाथ् }, { बात् }, { भोत् }, { एक् }, { खेत् } एवं { आज् } के वाक्य-गत संपरिवर्तक इस प्रकार हैं—

{ मार् }	| माड् |
{ हात् }	| हाच् |
	| हाड् |
{ बात् }	| बाद् |
{ भोत् }	| भोट |
(एक्)	| एग् |
(खेत्)	| खेच् |
(आज्)	| आच् |

कहने की आवश्यकता नहीं कि ये समस्त संपरिवर्तक ध्वनि-प्रतिबंधित हैं और परवर्ती व्यंजन ध्वनियों के प्रभाव-स्वरूप ही पूर्ववर्ती व्यंजन ध्वनियों में परिवर्तन हुआ है अर्थात् उच्चारण-स्थान या उच्चारण-प्रयत्न या दोनों के अनुसार पूर्ववर्ती ध्वनि ने अपनी परवर्ती ध्वनि के अनुकूल अपने को बनाया है, अतएव समीकरण की प्रवृत्ति ही वाक्य-रचना-स्तर पर संधि-रूप में उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त पदांत /-ए / और /-ई / स्वर भी समीपस्थ पदादि /आ-/ स्वर के प्रभाव से /-इ / में और / -ऊ / > / -उ / में परिवर्तित देखे जाते हैं, यथा—

वो आज् दे आयो	— वो आज दि आयो।
मैं काल् ले आयो	— मैं काल लि आयो।
के तू पी आयो	— के तू पि आयो।
वो तो जी आयो	— वो तो जि आयो।
वो दीवाल् छू आयो	— वो दीवाल छु आयो।

उपर्युक्त वाक्यों में एकारान्त, ईकारान्त एवं ऊकारान्त पद-रूप धातुओं के परवर्ती -आ के प्रभाव से मिलने वाले संपरिवर्तकों को निम्न प्रकार से व्यवस्थित कर सकते हैं—

{ दे } | दि |
{ ले } | लि |
{ पी } | पि |
{ जी } | जि |
{ छू } | छु |

———

११. भाषा-भूगोल

११.०. आलोच्य क्षेत्र शेखावाटी और उसके समीपवर्ती क्षेत्रों की बोलियों की ध्वनि-पद्धति के सूक्ष्मतम अन्तरों (राग, सुर आदि) को स्पष्ट करने के लिये जो यांत्रिक सुविधाएँ अपेक्षित हैं, उनके सुलभ न होने के कारण यहाँ केवल शब्द-स्तर पर भाषा-भौगोलिक अध्ययन किया जा रहा है और इसे भी अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में विभक्त करके देखा है—

१. शब्द के ध्वन्यात्मक स्वरूप ।
२. एक ही शब्द के विभिन्न अर्थ ।
३. एक ही वस्तु या भाव के लिये विभिन्न शब्द ।

अध्ययन के लिये चुना गया क्षेत्र अति सीमित होने के कारण आलोच्य क्षेत्र में शब्द-भूगोल के लिये आवश्यक उपर्युक्त तीनों विशेषताओं को प्रचुर-मात्रा में देख सकना संभव नहीं, अतएव सीमावर्ती बोलियों के साथ भी कतिपय उदाहरणों से तीनों विशेषताओं का निरूपण किया गया है और कहा जा सकता है कि इस प्रकार का निरूपण किसी भाषा या वोली को स्वतंत्र भाषा-इकाई-रूप में देखने के लिये अनिवार्य भी है ।

यह सत्य है कि भाषा में शब्दों (Lexical Units) के ध्वन्यात्मक स्वरूप (Phonetic shape) तथा अर्थ तत्त्व (Semanteme) प्राय: निश्चित ही होते हैं, जवकि प्रत्यय-विभक्ति आदि के अर्थ एवं ध्वन्यात्मक स्वरूप विवादपूर्ण हो सकते हैं। जैसे हिन्दी में-ई स्त्रीलिंग (यथा : घोड़ा-घोड़ी), लघुता (यथा : डिव्वा-डिव्वी) कर्तृत्व (यथा : तेल-तेली) आदि का द्योतक है और भूतकालिक प्रत्यय का ध्वनि-स्वरूप-आ (यथा—चला) एवं-या (यथा—आया) है, पर अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हम एक प्रतिनिधि अर्थतत्त्व एवं एक प्रतिनिधि ध्वनि-स्वरूप मानने के लिये वाध्य हैं और इस दृष्टि से-ई स्त्रीलिंग तथा-आ भूतकाल के प्रत्यय हैं। शव्द-कोशों की ही भाँति शब्दांशों (प्रत्ययों आदि) के भी कोश हम वना सकते हैं अर्थात् शव्द की व्याप्ति की ही तरह इन अर्थपरक तथा व्याकरणिक अंशों की व्याप्ति के भी भौगोलिक चित्र प्रस्तुत कर सकते हैं ।

११. १. ध्वन्यात्मक स्वरूप:

११. १. ०. एक शव्द-विशेष के स्थानीय उच्चारणगत अन्तरों को देख कर यह कहना सहज है कि शव्द तो एक ही है पर स्थान-विशेष में उच्चारण-संबंधी

अन्तर मिल रहा है । लेकिन उस उच्चारण-परिवर्तन के कारण को स्पष्ट करना इतना सरल कार्य नहीं है और इसीलिये भाषा-अध्येता इसके लिये बाध्य भी नहीं होता । हम तो अपना अध्ययन, केवल यह अंकित करते हुये कि क्षेत्र-क्षेत्रान्तरों में उच्चारणगत वैभिश्य मिल रहा है, आरम्भ कर सकते हैं । चाहे तथ्य (इतिहास) का स्पष्टत: प्रसंग दे या न दे, हम तो वैसे ही अपनी सामग्री को ऐतिहासिक आधार पर वर्गीकृत करते हैं, क्योंकि हम ऐसी संभावना करते हैं कि (उदाहरण के लिये) 'सैं~ सैं' और 'सूँ' एक ही मूलभाषा से रूपान्तरित हैं । यद्यपि कतिपय स्थलों पर ऐसी संभावनाएँ गलत भी सिद्ध होती हैं, किन्तु फिर भी प्राय: (अधिकांश स्थलों पर) हमारी संभावनाएँ खरी ही उतरती हैं । यदि हम उच्चारणगत अन्तर को स्पष्ट करने वाले अनेक उदाहरण देखें तो शीघ्र ही ऐसा निष्कर्ष निकल आयेगा कि एक मूल पद्धति (Original System) के ही ये विविध प्रकार के संशोधन (Modifications) हैं और इस दृष्टि से प्रत्येक क्षेत्र की बोली अपनी निज की विशेषताओं से युक्त मिलेगी ।

किसी एक ही बोली-विशेष में अनेकानेक प्रकार के संशोधन मूल पद्धति में क्यों न हुए हों किन्तु हम देखते हैं कि इस प्रकार के ध्वनि-परिवर्तन पद्धति (System) को प्रभावित नहीं कर पाते; यदि किसी एक ध्वनि के सारे उदाहरण समान रीति से संशोधित हुये हों और यही बात प्रत्येक ध्वनि के अन्य समस्त उदाहरणों के साथ हो । अतएव बोलियों के बीच, उनकी ध्वनि-पद्धति में अन्तर न होते हुये भी, स्पष्टत: ध्वन्यात्मक (उच्चारणगत) अन्तर देखे जा सकते हैं ।

११. १. १. परिशिष्ट मानचित्र १ में प्रदर्शित 'रुपया' (हिन्दी) शब्द के दो ध्वन्यात्मक स्वरूप शेखावाटी क्षेत्र में देखे जा सकते हैं । शेखावाटी के पश्चिमी रूपान्तर में 'रिपियो' प्रचलित है तो पूर्वी रूपान्तर में 'रुपियो' । वस्तुत: शेखावाटी बोली के ये दो ही (पश्चिमी और पूर्वी) क्षेत्रीय रूपान्तर मिलते हैं । इन दोनों के मध्य शेखावाटी-प्रदेश की बड़ी नदी 'काटली' का विस्तार-क्षेत्र है जिससे दोनों क्षेत्रों का परस्पर दैनिक सम्पर्क न होने के कारण यह अन्तर देखने को मिलता है । अन्तर के कारण-रूप में यह कहा जा सकता है कि पश्चिमी रूपान्तर का 'रिपियो' ध्वन्यात्मक स्वरूप समीपवर्ती मारवाड़ी बोली के प्रभाव से है और पूर्वी रूपान्तर का 'रुपियो' सीमावर्ती बाँगरू से प्रभावित जान पड़ता है । ये दोनों ध्वन्यात्मक स्वरूप क्षेत्रीय उच्चारणगत विभिन्नता के साक्षी हैं ।

११. १. २. परिशिष्ट मानचित्र २ में हिन्दी सर्वनाम विकारी रूप 'इस, उस, जिस और किस' में से प्रत्येक के दो ध्वन्यात्मक स्वरूप शेखावाटी के दोनों रूपान्तरों में देखे जा सकते हैं । पश्चिमी रूपान्तर में क्रमश: 'ईं, बीं, जीं और कीं' रूप और

पूर्वी रूपान्तर में क्रमश: 'ऐं', वैं', जैं' और कैं' रूप प्रचलित हैं जिनके आधार पर शेखावाटी बोली के दो क्षेत्रीय रूपान्तरों की पुष्टि होती है। साथ ही ये रूप सीमावर्त्ती बोलियों से प्रभावित न होकर केवल क्षेत्रीय उच्चारणगत विशेषता को स्पष्ट करने वाले हैं।

११. १. ३. मानचित्र ३ हिन्दी करण तथा अपादान कारक-चिन्ह 'से' के शेखावाटी में दो ध्वन्यात्मक स्वरूप 'सूं' तथा 'सैं~सैं' को प्रदर्शित करता है। पश्चिमी रुपान्तर में 'सूं' रूप है तो पूर्वी रूपान्तर में 'सैं~सैं' रूप। ये दोनों ध्वन्यात्मक स्वरूप क्षेत्रीय उच्चारणगत वैभिन्य को स्पष्ट करते हुये शेखावाटी के दो क्षेत्रीय रूपान्तरों को प्रस्तुत करने में सहायक हैं।

११. १. ४. मानचित्र ४ में हिन्दी 'इतना-उतना' सार्वनामिक विशेपण शब्दों के मिलने वाले ध्वन्यात्मक स्वरूपों का भौगोलिक वितरण दिखा कर सीमावर्ती बोलियों के साथ भेद स्थापित किया गया है। समस्त शेखावाटी क्षेत्र में, साथ ही मेवाती और तोरावाटी में भी 'इतणो~इत्तो' तथा 'उतणो~उत्तो' रूप प्रचलित हैं, जबकि बाँगरू में 'इतणा' तथा 'उतणा' और मारवाड़ी एवं जयपुरी बोलियों में 'इतरो'-'उतरो' रूप प्रयुक्त होते हैं। इन रूपों के आधार पर केवल क्षेत्रीय उच्चारणगत अन्तर स्पष्ट होता है। बाँगरू हिन्दी के अधिक समीप होने के कारण आकारान्त है, जबकि अन्य शेखावाटी, तोरावाटी, मेवाती, मारवाड़ी और जयपुरी आदि बोलियाँ ओकारान्त हैं। शेखावाटी के बाहर तोरावाटी व मेवाती में उच्चारण का यह साम्य किसी प्रकार के ऐतिहासिक सम्पर्क का परिणाम अवश्य है। 'विपय-प्रवेश' में इस प्रकार के सम्पर्क की चर्चा की जा चुकी है कि शेखावाटी का समीपवर्ती प्रदेशों से किस प्रकार का सम्पर्क रहा है।

११. २. एक शब्द : विभिन्न अर्थ:

११. २. ०. संकलित सामग्री के आधार पर जब हम इस निष्कर्प पर पहुँच जायें कि एक ही शब्द क्षेत्र-क्षेत्रान्तरों में विविध अर्थ धारण करता है तो सामान्यत: उस शब्द का अपना विशिष्ट अर्थ एक क्षेत्र विशेप में ही प्रसारित मिलता है, जिसका भौगोलिक वितरण भापा-अध्येता प्रस्तुत कर सकता है। क्षेत्र विशेप में विशिष्ट अर्थ रखने वाले शब्दों को सहस्रों की संख्या में एकत्र कर लेना अत्यंत कठिन कार्य है और फिर उन सबका भौगोलिक वितरण दिखा सकना तो और भी कष्ट-साध्य बात है। अतएव यहाँ कतिपय गिने-चुने शब्दों के आधार पर ही अर्थ का भौगोलिक वितरण देखा जा रहा है।

११. २. १. मानचित्र ५ में हिन्दी 'रुदन' के लिये प्रचलित शब्द 'रोज' का क्षेत्रीय वितरण दिखाया गया है। बाँगरू को छोड़कर शेप सभी सीमावर्ती

बोलियों में भी यह (रोज्) शब्द 'रुदन' के अर्थ में प्रचलित है। बाँगरू में यह शब्द 'सदैव' के अर्थ में प्रचलित है। इस प्रकार शब्द एक है किन्तु क्षेत्र विशेष में दो अर्थों में प्रचलित है। इस शब्द के आधार पर यदि भाषा-तात्त्विक रेखा (isogloss) खींची जाये तो राजस्थान शेष हिन्दी-प्रदेश से कटकर अलग हो जायेगा। यह तथ्य मान्य है कि जब कोई भाषा-तत्त्व किसी बड़े क्षेत्र में व्याप्त होता है तो ऐतिहासिक दृष्टि से वह बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि वह एक बड़ी प्राचीन सुगठित भाषा-इकाई या सांस्कृतिक-राजनीतिक-इकाई की ओर इंगित करने वाला होता है। उसके आधार पर ऐतिहासिक निष्कर्षों की पुष्टि होती है अर्थात् कहा जा सकता है कि यह शब्द राजस्थान को एक सुगठित इकाई-रूप में प्रस्तुत करने वाला है। यह सत्य है कि प्राचीन काल में भाषायी, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनीतिक दृष्टि से राजस्थान एक इकाई रहा है।

११. २. २. मानचित्र ६ में हिन्दी 'आदत' के लिए प्रचलित शेखावाटी शब्द 'बाण्' का क्षेत्रीय वितरण ऊपर की ही भाँति दिखाया गया है। 'बाण्' शब्द एक होकर भी बाँगरू क्षेत्र में तथा अन्य हिन्दी-क्षेत्र में 'तीर' अर्थ रखने के कारण भिन्नार्थी है।

११. २. ३. मानचित्र ७ में हिन्दी 'को' (कर्म कारक-चिन्ह) के लिये प्रचलित शेखावाटी शब्द 'नैं' का क्षेत्रीय वितरण प्रस्तुत किया गया है। यही 'नैं' कारक-चिन्ह बाँगरू में भिन्न व्याकरणिक अर्थ (कर्ता कारक-संबंध) रख रहा है तो शेखावाटी और अन्य सीमावर्त्ती बोलियों—मारवाड़ी, जयपुरी, तोरावाटी और मेवाती आदि में अपना अन्य व्याकरणिक अर्थ (कर्म कारक-संबंध) धारण करता है। कहना न होगा कि यह (नैं) भी उतने ही क्षेत्र में कर्मकारक-संबंध के अर्थ में व्याप्त है जितने क्षेत्र में उपर्युक्त दो शब्द 'रोज्' और 'बाण्'।

११. ३. एक वस्तु या भाव : विभिन्न शब्द :

११. ३. ०. संगृहीत सामग्री के आधार पर जब यह पता लग जाये कि एक ही वस्तु या भाव की अभिव्यक्ति के लिये एक से अधिक शब्द प्रचलन में हैं तो सामान्यतः उनमें (अनेकानेक शब्दों में) से प्रत्येक शब्द का अपना निज का भौगोलिक वितरण दिखाई पड़ता है। इस प्रकार के क्षेत्रीय वितरणों को प्रदर्शित करना भाषा-अध्येता का कार्य है। भाषा-अध्येता की केवल इस बात में ही अभिरुचि नहीं होती कि वह अधिक से अधिक ऐसे शब्दों की खोज करे जो एक ही वस्तु या भाव के लिए व्यवहृत होते हैं, बल्कि उसकी रुचि इस बात में भी रहती है कि वह प्रत्येक शब्द का युक्ति-युक्त क्षेत्र या क्षेत्रों का परिसीमन करे जहाँ वह शब्द विशेष प्रयोग में है। शब्दों के भौगोलिक अध्ययन के लिये सहस्रों शब्दों का वितरण देख

सकना असंभव ही है। फिर भी शब्दों का चुनाव करके उन पर विशेष ध्यान दिया जा सकता है। कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि एक ही वस्तु या भाव को प्रकट करने वाले अनेकानेक शब्द ऐतिहासिक दृष्टि से एक ही शब्द-विशेष के रूपान्तर होते हैं, यथा—सहायक क्रिया-रूप 'है', 'सै', 'छै' आदि 'अस्ति' के ही रूपान्तर हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह जानते हुये भी कि एक ही रूप से संबंधित ये विभिन्न शब्द-रूप हैं, किन्तु फिर भी संकालिक (Synchronic) अध्ययन की दृष्टि से हम उन्हें विभिन्न शब्द-रूपों में ग्रहण कर रहे हैं। यदि कोई इन विभिन्न शब्द-रूपों को ऐतिहासिक दृष्टि से एक ही रूप के परिवर्तित ध्वनि-स्वरूपों के रूप में ग्रहण करके क्षेत्रीय वितरण प्रस्तुत करना चाहे तो वह इसके लिए पूर्ण स्वतंत्र है, किन्तु कभी-कभी इस प्रकार के अध्ययन त्रुटिपूर्ण होते हैं। ऐतिहासिक ज्ञान की पूर्णता में ही त्रुटियों का परिहार हो सकता है।

११. ३. १. मानचित्र ८ में हिन्दी 'चूहा' के लिए क्षेत्र-विशेष में प्रचलित विभिन्न शब्दों का वितरण दिखाया गया है। शेखावाटी में 'चूसो', जयपुरी में ऊँदरो', मारवाड़ी-तोरावाटी-मेवाती में 'मूसो' शब्द प्रचलित है। यहाँ यह कह देना अनुचित न होगा कि 'चूहा' के लिये 'मूसो' शब्द का प्रयोग यत्र-तत्र शेखावाटी में भी है, किन्तु शेखावाटी का अपना शब्द 'चूसो' ही है। इस शब्द के आधार पर शेखावाटी का क्षेत्र अन्य बोलियों के क्षेत्रों से पृथक कट कर प्रस्तुत होता है।

११. ३. २. मानचित्र ९ में हिन्दी अनिश्चयवाचक सर्वनाम 'क्या' के लिये प्रचलित विभिन्न शब्दों का क्षेत्रीय वितरण प्रस्तुत किया गया है। शेखावाटी में इसके लिये 'के', सीमावर्त्ती बाँगरू में भी 'के' किन्तु अन्य मारवाड़ी, जयपुरी, तोरावाटी तथा मेवाती में 'काँई' शब्द प्रचलित है।

११. ३. ३. मानचित्र १० में हिन्दी अव्यय शब्द 'कहाँ' के लिये प्रयुक्त होने वाले विभिन्न शब्दों का स्थानीय वितरण दिखाया गया है जिसके आधार पर शेखावाटी बाँगरू एवं जयपुरी बोलियों से अपना पार्थक्य [illegible] है। [illegible] क्षेत्र में 'कठै' शब्द प्रयुक्त होता है, साथ ही [illegible] और [illegible] भी, किन्तु जयपुरी में 'कोड़ै' शब्द और बाँगरू में [illegible] शब्द प्रयुक्त [illegible], जो उन बोलियों की अपनी निज की विशेषता [illegible] है।

११. ३. ४. मानचित्र ११ में हिन्दी [illegible] प्रचलित अनेकानेक शब्दों का स्थानीय [illegible] किया गया है। [illegible] इनके लिये 'अठै,उठै~वठै' [illegible] क्षेत्रों के लिये अपरिचित शब्द हैं [illegible]

हैं तो जयपुरी में 'अण्डै-उण्डै' शब्द प्रसारित हैं। इन शब्दों की दृष्टि से भी शेखावाटी अपनी सीमावर्त्ती जयपुरी और बाँगरू से पार्थक्य रखती है।

मानचित्र १० और ११ में प्रदर्शित अव्यय शब्दों के आधार पर कहा जा सकता है कि मारवाड़ी के प्रभाव-स्वरूप ही शेखावाटी, तोरावाटी और मेवाती में इनकी परिव्याप्ति हुई क्योंकि मारवाड़ी इन क्षेत्रों की साहित्यिक भाषा रही है।

११. ३. ५. मानचित्र १२ में हिन्दी सर्वनाम शब्द 'कुछ' के लिये प्रचलित विविध शब्दों का भौगोलिक वितरण देखा जा सकता है। शेखावाटी में 'किमि~किऊँ' शब्द प्रचलित मिलता है। अन्य सीमावर्त्ती बोलियों के लिये यह शब्द अपरिचित है। मारवाड़ी, जयपुरी और तोरावाटी में 'किमि' के स्थान पर 'काँई' शब्द प्रयोग में है, मेवाती में 'कछु' तो बाँगरू में 'कुछ' शब्द प्रचलित देखे जाते हैं। शेखावाटी की स्वतंत्र भाषा-इकाई के रूप में पुष्टि के लिये यह शब्द महत्वपूर्ण है।

११. ३. ६. मानचित्र १३ में हिन्दी विकारी सर्वनाम शब्द 'किस' के लिये प्रचलित भिन्न-भिन्न शब्दों का वितरण देखा गया है। शेखावाटी में 'कैं~कीं' शब्द प्रयुक्त होता है। मारवाड़ी और जयपुरी में 'कुण्' तथा बाँगरू में 'किस्' शब्द प्रयोग में मिलते हैं। मेवाती और तोरावाटी में शेखावाटी के सदृश 'कैं~कीं' ही प्रचलन में है। इस शब्द के आधार पर शेखावाटी का क्षेत्र मारवाड़ी, जयपुरी और बाँगरू बोलियों के क्षेत्रों से पृथक कट जाता है जो उसके स्वतंत्र भाषा-इकाई होने की बात को पुष्ट करता है।

११. ३. ७. मानचित्र १४ में हिन्दी विकारी सर्वनाम रूप 'इस' और 'उस' के लिये प्रचलित विभिन्न शब्द-रूपों के प्रसार-स्थानों का निरूपण है। शेखावाटी में इनके लिये ऐं~ईं' तथा 'वैं~वीं' रूप प्रचलित हैं। मारवाड़ी और जयपुरी में 'इण्' एवं 'उण्-~विण्' रूप प्रचलित है। इन रूपों के संबंध में ऐसा संभव जान पड़ता है कि ये बहुवचन के रूप हैं जो एक वचन में आ गये हैं। बाँगरू में इनके लिये 'इस्' और 'उस्' शब्द-रूप व्यवहृत होते हैं। इन शब्दों के आधार पर शेखावाटी मारवाड़ी, जयपुरी और बाँगरू की तुलना में एक पृथक स्वतंत्र बोली सिद्ध होती है। मेवाती और तोरावाटी में इन शब्दों की समानता इस बात का मूक संकेत करती है कि किसी काल में किसी प्रकार का कोई सम्पर्क इन क्षेत्रों में अवश्य रहा होगा।

११. ३. ८. मानचित्र १५ में हिन्दी वर्तमानकाल की सहायक-क्रिया 'है' के लिये प्रचलित भिन्न-भिन्न सहायक क्रिया-रूपों का स्थानगत वितरण देखा जा सकता है। शेखावाटी में 'है' रूप प्रचलित है तो जयपुरी और तोरावाटी में 'छै'। बाँगरू में 'सै' रूप प्रयुक्त होता देखा जाता है। मारवाड़ी और मेवाती क्षेत्रों में शेखावाटी के

समान ही 'है' रूप प्रसारित है। इस सहायक क्रिया-रूप की दृष्टि से शेखावाटी जयपुरी, तोरावाटी और बाँगरू से पार्थक्य रखती है किन्तु मारवाड़ी और मेवाती के अधिक समीप जान पड़ती है। बहुत संभव है मारवाड़ी के प्रभाव के कारण ही शेखावाटी में 'है' रूप मिल रहा है। मारवाड़ी यहाँ की दीर्घकाल से साहित्यिक भाषा होने के कारण शेखावाटी पर अपना भाषागत प्रभाव बराबर डालती रही है। फिर मारवाड़ी और शेखावाटी एक ही प्राकृत से संबंधित भी हैं (विषय-प्रवेश) और सांस्कृतिक दृष्टि से भी दोनों क्षेत्र एक हैं।

११. ३. ९. मानचित्र १६ में भूतकालिक सहायक क्रिया-रूप 'था' के लिये प्रचलित अनेकानेक क्षेत्रीय रूपों का वितरण देखा गया है। शेखावाटी के पूर्वी एवं पश्चिमी रूपान्तर की ऊपर चर्चा की जा चुकी है और भूतकालिक सहायक क्रिया-रूपों के आधार पर उन दोनों रूपान्तरों की पुन: पुष्टि देखी जा सकती है। शेखावाटी के पूर्वी रूपान्तर में 'थो' रूप प्रचलित है तो पश्चिमी रूपान्तर में 'हो'। इस संबंध में संकेत किया जा सकता है कि 'हो' मारवाड़ी से प्रभावित जान पड़ता है और 'थो' रूप हिन्दी एवं बाँगरू से। जयपुरी, तोरावाटी और मेवाती बोलियों में 'हो' और 'थो' रूप न मिल कर 'छो' रूप प्रयुक्त होता है। इसमें भी उपर्युक्त मानचित्र १५ के तथ्य ही निष्कर्ष रूप में रक्खे जा सकते हैं।

११. ३. १०. मानचित्र १७ में हिन्दी क्रियार्थक संज्ञा के विभक्ति-प्रत्यय '-ना' के लिये प्रयुक्त होने वाले विभिन्न विभक्ति-प्रत्ययों का वितरण देखा गया है। शेखावाटी के दो पूर्वी और पश्चिमी रूपान्तरों की पुष्टि में यह विभक्ति-प्रत्यय भी सहायक है क्योंकि पूर्वी रूपान्तर में -'णो' का प्रयोग होता है तो पश्चिमी में -'बो' का। इसके अतिरिक्त जयपुरी और तोरावाटी में भी -'बो' विभक्ति-प्रत्यय ही काम करता हुआ मिलता है। मारवाड़ी और मेवाती में शेखावाटी के पूर्वी रूपान्तर के समान ही -'णो' विभक्ति-प्रत्यय प्रयुक्त होता है। बाँगरू में -'णा' रूप में विभक्ति-प्रत्यय का योग देखा जाता है। इस प्रकार शेखावाटी क्षेत्र दो रूप -'बो' और -'णो' रखने के कारण मारवाड़ी और जयपुरी बोलियों की विशेषता का संधि-स्थल जान पड़ता है जो कि सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सम्पर्कों के परिणाम-रूप में स्वाभाविक ही है।

११. ३. ११. मानचित्र १८ में हिन्दी पुरुषवाचक सर्वनाम के संबंधवाची रूपों का निर्माण करने वाले कारक विभक्ति-प्रत्यय -'रा' के लिये प्रचलित विभिन्न विभक्ति-प्रत्ययों के प्रसार क्षेत्र देखे गये हैं। शेखावाटी में प्रचलित विभक्ति-प्रत्यय -'रो' है। मारवाड़ी, तोरावाटी और मेवाती में भी यही विभक्ति-प्रत्यय व्यवहार में मिलता है। बाँगरू में वह '-रा' रूप में उपलब्ध है किन्तु जयपुरी में-'को' रूप में मिलता

है। स्पष्ट है कि जयपुरी ने संज्ञा-शब्दों के विकारी रूपों के साथ व्यवहृत होने वाले संबंध कारक-चिन्ह 'को' को ही सर्वनाम रूपों के लिए भी अपना लिया है। इस संबंध में शेखावाटी की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उसमें दुहरे '-र+ल्-' विभक्ति-प्रत्यय (देखिये, सर्वनाम-पद-रचना, ४. ४. १.) की भी संयोजना पाई जाती है जो किसी भी सीमावर्ती बोली में नहीं है।

११. ३. १२. मानचित्र १९ में हिन्दी भविष्यत् रूप-रचना में सहायक विभक्ति-प्रत्यय -'गा' के लिये प्रयुक्त होने वाले विविध क्षेत्रीय विभक्ति-प्रत्ययों का निरूपण किया गया है। शेखावाटी में दो प्रकार के प्रत्यय देखे जा सकते हैं—पश्चिमी रूपान्तर में -'स्य्'- और पूर्वी रूपान्तर में -'ग्-'। सीमावर्ती मारवाड़ी बोली में -'स्य'- प्रचलन में है और बहुत संभव है कि उसी के प्रभाव से शेखावाटी के पश्चिमी रूपान्तर में यह आ गया हो। पूर्व की ओर स्थित बाँगरू में -'ग्'- प्रत्यय व्यवहृत होता है और इस संबंध में ही ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि शेखावाटी के पूर्वी रूपान्तर में मिलने वाला -'ग्'- प्रत्यय उसी के प्रभाव का फल है। दक्षिण में जयपुरी और तोरावाटी में -'ल्'- प्रत्यय मिलता है जो इन क्षेत्रों को शेखावाटी क्षेत्र से पृथक करता है। शेखावाटी में दोनों प्रकार के प्रत्ययों की उपलब्धि उसे मारवाड़ी और बाँगरू बोलियों के प्रभाव का संधि-स्थल-रूप प्रदान करती है।

अब उपर्युक्त भाषा-तात्विक विशेषताओं में से अधिकांश को आधार बनाकर भाषा-तात्विक रेखाएँ एक साथ इस प्रकार खींची जा सकती हैं जो शेखावाटी क्षेत्र को ऐसी सघनता से आच्छादित करेंगी कि वह एक स्वतंत्र भाषा-इकाई-रूप में दृष्टिगत होगा और वहाँ अनेकानेक भाषा-तात्विक विशेषताएँ व्याप्त दिखाई पड़ेंगी। जिस क्षेत्र में अनेकानेक विशेषताएँ आकर एकत्र होती हैं, वह भाषा-तात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण क्षेत्र माना जाता है। इसके अतिरिक्त भाषेतर अर्थात् राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अथवा भौगोलिक दृष्टि से भी उस क्षेत्र का कम महत्व नहीं होता।

११. ४. मानचित्र २० भाषातात्विक रेखा संघात (Bundle of Isoglosses) को प्रदर्शित करता है। इसमें खींची गई रेखाएँ ध्वन्यात्मक स्वरूपों, एक शब्द के स्थानगत विभिन्न अर्थों तथा एक वस्तु या भाव के लिये प्रचलित क्षेत्र-विशेष में विभिन्न शब्दों को स्पष्ट करने वाली हैं। अब क्रमशः प्रत्येक रेखा को स्पष्ट किया जा सकता है। रेखा १ तथा २ करण तथा अपादान कारक-चिन्ह 'सूँ' तथा 'सैं'~'सै' को स्पष्ट करने वाली हैं। दोनों रूप शेखावाटी में मिलने के कारण दोनों रेखाएँ शेखावाटी क्षेत्र को दो पृथक भागों में विभाजित करती हुई निकली हैं। रेखा ३

'इतणो~इत्तो' और 'उतणो~उत्तो' शब्दों के आधार पर खींची गई है। मानचित्र ४ में स्पष्ट किया गया था कि हिन्दी 'इतना' के ध्वन्यात्मक स्वरूप क्षेत्र-विशेष में विभिन्नता रखते हैं। शेखावाटी इनके आधार पर खींची गई रेखा से राजस्थानी से पृथक हो जाती है। रेखा ४ 'एं~ई' 'वं~वीं' (मानचित्र २ में प्रदर्शित) शब्द-रूपों की उच्चारणगत विशेषता के आधार पर शेखावाटी को राजस्थानी बोलियों से पृथक करती है। रेखा ५ सबंध कारक-चिन्ह 'को' को आधार बना कर खींची गई है। राजस्थानी की पूर्वी बोलियों शेखावाटी, जयपुरी, तोरावाटी और मेवाती में इसकी उपलब्धि देखी जा सकती है किन्तु मारवाड़ी में 'रो' मिलता है। बांगरू में 'का' रूप प्रचलित है। अतएव शेखावाटी क्षेत्र में 'को' के प्रसार को रेखा ५ बताती है। रेखा ६ मानचित्र ५-६ के आधार पर खींची गई है। 'रोज्' और 'वाण्' शब्दों के अर्थ-पक्ष की दृष्टि से हिन्दी-प्रदेश से राजस्थानी-क्षेत्र को रेखा ६ अलग करती हुई देखी जा सकती है। रेखा ७ हिन्दी 'चूहा' के लिये 'शेखावाटी के 'चूसो' शब्द को स्पष्ट करने के लिये खींची गई है। यह शब्द विशेष केवल शेखावाटी में व्यवहृत होता है ; अतएव रेखा ७ राजस्थानी-क्षेत्र से शेखावाटी-प्रदेश को पृथक करते हुए खींची गई है। रेखा ८ हिन्दी 'क्या, कुछ' शब्दों के लिये शेखावाटी में प्रचलित 'के, किमि' शब्दों के आधार पर खींची गई है। यह रेखा भी शेखावाटी क्षेत्र को अन्य बोली-क्षेत्रों से अलग करने वाली है।

रेखा ९ भविष्यत् काल के प्रत्यय '-स्य्-' के आधार पर प्रदर्शित है। शेखावाटी के पश्चिमी रूपान्तर में व्यवहृत होने के कारण रेखा ९ शेखावाटी क्षेत्र के बीच से गुजरी है। रेखा १० शेखावाटी के पूर्वी रूपान्तर में भविष्यकाल की रूप-रचना में सहायक '-ग्-' प्रत्यय के लिये खींची गई है। यह भी शेखावाटी-क्षेत्र के बीच से निकली है, साथ ही भूतकालिक सहायक क्रिया-रूप 'थो' का क्षेत्र भी वही है जो -'ग्'- प्रत्यय का है। रेखा ११ भूतकालिक सहायक क्रिया-रूप 'हो' के प्रसार-क्षेत्र को स्पष्ट करने वाली है। इसका प्रसार-क्षेत्र शेखावाटी का पश्चिमी भू-भाग और सुदूर मारवाड़ी-क्षेत्र है।

अस्तु समस्त भाषातात्विक रेखाएँ शेखावाटी-क्षेत्र में व्याप्त होने के कारण उसे अनेक भाषातात्विक विशेषताओं का संधि-स्थल-रूप प्रदान कर रही हैं। कुछ विशेषताएँ तो शेखावाटी-क्षेत्र का परिसीमन भी करती हुई दृष्टिगत होती हैं। वैसे सारा क्षेत्र रेखाओं से आच्छादित होने के कारण अपने में महत्वपूर्ण है। ऐसे क्षेत्र की महत्ता को स्पष्ट करते हुये भाषाविद् सी० एफ० हाकेट का मत है "When isogloss-maps are superposed the lines representing the different isoglosses sometimes appear to criss-cross in the wildest

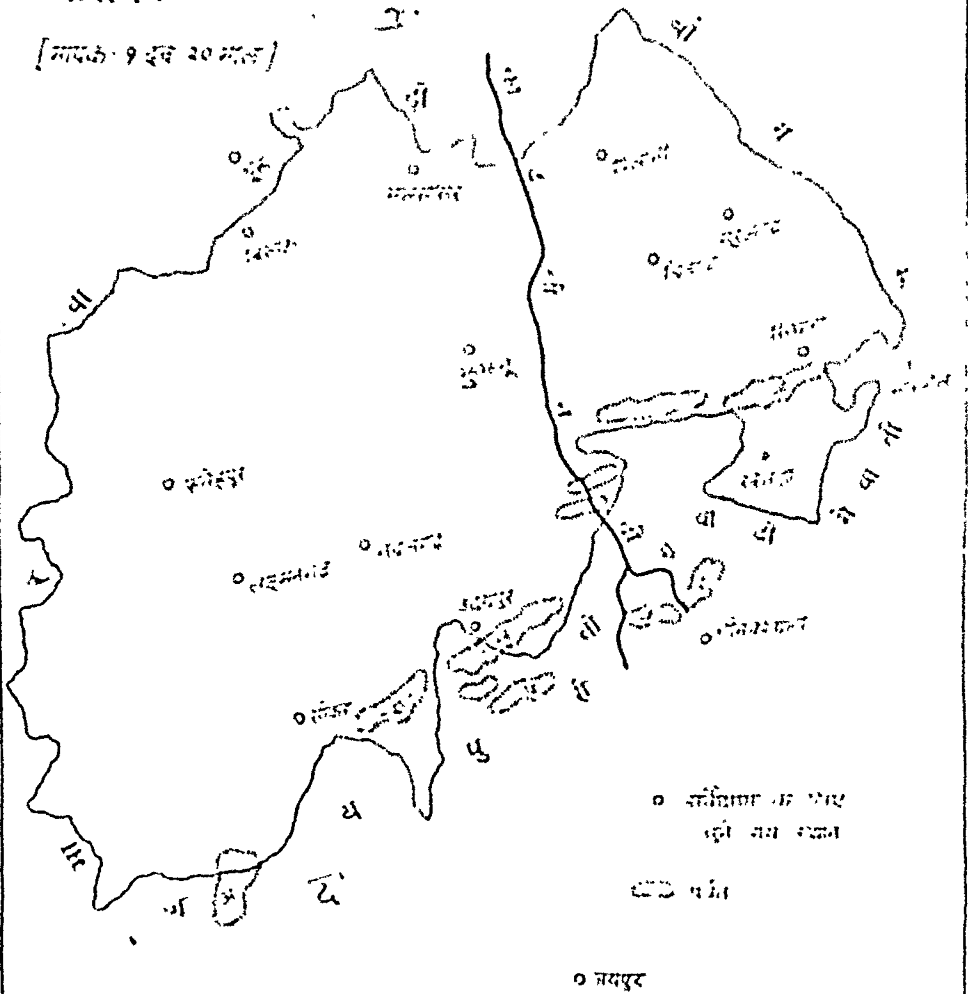
manner: yet one also discovers many instances in which a number of isoglosses run along roughly together. Such a bundle of isoglosses constitutes a more important dialect boundary than does any isolated isogloss, and a thicker bundle is more significant than a thinner one. A region bounded by bundle of isoglosses is often called a dialect area, and may be given a name."[1]

स्पष्ट है कि शेखावाटी-प्रदेश एक बोली विशेष का क्षेत्र है जहाँ की भाषा को एक स्वतंत्र नाम 'शेखावाटी' प्राप्त है।

1—A Course in Modern Linguistics, Page 476.

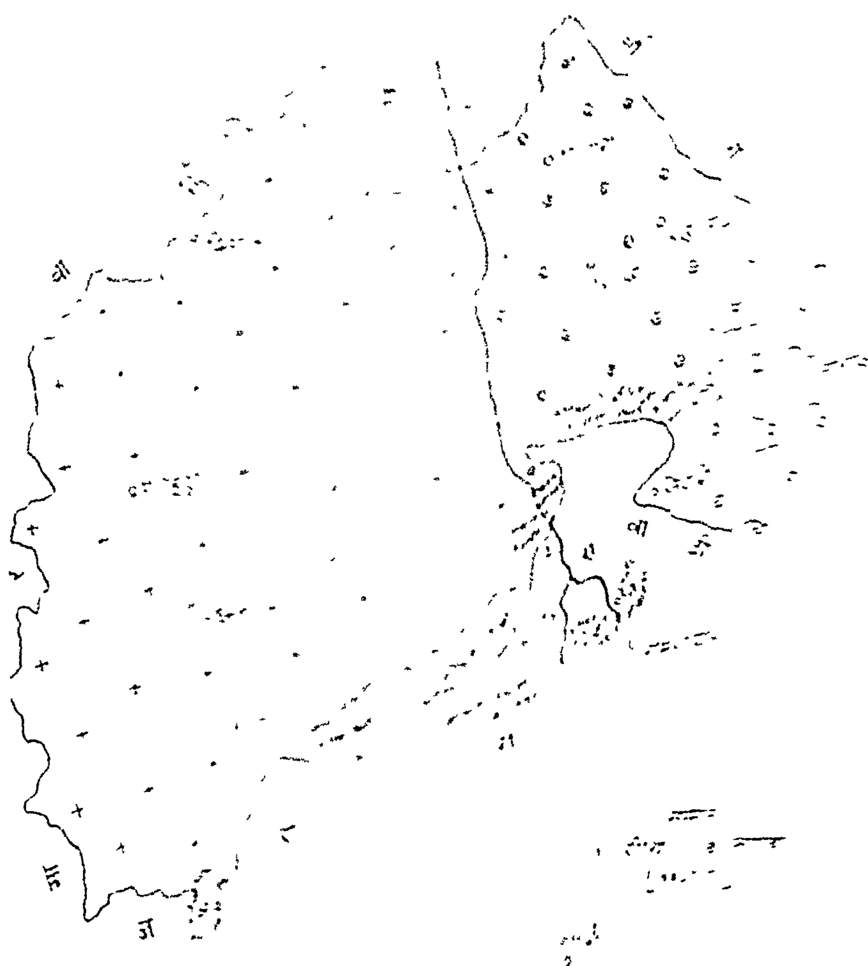
——:o:——

परिशिष्ट


शेखावाटी
का
मानचित्र
भाषा - भूगोल
जयपुर

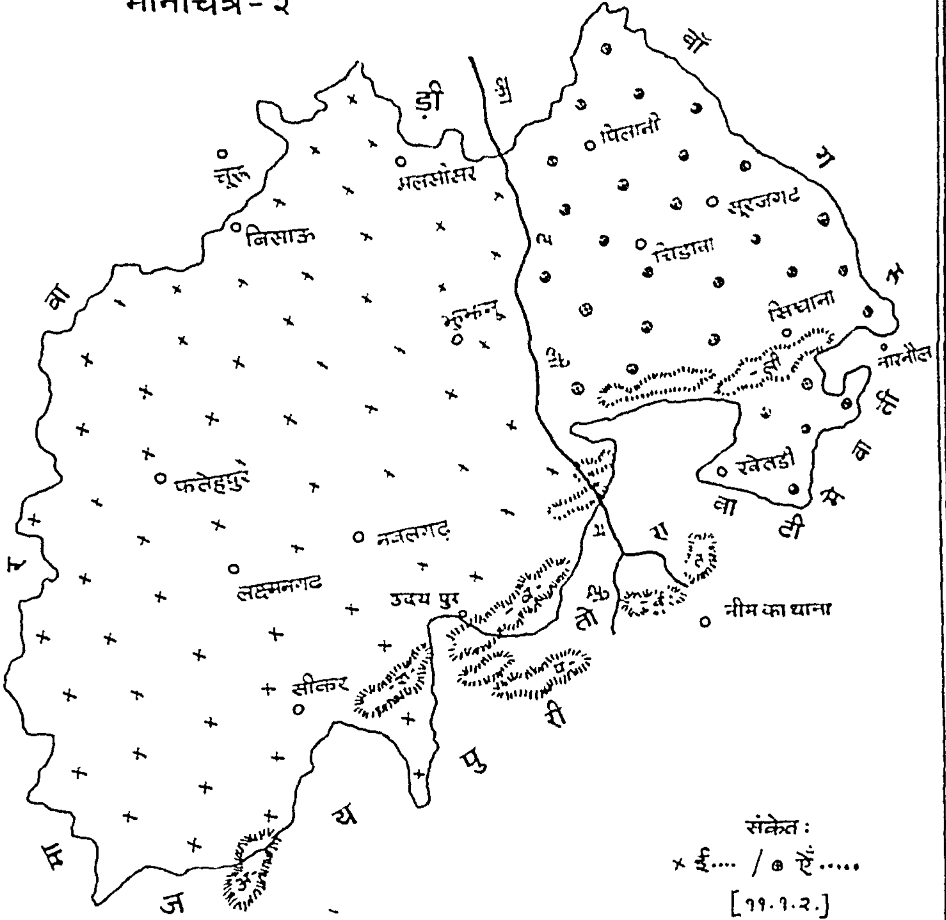
भाषा भूगोल

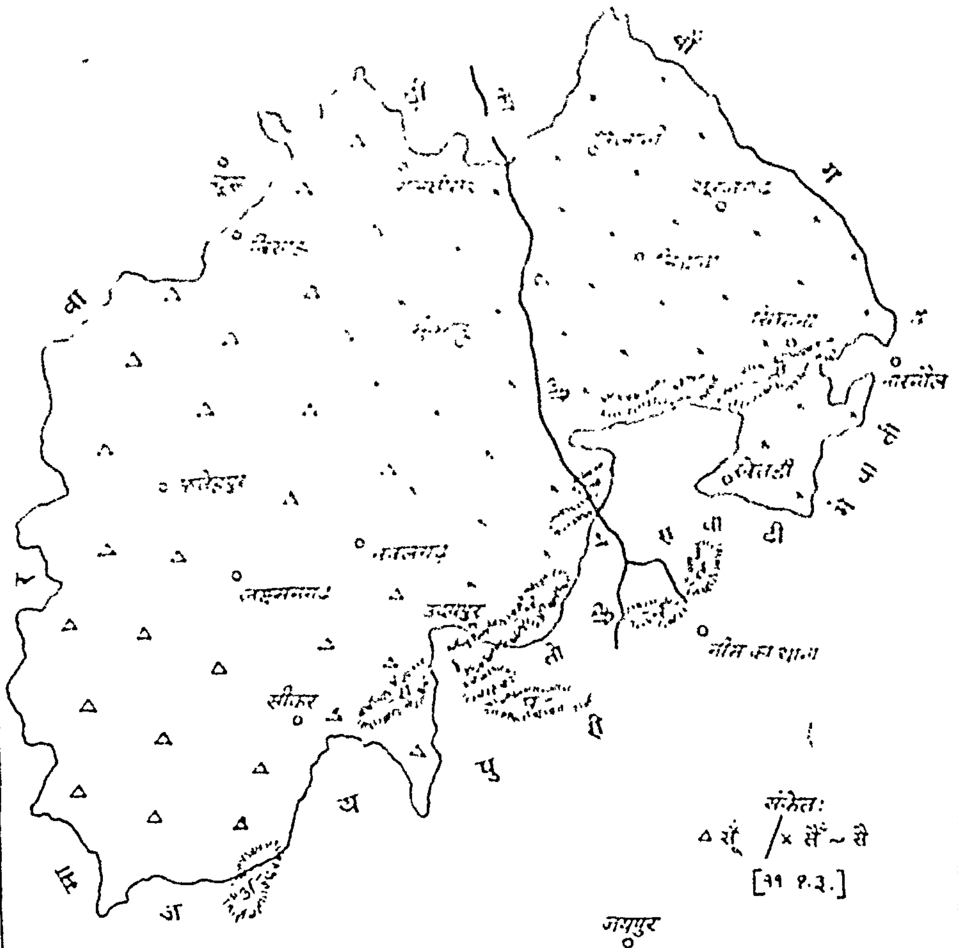
मानचित्र - २



भाषा - भूगोल

मानचित्र - २

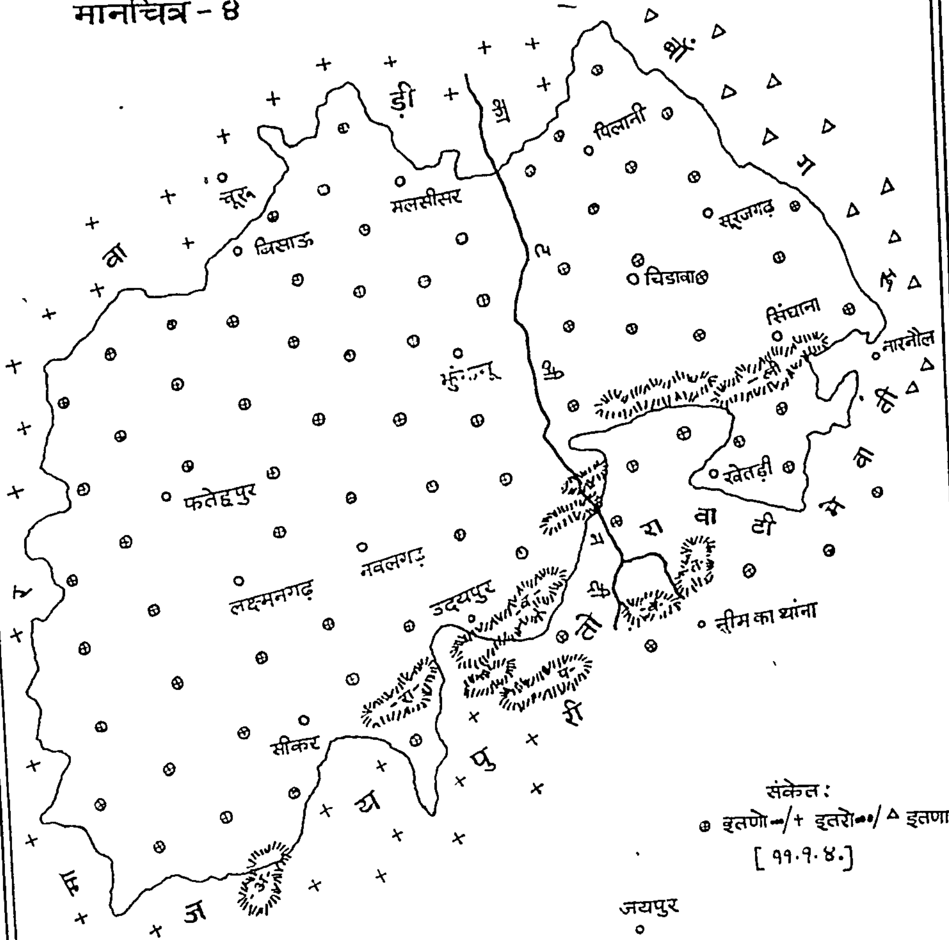




भाषा-भूगोल
मानचित्र - 3
सीकर
जयपुर
खेतड़ी
नारनौल
नीम का थाना
संकेत:
△ रहूं /x सैं ~ सै
[३१ १.३.]

भाषा - भूगोल

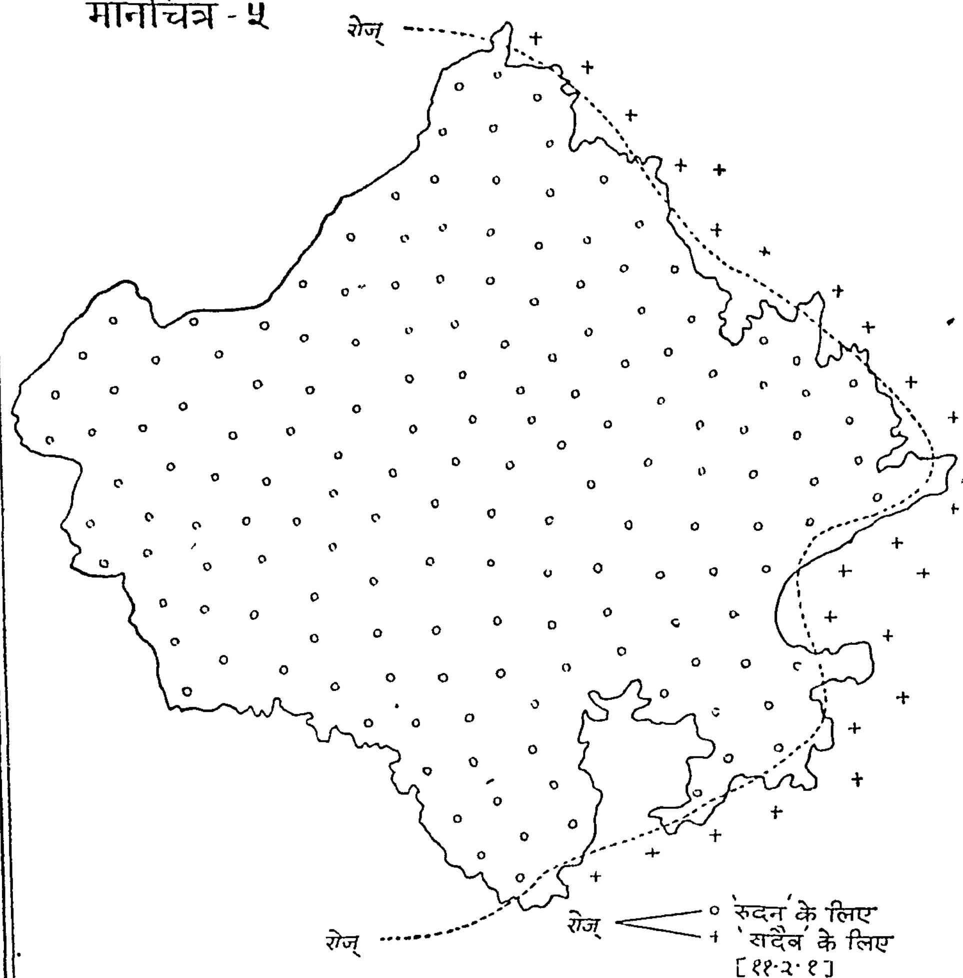
मानचित्र - ४



भाषा - भूगोल

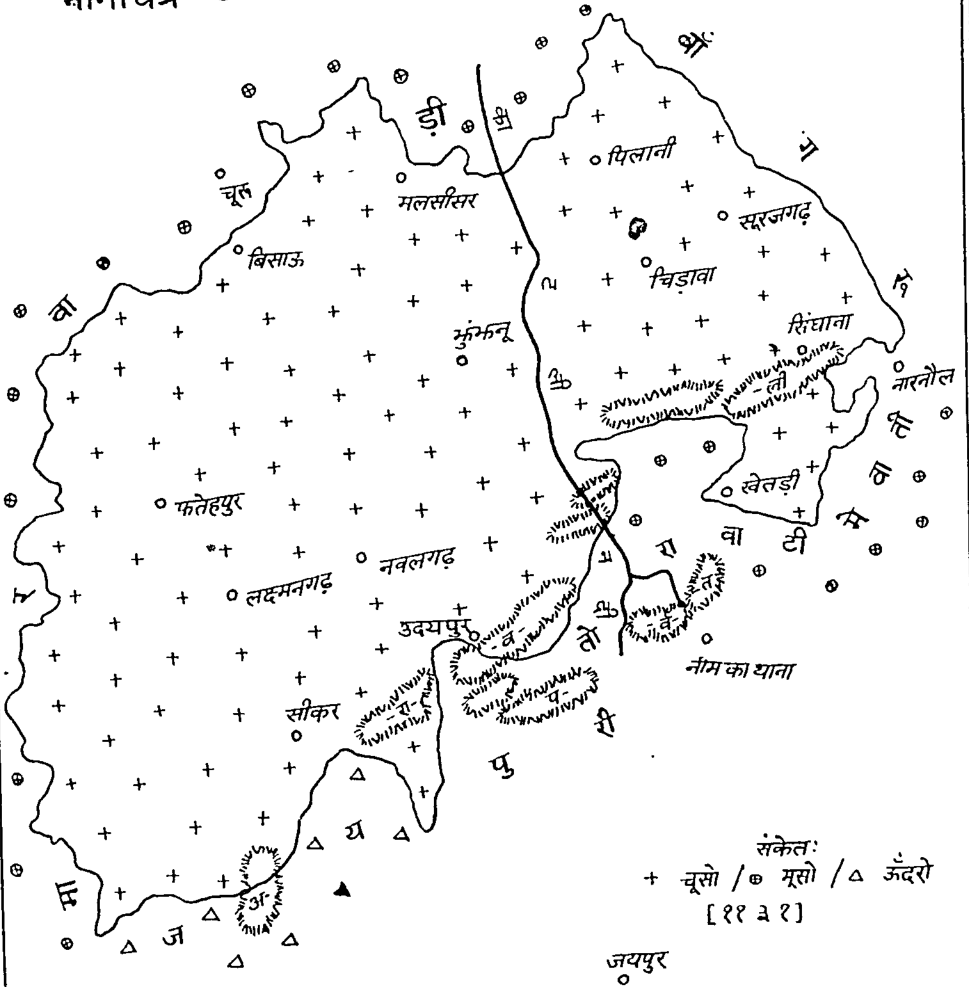
राजस्थान

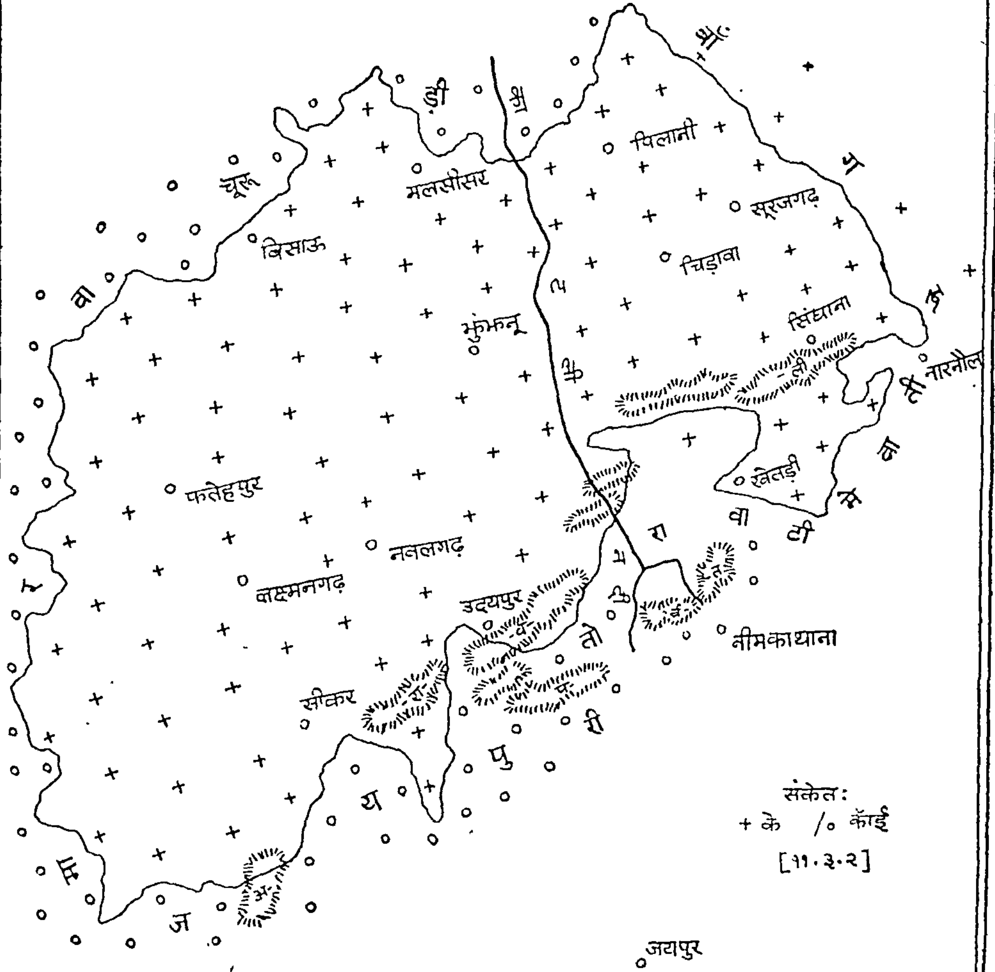
मानचित्र - ५



भाषा - भूगोल

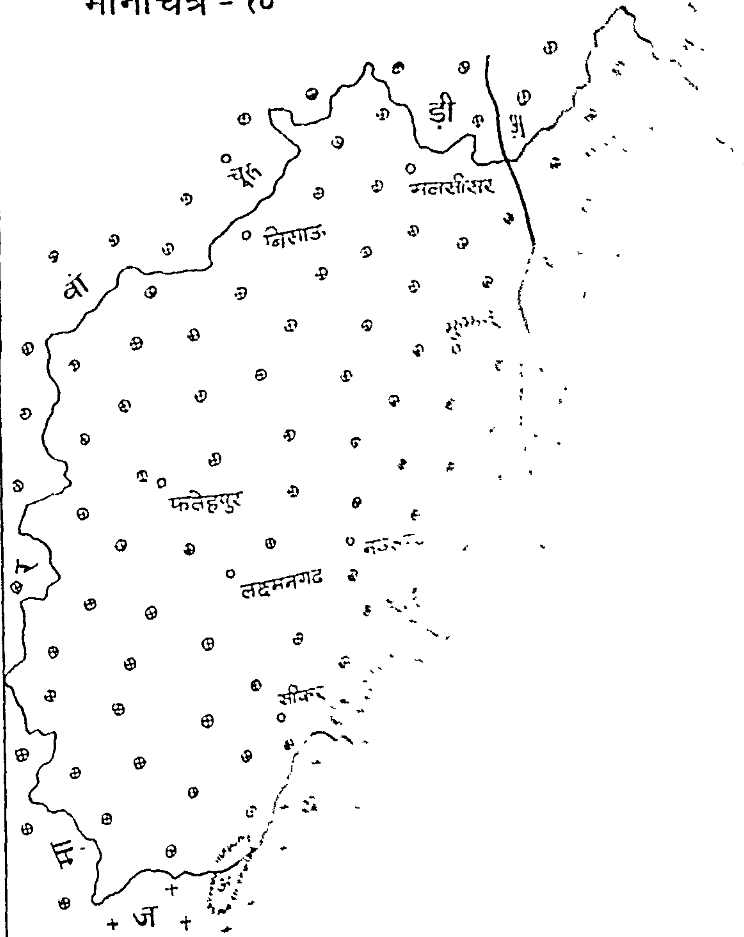
मानचित्र - ८




भाषा - भूगोल
मानचित्र - ९
चूरू
बिसाऊ
मलसीसर
पिलानी
सूरजगढ़
चिड़ावा
सिंघाना
नारनौल
झुंझनू
फतेहपुर
नवलगढ़
लक्ष्मनगढ़
उदयपुर
खेतड़ी
नीमकाथाना
सीकर
जयपुर
संकेत:
+ के /ο कॉई
[११.३.२]

भाषा-भूगोल

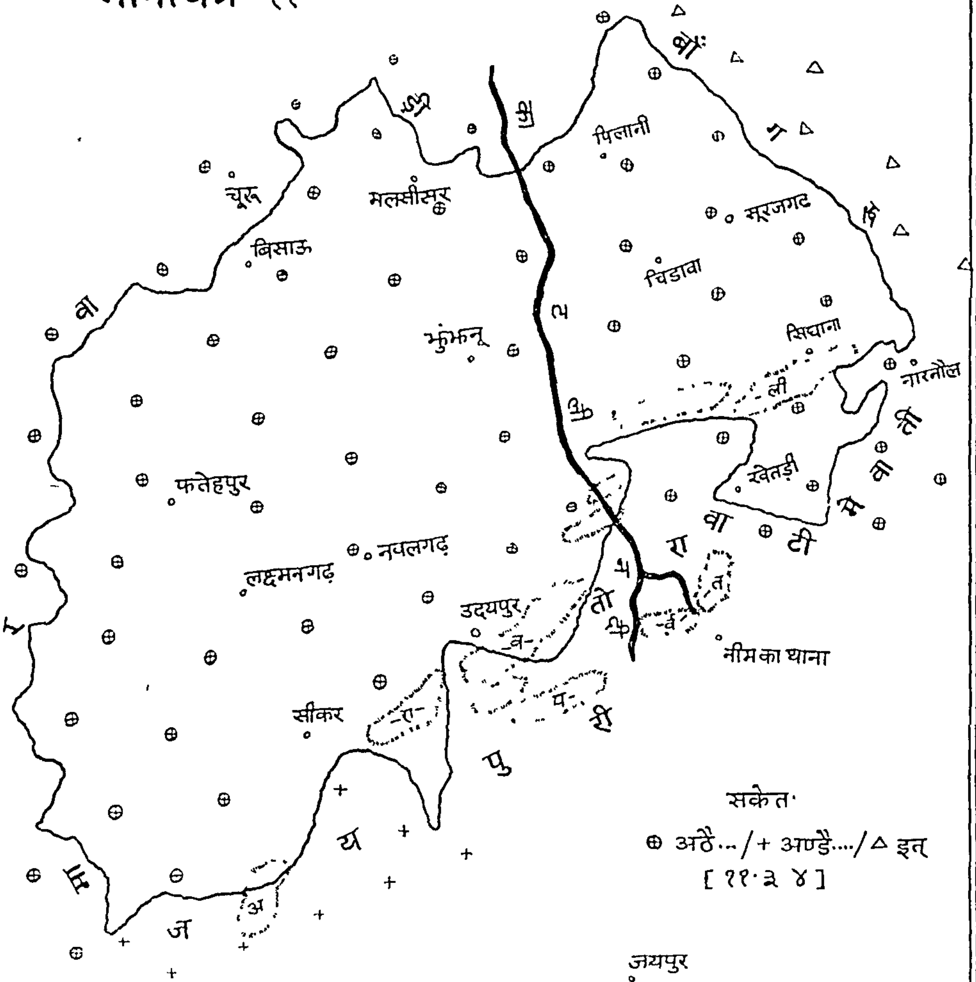
मानचित्र - १०



इत्

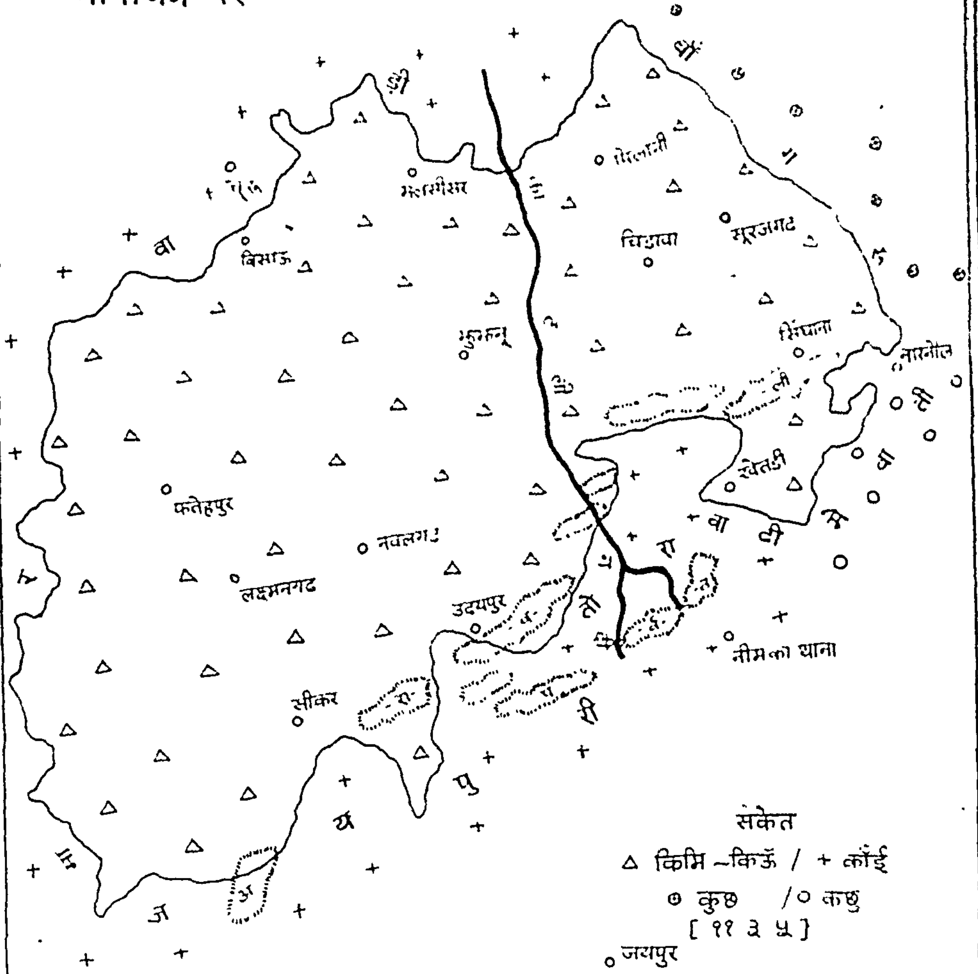
भाषा-भूगोल

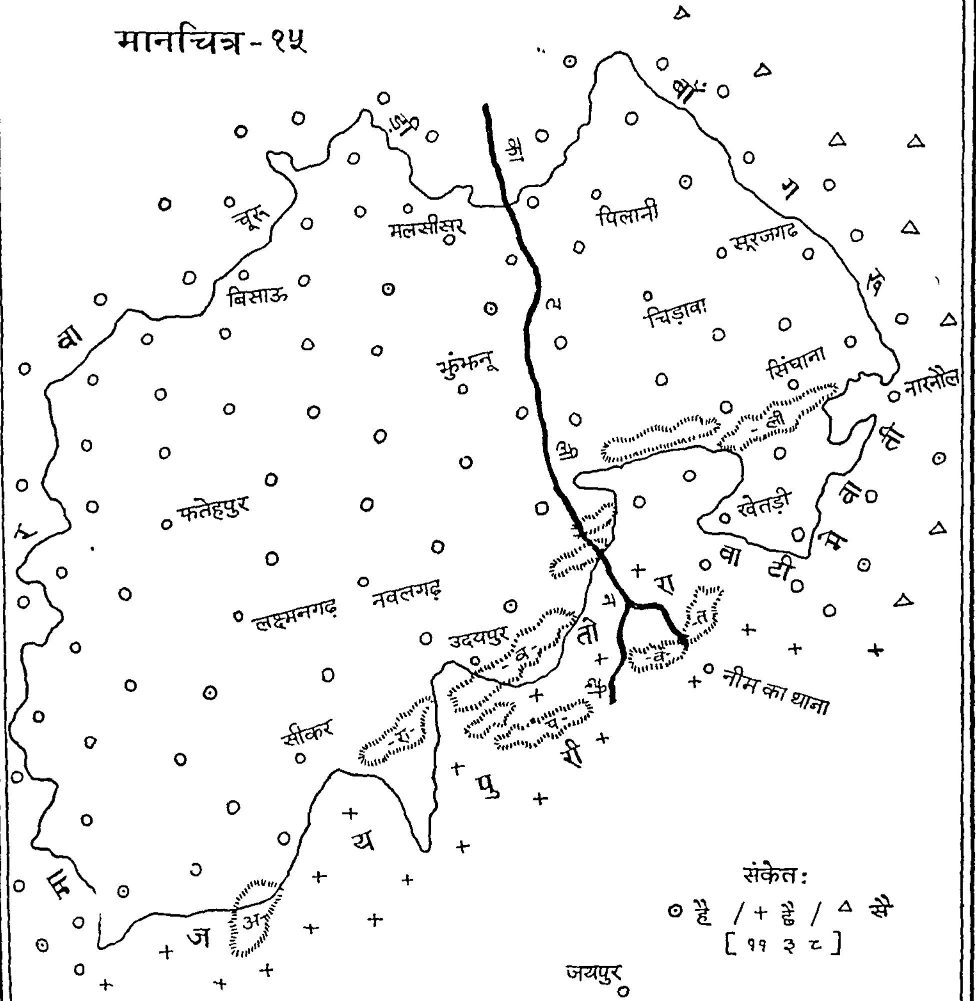
मानचित्र-११



भाषा - भूगोल

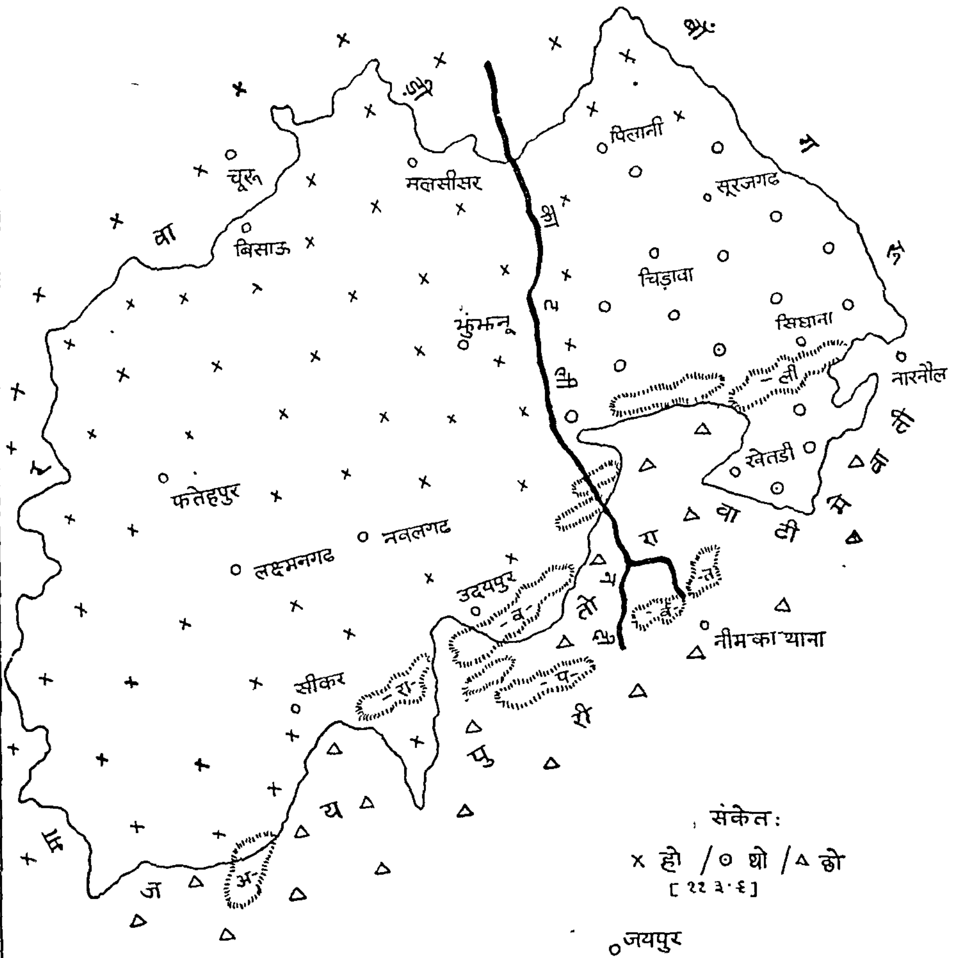
मानचित्र-१२





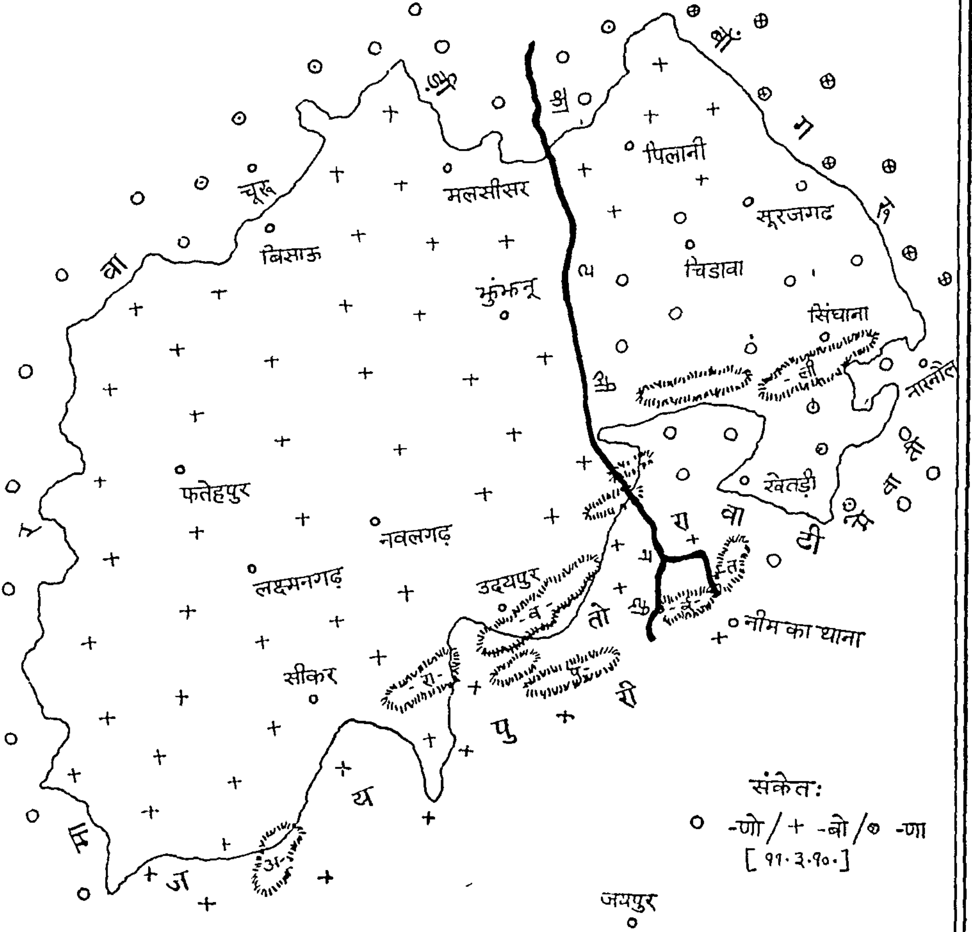
भाषा - भूगोल
मानचित्र - १५
चूरू
मलसीसर
पिलानी
सूरजगढ़
बिसाऊ
चिड़ावा
झुंझनू
सिंघाना
नारनौल
खेतड़ी
फतेहपुर
लक्ष्मनगढ़
नवलगढ़
उदयपुर
नीम का थाना
सीकर
जयपुर
संकेत:
है / + हैं / ▵ सै
[११ ३ ८]

मानचित्र-१६

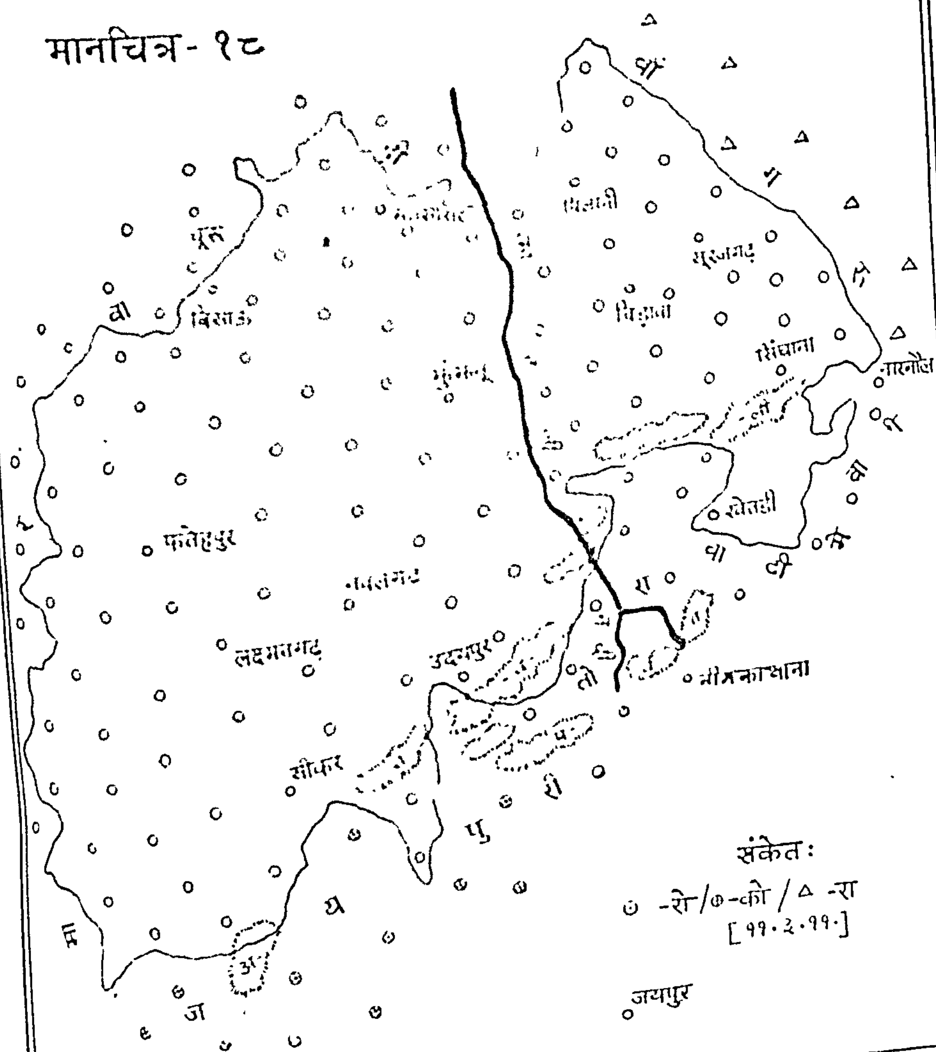

पिलानी
चूरू
मलसीसर
सूरजगढ
बिसाऊ
चिड़ावा
झुंझनू
सिंघाना
नारनौल
खेतडी
फतेहपुर
नवलगढ
लक्ष्मनगढ
उदयपुर
नीम-का-थाना
सीकर
संकेत:
× हो / ○ थो / △ छो
[२२ ३·६]
जयपुर

भाषा-भूगोल

मानचित्र-१७



मानचित्र-१८


चूरू
बिसाऊ
झुंझुनू
पिलानी
सूरजगढ़
चिड़ावा
सिंघाना
नारनौल
खेतड़ी
फतेहपुर
नवलगढ़
लक्ष्मणगढ़
उदयपुर
सीकर
नीमकाथाना
जयपुर
संकेत:
○ -रो / ◉ -को / △ -रा
[११.२.११.]

हिन्दी

१ बताओ मेरा नाम क्या है ?
२ मेरी कलम किसने चुरा ली ?
३ मैंने सबको खिला-पिला दिया ।
४ मेरी कमीजें चूहों ने काट डाली ।
५ मेरी पीठ में सूजन आ गई है ।
६ मेरे यहां तुम लोग बरसों से नहीं आए ।
७ यह पत्र मुझसे पढ़ते नहीं बनेगा ।
८ मुझे चार पैसे का गुड़ चाहिए ।
९ मुझे घर जाना है ।
१० मेरे लिए थोड़ी सी काली मिट्टी लेते आना ।
११ उसने मरते दम तक मुझ पर भरोसा किया ।
१२ मुझमें दो-चार बुरी आदतें आ गई हैं ।
१३ मेरी जगह पर जटोरा दो दिन काम कर जायेगा ।
१४ मेरा नौकर बिना बताए भाग गया ।
१५ मेरे खेतों पर बहुत से मजदूर काम कर रहे हैं ।
१६ हम तुम्हारे लिये रुके हैं ।
१७ खाने में हमको कोई एतराज नहीं है ।
१८ हम इससे अधिक कुछ न देंगे ।
१९ हमारा आंगन तुम्हारे से चौगुना है ।
२० हमारे लिये दो कटोरे लेते आना ।
२१ हमारी जेब बिलकुल खाली है ?
२२ जाड़े के मारे हमारी उँगलियाँ बिलकुल ठिठुर गई ।
२३ हमारे साथ बद्रीनाथ चलेंगे ।
२४ कचहरी में हम सब साफ-साफ कह देंगे ।
२५ हमारे यहाँ पिछली साल एक बड़ा जल-सा हुआ था ।
२६ अगली साल हम लोग पं० नेहरू को बुलाएँगे ।
२७ दूध दुहा जा रहा है ।
२८ दूध दुह लो ।
२९ नौकर से दूध दुहा लो ।

३० मैं कहता तो हूँ माँ से भी कहलवा दूं।

३१ चौका धुल रहा है।

३२ नाऊन धो रही है।

३३ बाहर का कमरा नौकर से धुलवाया।

३४ पड़ोस की औरतें पूड़ियाँ दे रही हैं।

३५ मां तू या लक्ष्मी पूड़ियों को दिलवा दो।

३६ सब कपड़े सी गये।

३७ भला इतनी जल्दी किसने सिए?

३८ उसने बड़ी बहिन को चार कुर्तियां सिलाई।

३९ अब सबको एक-एक सिलवा दो।

४० वह सबसे बात करती है तो करने दो।

४१ गाड़ी खाली है, नहीं अभी खाली करवा दूंगा।

४२ मैं खुद खाली कर देता हूँ।

४३ कुआँ खुद गया, किसने खुदवाया?

४४ खुदवाने में कितना खर्च पड़ा?

४५ इस चाबी से खुल जायेगा यह ताला।

४६ तुम नहीं मैं खोल रहा हूँ।

४७ नौकर से कह कर खुलवा दो।

४८ शहद खाया जा रहा है।

४९ वह और मैं दोनों खा रहे हैं।

५० उस रोगी को भी खिला दो।

५१ वैद्य जी खिलवा देंगे।

५२ वहाँ का शोर बहुत दूर तक सुनाई देता है।

५३ माँ व चाची आदि रामायण सुनती हैं।

५४ तू कहाँ से लौट पड़ा?

५५ तू कल मदरसे गया था या नहीं?

५६ माँ आदि को लिवा कर तुम लोग कब आओगे?

५७ तुम रोजाना नमक मांगने आ जाते हो।

५८ तू कल तक कानपुर पहुँच जायेगा, परसों लौट पड़ना।

५९ तूने अपने छोटे भाई को क्यों मारा?

६० तुम लोग जाओ, चाहे न आओ, मैं अवश्य आऊँगा।

६१ मैं खूब जानता हूँ तुमसे यह भी न होगा।

६२ तुमसे यह घर भी जाते नहीं बनता।

६३ अभी तुझमें उठने-बैठने की ताकत नहीं आई ।
६४ तेरा नाम क्या है, जल्दी बतला ।
६५ इस गाँव में तेरी जाति के लोग बहुत हैं ।
६६ यह खेत तेरे नाम लिखा है ।
६७ तेरे ढोर काँजी हाउस में बन्द हैं ।
६८ तेरी चारपाइयाँ आंगन में भीग रही हैं ।
६९ चोरों ने आधी रात को तुम्हारे सन्दूक का ताला तोड़ डाला ।
७० तुम्हारे कन्धे से खून टपक रहा है ।
७१ तुम्हारी आँख में यह ललाई क्यों है ?
७२ आजकल तुम्हारे यहाँ बहुत लोग पड़े हैं ?
७३ तुम लोगों की किसी से नहीं पटती ।
७४ तुम्हारे लिये आटा पिसा हुआ रखा है ।
७५ तुम्हें तुम्हारी सरहज बुला रही है ।
७६ तुम्हारी और उसकी नहीं पटती ।
७७ तुम्हारी साइकिलें पंचर हो गई हैं ।
७८ तुम्हारा अहसान कभी नहीं भूलूंगा ।
७९ तुम क्या खाली बैठे हो ?
८० यह कोई बुरा काम नहीं है ।
८१ यह लड़की किसकी है ?
८२ यह लड़का किसका है ?
८३ ये नौकर किस सेठ के हैं ?
८४ ये मजदूरिनें किस खेत में काम कर रही थीं ?
८५ इसने काली धोतियाँ और साड़ियाँ खरीदी हैं ।
८६ इसमें लम्बा-लम्बा क्या पड़ा है ?
८७ मैं इसके लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ ।
८८ इस धोती का कपड़ा खूब मजबूत है ।
८९ इसका कपड़ा मजबूत नहीं है ।
९० इसके पास से हट जाओ ।
९१ यह नहीं करोगे तो प्यास से मरोगे ।
९२ ये सभी आम अभी अधपके हैं ।
९३ इन सब पर सोने का पानी चढ़ा है ।
९४ इनके जूते बिलकुल टूट गये ।

१५ इन कोठरी के सामनेकी तरफ़ों से कहीं बाहर है।
१६ इस तरह चलने और [illegible] और साथ हो।
१७ इसको [illegible] तुरी के [illegible] है।
१८ इसकी सब [illegible] को बन [illegible] में [illegible]।
१९ इस [illegible] के दो बाहके देखे है।
१०० इसकी [illegible] [illegible] नई है।
१०१ उन्होंने आपने [illegible] को दो [illegible] दे दिया।
१०२ यह [illegible] के [illegible] से [illegible] गई।
१०३ इसे काम [illegible] देता है।
१०४ मेरा [illegible] नहीं है।
१०५ मेरी कागज़ नहीं है।
१०६ यह [illegible] का [illegible] [illegible] है।
१०७ गोव के इस [illegible] से दो [illegible] [illegible] है।
१०८ हिकले में कौन [illegible] [illegible] है।
१०९ [illegible] में से [illegible] में काम नहीं।
११० बच्चे को [illegible] में [illegible] [illegible] [illegible] है।
१११ को बन्ने दो इक बार रख दे।
११२ [illegible] रहे, तुझे [illegible] देखता हूँ।
११३ [illegible] आपसे, बातू मैं, एक बात बताऊँगा।
११४ बात [illegible] के बहुत [illegible]।
११५ दो [illegible] में [illegible] [illegible] [illegible] हो बताया।
११६ [illegible] में आपको [illegible] [illegible]।
११७ [illegible] में [illegible] को [illegible]।
११८ बहुत [illegible] [illegible] कर रखता।
११९ [illegible] [illegible] कहाँ कुछ बातू?
१२० [illegible] लाई के [illegible] में [illegible] सब [illegible] [illegible] [illegible] गई।
१२१ ये [illegible] [illegible] हों है।
१२२ [illegible] बन के बानदर रैन रखा, वहीं बाता बातेगा।
१२३ वो बन के बान्दर रैन रखेगा, वहीं बाता बाते।
१२४ [illegible] [illegible] [illegible] बह मैर बाल बातूगा।
१२५ [illegible] में बाते ने दे कोई एक बाता बाते।
१२६ वो कोई [illegible] [illegible] है, बानकर देख बातू।

१२७ जो बैल राठ गया है, वह बहुत चरने वाला है।
१२८ जो चमारिन कल पीसने आई थी, वह चोर निकली।
१२९ वह चाहे जिसकी लड़की हो, बड़ी शरारतिन है।
१३० यह चाहे जिसका लड़का हो, बड़ा शरारती है।
१३१ शाम के वक्त जो जो आ जाए, सबको भोजन करा देना।
१३२ चमारिन जो रस्सियाँ दे गई थीं, सब टूट गईं।
१३३ जिसमें ताकत हो, सामने आए।
१३४ जिस पर हो वह दे देवे।
१३५ बर्तन में क्या रखा है ?
१३६ क्या सब ढोर छोड़ दिए गए।
१३७ वहाँ कौन-कौन हैं ?
१३८ दरवाजे से कौन निकल गए ?
१३९ डाकू किस ओर भाग खड़े हुए ?
१४० देखो वह कौन जा रहा है ?
१४१ ये कंकड़ियाँ मेरी जेब में किसने डाल दीं ?
१४२ पाँच मन ज्वार किसमें समाएगी ?
१४३ किस पर भरोसा करूँ, सब धोखेबाज हैं।
१४४ अब किसी को न बुलाऊँगा।
१४५ मेरे पास अब कोई न आये।
१४६ क्यों चले आ रहे हो ?
१४७ बैलों को धीरे-धीरे क्यों नहीं चलाते ?
१४८ किसी से कुछ मत कहना।
१४९ उसके यहाँ किस पर बैठोगे ?
१५० इसके यहाँ किसलिये जा रहे हो ?
१५१ छोटी सन्दूक में कुछ भी नहीं है।
१५२ लाकर दे दो, देकर चले जाओ।
१५३ हँसकर कहलाना अच्छा नहीं है।
१५४ छत होकर निकल जाना।
१५५ तालाब के किनारे घूमने चलेंगे।
१५६ लेकर हिफाजत से रख लेना।
१५७ खिला-पिलाकर बड़ा कर देना हमारा कर्त्तव्य था।
१५८ कह कर कौन बुरा होवे।
१५९ ज्यादा क्या लिखूँ, आप जबाब अवश्य देना।

१६० तुम आओ चाहे न आओ, लेकिन मैं न आऊँगा।
१६१ हम मामा के घर कभी न आएँगे।
१६२ बिटिया को लिवाने पठाने हम जाएँगे।
१६३ खाते में ही उसे चिट्ठी मिली थी।
१६४ चलते-चलते वह बिलकुल थक गई।
१६५ वह ऐसी अच्छी तरह खेल रही थी।
१६६ ये आम कई दिन से रखे हुए थे।
१६७ दूकान पर वह यों ही पड़ा रहा करता था।
१६८ आकर बनिये के यहाँ से ले जाइए।
१६९ यहाँ लोधी बहुत बसते हैं।
१७० यह ठाकुरों की बस्ती है।
१७१ इस ओर ब्राह्मणों की बस्तियाँ अधिक हैं।
१७२ बूँदे पड़ते ही सब ढोर तितर-बितर हो गए।
१७३ मेरे होते हुए आप निश्चित रहें।
१७४ तू अपना नाम बतला।
१७५ क्या तू अपना नाम बतलाएगा?
१७६ नौगांव किस ओर है?
१७७ जलती आग में उसका पैर फिसल पड़ा।
१७८ पन्द्रह दिन के लिये हमें महाभारत बँचवाना है।
१७९ अगर तुम्हें जाना हो तो कल चले जाना।
१८० मैं इसे लिये जाता हूँ।
१८१ खाना खा लेना चाहिये।
१८२ घोड़े के मारे वह दोपहर को राठ पहुँचा।
१८३ मेरा काम इतनी चिड़ियों से नहीं चलेगा।
१८४ इतना तो बहुत है, बस अब कुछ नहीं।
१८५ जैसा बोवेगे वैसा काटोगे।
१८६ कुत्ता जैसे ही निकला, उसने लाठी चलाई।
१८७ तुम्हें कितनी चाहिये?
१८८ तुम किस दरजे में पढ़ते हो?
१८९ तुम कैसे इतने रुपये में काम चला लेते हो?
१९० जरा वहाँ को हट जाओ, क्योंकि यहाँ चने का बोरा रखना है।
१९१ उस दिन की तरह देर मत करो।
१९२ वह कहाँ गया था?

१९३ उसकी तरह मैं भी गंगाजी में नहाने जाऊँगा ।

१९४ उस दिन शायद वह भी आ जाए ।

१९५ तू भी आया, तो भी काम पूरा नहीं हुआ ।

चिड़ावा (ज़िला झूंझनू)

१ बता मेरो नांव् के है ?
२ मेरी कलम् कुण् चोर ली ?
३ मैं सबनैं खुवा-पिया (प्या) दियो।
४ मेरी कमीचा चूसा काट् गेरी।
५ मेरी कमर् (मंगर्) मैं सोई आ गी है।
६ मेरै अठै थे लोग् बरसां सैं कोन्या आया।
७ या चिट्ठी (पत्री) मेरसैं पढ़ता कोन्या वणैगी।
८ मनैं च्यार् पीसां को गुड़् चाए।
९ मनैं घर् जाणो है।
१० मेर ताईं जरा सी काळी माटी लेतो आए।
११ वो मरता दम् तक् मेरपर् भरोसो कर्यो।
१२ मेर मांय् दो च्यार् खोटी वाण् (आदत्) आ गी है।
१३ मेरी जगां जटोरो दो दिन् काम् कर् जावैगो।
१४ मेरो नोकर् विन वताया भाग गो।
१५ मेरा खेतां पर् वोळा सारा मजूर् काम् कर् र्या हैं।
१६ म्हे तेर ताईं उट्या (थम्या) हां।
१७ खाण् मैं म्हानैं कोई आंट् कोन्था।
१८ म्हे ईं ~ऐंसैं ज्यादा किमि कोनी देवांगा।
१९ म्हारो आंगण् तेरासैं चोगणो है।
२० म्हार ताईं दो कचोळा लेतो आए।
२१ म्हारी गोजी एकदम् खाली है।
२२ जाडा कै मारै म्हारी आंगळियां एकदम् ठिर्गी।
२३ म्हारै साथ् वदरीनाथ चालोगा ?
२४ कचेड़ी मैं म्हे लोग् साफ्-साफ् कह् (खै) देवांगा (द्यांगा)।
२५ म्हारै उरै पैल्की (गैलड़ी) साल् एक् भारी तमासो हुयो थो।
२६ आगली साल् म्हे लोग् पण्डत् नेरू नैं बुलावांगा (वलावांगा)।
२७ दूद् दुयो जार्यो है।
२८ दूद् दू ले।
२९ नोकर् सैं दूद् दुवा ले।
३० मैं केहूँ (खूं) तो हूँ मां सैं बी कुह्वा (खुवा) वेऊँ (द्यूं)।

३१ चौको धुपर्यो है।
३२ नाण् धोरी थी।
३३ बार को कमरो नोकर् बी धुपायो।
३४ पाड़ोसियाँ पूड़ियाँ देरी है।
३५ या तो तू या लिच्छमी बिण् पूडियाँ नैं दिवा द्यो।
३६ सगळा कपड़ा सिम् गया (सिम् गा)।
३७ हैं, इत्ती जल्दी (इत्तो बेगो) कुण् सीम्या।
३८ यो बड़ी भाण् ताँई च्यार् कुड़तियाँ सिमाई।
३९ इब सब नैं एक् एक् सिमा दे।
४० वा सबसैं बात् करै है तो करण् दे।
४१ गाडी खाली (रीती) है, नई तो इबी खाली करा द्यूँगो(देऊँगो)।
४२ मैं आप् खाली कर् देऊँ (द्यूँ) हूँ।
४३ कुवो खुद् गो, कुण् खुदायो?
४४ खुदाण् मैं कित्तो खर्चो बैठ्यो?
४५ ऐं ताळी सैं खुल् जावैगो यो ताळो।
४६ तू थोड़ी, मैं खोल् र्‌यो हूँ।
४७ नोकर् नैं कैर् (खैर्) खुला दे।
४८ सैत् खायो जार्यो है।
४९ वो अर् मैं दोनूँ खा र्‌या था।
५० बैं बेमार् (रोगी) नैं बी खुवा दे।
५१ बैंज्जी खुवा देवैंगा (देगा)।
५२ उठै (बठै) को रोळो भोत् दूर् (घणी दूर्) तक् (ताईं) सुणाई पड़ै है।
५३ माँ-काकी होर् रामायण् सुणै है।
५४ तू कठै सैं (कठ्या सैं) ओटो आयो?
५५ तू काल् इस्कूल् गयो थोक् कोनी?
५६ माँ होराँ नैं लिवार् थे कद् आवोगा?
५७ तू रोजीना लूण् माँगण् आ जावै है?
५८ तू काल् ताँई कानपुर् पूँच् जावैगो (जागो) परस्यूँ ओटो आए।
५९ तू अपणा (अपणै) ल्होड़ता (छोटा, छोटका, छोटणिया) भाई नैं क्यूँ मार्यो?
६० थे लोग् आवो, चाए मता आवो, मैं तो जरूर सैं ज़ाऊंगो।
६१ मैं आच्छी तरियाँ (खूब) जाणूँ हूँ, तेरसैं यो बी कोनी होवैगो (होगो)।
६२ तेरसैं यो घर् को छायो जावै ना?
६३ इबी तेरसैं उठणा-बैठणा की ताकत् को आई ना।

६४ तेरो नांव् के है, वेगो सो (जल्दी सी) बता ।

६५ ऐं गांव् (गाम्) में तेरी जात का लोग् बोळा (भोत्) है ।

६६ यो खेत् मेरे नाम् लिख्यो है ।

६७ तेरा डाण्डा बाड़ा (दवाखाना) में बन्द है ।

६८ तेरी गाटां आंगण में भीज् री है ।

६९ चोर आधी रात् नै तेरी पेटी को ताळो तोड् गेयां ।

७० तेरा कान्दा (खाधा) सैं लोई टपकै है ।

७१ तेरी आंख् में या ललाई क्यूं है ?

७२ आज् काल् तेर अठै (उरै) बोळा लोग् पड्या है ।

७३ ये लोगां नै कैसे ई पटै ना ।

७४ तेरे ताईं आटो (चून्) पिस्योड़ो रख्यो है ।

७५ तनै तेरी साळाहेली बुला री है ।

७६ तेरी अर् ये की के पटै कोन्या ?

७७ तेरी तायकिलां पिचर् हो गी है ।

७८ तेरो ईसान् (कर्योड़ो) कदे ई कोनी भूलूं ।

७९ तू के ठाली बैठ्यो है ?

८० यो कोई बुरो (खोटो) काम् कोनी ।

८१ या छोरी कै की है ?

८२ यो छोरो कै को है ?

८३ यै नोकर कै सेठ् का है ?

८४ यै मजूणियां कै खेत् में काम् करै थी ।

८५ या काळी धोतियां अर् साड़ियां खरीदी है ।

८६ ऐं में लम्बो-लम्बो यो के पड्यो है ?

८७ मैं ऐं कै ताईं सो किऊं (सोक्यूं) करण् नैं त्यार् हूं ।

८८ ऐं धोती को कपड़ो लाठी की जात् (भोत् ठाडो) है ।

८९ ऐं को कपड़ो ठाडो कोनी ।

९० ऐं कनै सैं हट् ज्या(चल्यो जा) ।

९१ यो ना करैंगो तो तू तीस् (प्यास्) सैं मरैंगो ।

९२ यैं सगळा (सारा) आम् इवी काचा है ।

९३ अण् सबां पर् सोना को पाणी चढ़्यो है ।

९४ अण् का जूता एकदम् टूट् गा ।

९५ अण् लुगायां का आदमी (मोट्यार) परस्यूं सैं आया कोनी ।

९६ ऐं पर् (पै) चादरा अर तकियो ओर् लगा दे ।

१२९ वा चाए जैंकी छोरी (बेटी) हो .भोत् कुबदण् (नागी) है।
१३० यो चाए जैंको छोरो (बेटो) हो .भोत् कुबदी (नागो) है।
१३१ सांज् कै टेम् जो-जो आ जावै सब नै रोटी खुवा दिए (जिमा दिए)।
१३२ चमारियां जो बरियां दे गी थी .सगळी टूट् गी।
१३३ जैं में ताकत् हो .सामनै आवै।
१३४ जैं कनै हो .वो दे दे।
१३५ कासण् मैं के घर्यो है ?
१३६ के सब् ढाण्डा खोल् दिया गया ?
१३७ बठै (उठै) कुण्-कुण् है ?
१३८ दरूजा सैं कुण् निकल् (नीसर) गो ?
१३९ धाड़ी (घाड़ैती) कठिनै भाग् गा ?
१४० देख् .वो कुण् जार्यो है ?
१४१ यै कांकरी मेरी गोजी मैं कुण गेर् दी (देई)।
१४२ पांच् मण् जुवांर् कैं मैं नावड़ैगी।
१४३ कैंपैं भरोसो करूं .सगळा धोकाबाज् (ठग्) है।
१४४ इब् कोई नैं वी कोनी बुलाऊं।
१४५ मेरै कनै इब् कोई न आवै।
१४६ क्यूं चल्यो आर्यो है ?
१४७ बळदां नैं होल्यां-होल्यां (धीरैं-धीरै) क्यूं कोनी चलावै ?
१४८ कोई सैं किमि मता कै ये (खैए)।
१४९ वैं कै अठै कैं पै बैठैगो ?
१५० ऐं कै अठै क्यांताईं जार्यो है ?
१५१ छोट्की पेटी मैं किमि बी ना (किऊं कोन्या)।
१५२ ल्यार् दे दे .देर चल्यो जा।
१५३ हांस् कर् (हंस कर्) कुहाणो (खुवाणो) चोखो कोनी।
१५४ छात् ऊपर् कै निकल् जाए।
१५५ जोड़ा कै पाळ् घूमण् (हांडण्) चालांगा।
१५६ लेर् सम्हाळ् सैं धर् लिए।
१५७ खुवा-प्या (पिया) कर् बडो कर् देणो म्हारो फर्ज (फरज्) थो।
१५८ कैर् (खैर्) कुण् बुरो बणै।
१५९ ज्यादा के लिखूं .थे जबाव् जरूर सैं दीयो (दीज्यो)।
१६० तू आ चाए मता (मना) आ .पण् मैं कोनी आऊंगो।
१६१ म्हे मामा कै घर् कदै कोनी आवांगा।

सीकर नगर

१ बता मेरो नाम् (नांव्) के है ?
२ मेरी कलम् कुण चोर ली ?
३ मैं सगळा नैं खुवा-पिवा (ख्वा-प्या) दिया।
४ मेरी कमीचां नैं चूसा काट् गेरी।
५ मेरा मंगर में सोई आगी है।
६ मेरै अठै थे लोग् बरसां सूं कोन्या आया।
७ या चिट्ठी मेरसूं पढ़ता कोन्या बणे।
८ मनैं च्यार पीसां को गुड़ चाए।
९ मनैं पयां जाणो है।
१० मेरताई जरासी काळी माटी लेतो आए।
११ वो मरता वखत् तक् मेर पर भरोसो कर्‌यो।
१२ मेर मांय (मां) दो च्यार् खोटी बाण् आगी है।
१३ मेरी जघां जटोरो दो दिन् काम् कर् जासी।
१४ मेरो नोकर बिन् बतायां भाज् गो।
१५ मेरा खेतां पर भोत् सारा मजूर काम् करै हैं।
१६ म्हे तेर ताई ठहर्‌या (डट्या) हां।
१७ खावा में म्हानै कोई आंट् (वैदो) कोन्या।
१८ म्हे ईसूं ज्यादा किऊं (किमि) देवां ना।
१९ म्हारो चोक् तेरा (तेरला) सूं चोगणो है।
२० म्हारताई दो कचोळा लेतो आए।
२१ म्हारी गोज एक्‌दम् खाली है।
२२ ठण्ड की मारी म्हारी आंगळी एक्‌दम् ठिर् गी।
२३ म्हारै साथ् बदरीनाथ् चाल्‌स्यो।
२४ कचेड़ी मैं म्हे सब खोल्-खोल् कै कह् (खै) देस्यां।
२५ म्हारै गैलड़ी (लैरली) साल् एक् भारी जुल्‌सो हुयो हो।
२६ आगली साल् म्हे लोग् पण्डत् नेरू नैं बलांस्या।
२७ दूद् दुयो जार्‌यो है।
२८ दूद् दू ले।
२९ नोकर सूं दूद् दुवा ले।

६२ तेर सूं यो घर बी छातो को बणै ना ।
६३ इबी तेर में उठवा-बैठवा की ताकत को आई ना ।
६४ तेरो नाम् (नांव) के है, जल्दी वेगो बता ।
६५ ईं गाम् (गांव) में तेरी जात् का लोग् बोळा है ।
६६ यो खेत् तेरै नाम् मंड्यो (लिख्यो) है ।
६७ तेरा डाण्डा बाड़ा (दवाखाना) में बन्द है ।
६८ तेरी खाटां आंगण में भीज् री है ।
६९ चोर् आधी रात् नै तेरी पेटी को ताळो तोड़ गेर्यो ।
७० तेरा कान्दा (खवा) सूं लोई टपकै है ।
७१ तेरी आंख् में या ललाई क्यूं है ?
७२ आज्काल् तेर अठै बोळा (भोत्) लोग् (मोट्यार्) पड़्या है ।
७३ ये लोगां की कीं सूं ई कोनी पटै ।
७४ तेर ताईं आटो (चून्) पिस्योड़ो धर्यो है ।
७५ तनै तेरी साळाहेली बलारी है ।
७६ तेरी अर् वीं की के पटै कोनी ?
७७ तेरी साय्कलां पिंचर् होगी है ।
७८ तेरो ईसान् (कर्योड़ो) कदै कोनी भूलस्यूं ।
७९ तू के ठाली बैठ्यो है ?
८० यो तो बुरो (खोटो) काम् तो कोनी ।
८१ या छोरी कीं की है ?
८२ यो छोरो कीं को है ?
८३ यै नोकर् कीं सेठ् का है ?
८४ यै मजूणियां कीं खेत् में काम् करै ही ।
८५ या काळी धोतियां और साड़ियां नैं खरीदी है ।
८६ ईं में लम्बो-लम्बो यो के पड़्यो है ?
८७ मैं ईं ताईं सब् किमि (सोक्यूं) कर्वा नैं त्यार हूँ ।
८८ ईं धोती को कपड़ो भोत् ठाडो (लाठी की जात्) है ।
८९ ईं को कपड़ो ठाडो कोन्या ।
९० ईं कनै सूं परै हो जा ।
९१ यो न कर्सी तो तूं तीस् सूं मर्सी ।
९२ यै सारा (सगळा) आम् इबी काचा है ।
९३ अण् सबां पर् सोना को पाणी चढ़्यो है ।
९४ अण् का जूता एक्दम् बोल्गा (टूट् गा) ।

१२८ जो चमारी काल् पीस्बा आई ही, वा बड़ी चोर् (चोट्टी) नीसरी ।

१२९ बा चाए जीं की छोरी (बेटी) हो, भोत् नागी (खोटी, कुबद्‌ण) है ।

१३० यो चाए जीं को छोरो (बेटो) हो, भोत् नागो (खोटा, कुबदी) है ।

१३१ सांज् कै बखत् (टेम्) जो जो आ जाय् (जावै) सारा नैं रोटी करा दिए (जिम दिए) ।

१३२ चमारियां जो बरियां (जेवड़ियां) दे गी ही .सारी टूट गी ।

१३३ जीं मैं ताकत् हो सामनै आवै ।

१३४ जीं पर हो .वो दे देवै ।

१३५ कासण् मैं के धर्यो है ?

१३६ के सारा ढाण्डा खोल् दिया गया ?

१३७ बठै (उठै) कुण्-कुण् है ?

१३८ भारणा (दरूजा) सूं कुण् नीसर् (निकल्) गो ?

१३९ धाड़ैती (धाडी) कठिनैं भाग् चाल्या ?

१४० देख् वो कुण् जार्यो है ?

१४१ यै कांकरी मेरी गोज् मै कुण् गेर् दी ?

१४२ पांच् मण् जुवांर् कीं मैं नावड़सी (आसी) ?

१४३ कीं पै भरोसो करूं .सारा ठग् है ।

१४४ इब् कीं नैं ई बुलास्यूं (बलास्यूं) ना ।

१४५ मेर कनै इब् कोई ना आवै ।

१४६ क्यूं चाल्यो आर्यो है ?

१४७ बळदां नैं धीरै-धीरै (होळा-होळा) क्यूं कोनी चलावै ।

१४८ कीं सूं ई किमि (किऊँ) मता (ना) कए (कहे) ।

१४९ बीं कै अठै (बठै) कीं पै बैठसी ?

१५० ईं कै अठै क्यां ताईं (क्यूं) जार्यो है ?

१५१ छोटकी (ल्होड़ती) पेटी मैं किमि (किऊं) बी कोनी ।

१५२ ल्यार् दे दे .देर् चल्यो जा ।

१५३ हांस् कै (हाँसकर्) कुहाणो (खुवाणो) आच्छो कोनी ।

१५४ छात् पर् सूं (ऊपर कै) नीसर् (निकल्) जा ।

१५५ जोड़ा (तलाब) कै पाळ् (किनारै) हांड् बा (घूम्बा) चाल्स्यां ।

१५६ लेर् सम्हाळ् सूं राख् (धर्) ले ।

१५७ खुवा-पिया (ख्वा-प्या) कर् वड़ो कर् देणो म्हारो फरज (धरम) हो ।

१५८ कैहर् (खैर) । कुण् बुरो बणै ?

१९० जरा उठै (बठै) चल्यो जा .क्यूंक् अठै च्रणा को बोरो घणों है ।

१९१ बीं दिन की जइयां (तरियां) देर् (उवाँर) मता कर् ।

१९२ वो कठै गयो हो ?

१९३ बीं की जइयां में बी गंगाजी में न्हाबा जास्यूं ।

१९४ बीं दिन् स्यात् वो बी आ जावै ।

१९५ तूं बी आयो तो बी (जणा बी) काम् पूरो कोनी हुयो ।

फतेहपुर (जिला सीकर)

१ बता .मेरो नांव् (नाम्) के है ?
२ मेरी कलम् कुण् चोरी ?
३ मैं सैं नैं (सगळा नैं) खुवा-प्या चुक्यो ।
४ मेरी कमीचां नैं चूसा (मूसा) काट् गेरी ।
५ मेरी मंगर्यां मैं सोई आ गी है ।
६ मेरै उरै थे लोग् सालां (बरसां) सूं कोन्या आया ।
७ या चिट्ठी मेर सै पढ़ता कोनी बणै ।
८ मनैं च्यार् पीसां को गुड़ चाए ।
९ मनैं घर्यां जाणो है ।
१० मेर ताईं जरा सी (थोड़ी सी) काळी माटी लेतो आए ।
११ वो आखरी वखत् तक् (ताईं) मेरा पै भरोसो कर्यो ।
१२ मेरा मैं दो च्यार् खोटी बाण् पड़् गी है ।
१३ मेरी जघां (मेरा नाम) पर् चटोरो दो दिन् काम् कर् जासी ।
१४ मेरो नोकर् विना केह्या (कैया) नाठ् गो ।
१५ मेरा खेतां पर बोळा सारा (मोत् सा) मजूर् काम् कर् र्या है ।
१६ म्हे तेर ताईं ठह्र्या (थम्या) हां ।
१७ खावा मैं म्हारै कोई आंट् कोन्या ।
१८ म्हे ईं सूं वेसी किनि (किडं) को देवां ना ।
१९ म्हारो आंगन् तेरा सूं चोगनो है ।
२० म्हार ताईं दो कचोळा लेतो आए ।
२१ म्हारी गोत् एक् दम् सैजी (चाली) है ।
२२ जाडा (ठंड) कै कारनैं म्हारी आंगळियां एकदम् ठिर् गी ।
२३ म्हारै संग (साथ्) बदरीनाथ चाल्स्यो ?
२४ कचेड़ी मैं म्हे मुख्यां कह् देस्यां ।
२५ म्हारै अठै गैलड़ी साल् एक् मारी कुलच्चो (जनाचो) हुयो है ।
२६ आगै की (आगली) साल् म्हे लोग् पं० नेहरू नैं बुलास्यां ।
२७ हुद् हुयो जार्यो है ।
२८ हुद् हु ले ।
२९ नोकर् सूं हुद् हुवा ले ।

३० मैं लूं तो हूं मां सूं वी कुहार (लुवा) देऊं (द्यूं) ।
३१ चोको धुपर्यो है ।
३२ नेव्गण् (नाण्) धो री ही ।
३३ वारनें को कमरो नोकर् वी धुपायो ।
३४ पाड़ोस् की लुगायां पूड़ियां दे री है ।
३५ या तूं या लिच्छमी विण् पूड़ियां नें दिवा दे ।
३६ सगळा (सारा) गावा (कपड़ा) सिम् गा ।
३७ अरे इत्ती जल्दी (इत्तो तावळो) कुण् सीम्या ।
३८ वो वड्ली (वड़ी) भाण् ताई च्यार् कुतियां सिमाई ।
३९ इव् सें नें एक्-एक् सिमा (सिवां) दे ।
४० वा सगळा (सें) सूं वात् करें है .तो करवा दे ।
४१ गाडी खाली है नई तो इवो खाली करा (रिता) देस्यूं ।
४२ मैं आप् खाली कर् देऊं (द्यूं) हूं ।
४३ कुवो खुद्गो कुण् खुदायो ।
४४ खुदावा मे कित्तो खर्चो लाग्यो ?
४५ ई ताळी सूं खुल् जासी यो ताळो ।
४६ तूं कोनी .मैं खोल् र्‌यो हूं ।
४७ नोकर् सूं कॅहर (कॅर्, खॅर्) खुला दे ।
४८ सैत खायो जा र्‌यो है ।
४९ वो अर् मैं दोनूं खार्या हां ।
५० वीं रोगी (वेमार) नें वी खुवा दे ।
५१ वॅद् जी खुवा देसी ।
५२ वठै को रोळो वोळी दूर् तक् सुणाई देवै है ।
५३ मां-काकी होर रामायण् सुणें है ।
५४ तूं कठै सूं ओटो आयो ?
५५ तूं काल् मदसें गयो हो या कोनी ।
५६ मां होरां नें लिवार् थे लोग् कद् आस्यो ?
५७ तूं रोजीना लूण् मांगवा आ जावै है ।
५८ तूं काल् ताई कानपुर पूंच् जासी .परस्यूं बावड़्याए (ओटो आ जाए) ।
५९ तूं अपणा ल्होड़ता (छोटणिया) भाई नें क्यूं मार्यो ।
६० थे लोग् आवो. चाए मता आवो .मैं जरूर् जास्यूं ।
६१ मैं खूब् जाणूं हूं. तेर सूं यो वी कोन्या होसी ।
६२ तेर सूं यो घर् बी छोतो को बणै ना ?

६३ इबी तेर मांय (मैं) उठबा-बैठबा की ताकत् कोन्या आई ।
६४ तेरो नांव् (नाम्) के है .वेगो (तावळो) बता ।
६५ इं गांव् (गाम) मै तेरी जात् का लोग् बोळा (भोत्) हैं।
६६ यो खेत् तेरै नांव् मंड्यो (लिख्यो) है ।
६७ तेरा ढाण्डा बाड़ा (दवाबखाना) मैं बन्द है ।
६८ तेरी खाटां आंगण् मैं भीज् री है ।
६९ चोर् आधी रात् मैं तेरी पेटी को ताळो तोड़ गेर्यो ।
७० तेरा कह्वा (खवा) सूं लोई टपकै (चूवै) है ।
७१ तेरी आंख् मैं या ललायी क्यूं है ।
७२ आज्काल् तेरै अठै बोळा लोग् पड़्या है।
७३ थे लोगां की कीं सूं ई पटै ना ।
७४ तेर तांईं चून् पिस्योड़ो धर्यो है ।
७५ तनैं तेरी साळाहेली बला री है ।
७६ तेरी अर् बींकी पटै कोनी के ?
७७ तेरी साय्कलां पिंचर् हो गी है ।
७८ तेरो ईसान् कदै कोनी भूल्स्यूं ।
७९ तूं के ठाली बैठ्यो है ?
८० यो कोई न्याऊ (बुरो, खोटो) काम् तो कोनी ।
८१ या छोरी कीं की है ?
८२ यो छोरो कीं को है ?
८३ यै नौकर् कीं सेठ् का है ?
८४ यै मजूर्णियां कीं खेत मैं काम् कर री ही ।
८५ यो काळी धोतियां अर साडियां खरीदी है ।
८६ इं मैं लम्बो-लम्बो यो के गिर्यो (पड्यो) है ।
८७ मैं इं ताईं सोक्यूं (सब किमि) कर्बा त्यार् हूं ।
८८ इं धोती को कपड़ो भोत ठाडो (गाढो) है ।
८९ इं को कपड़ो ठाडो कोनी ।
९० इं कनै सूं चल्यो जा ।
९१ यो न कर्सी जणा (तो) तूं तीस् सूं मर्सी ।
९२ यै सगळा ई आम् इबी काचा (अद्पक्या) है ।
९३ अण् साराँ पर् सोना को पाणी चढ़यो है ।
९४ अण् का जूता एक दम बोल् गा (टूट् गा) ।
९५ अण् लुगायां का मोट्यार् परस्यूं सूं कोनी आया है ।

९६ ईं पर चादरा अर तकियो ओर् लगा दे।
९७ ईं नैं लात्–डुकां सूं मार्यो।
९८ ईं की के मजाल् (हिम्मत्) जो इब् चमरौड़ा में बड़ै।
९९ या कुम्हारी दो मटका भेज्या है।
१०० ईं की आंगळियां चिथ् गी है।
१०१ यै आपका (आपणा) सगा-सावां नैं बी धोको दे दियो।
१०२ या छोरियां का कैह्वा (खैबा) मैं आ गी।
१०३ ईं नैं काल् पाछी दे दिए।
१०४ मेरो होण्डल् यो ई है।
१०५ मेरी कलम् या ई है।
१०६ वो इटावा को रैणियो (रैवाळो) है।
१०७ रोगीना का ईं रासा (टंटा) सूं तो मर्बो चोखो है।
१०८ खेल्वा मैं कुण् कीं को धणी (मालिक)।
१०९ खुवाबा मैं मैं कीं सूं ई घट्कर् (कम्) कोनी।
११० टाबर् नैं खुवाबा मैं मनैं मजो आवै।
१११ जो बचै सो ढाक् कै धर् दिए।
११२ डट्यो रै तनैं इबी बताऊँ हूं।
११३ सरका (सरक् आ) कान् मैं एक् बात् बतास्यूं।
११४ थे काकी कनैं गया हा।
११५ दो रैप्टां मैं थारो मुण्डो सूदो हो जासी।
११६ ब्या मैं थानैं चालणो पड़सी।
११७ तमासा मैं आपां बी चाल्स्यां।
११८ तेरी (अपणी) कामळ् सम्हाळ् कर् (सूळ्यां) रखिए।
११९ अपणी (तेरी) रिजाई कठै भूल्यायो ?
१२० ल्होड़िया (छोट्णिया) भाई का ब्या मैं म्हारी (आपणी) सगळी थाळी चोरी हो गी।
१२१ यै हळ् आपणा ई है।
१२२ जो घर् कै मांयनैं पग् धर्यो .वो ई मार्यो जासी।
१२३ जो घर् कै मांयनैं पग् धर्सी .वो ई मार्यो जासी।
१२४ जीं की अट्की होसी .वो मेरै कनै आसी।
१२५ मेळा मैं आपां मैं सूं एक् चल्यो जासी।
१२६ जो कोई सांची मानै आर् देख् जावै।
१२७ जो बळद् राठ् गयो है .वो भोत् चारु (चणियो) है।

१२८ जो चमारी काल् पीसवा आई ही वा बड़ी (भोत्) चोर् नीसरी ।

१२९ बा चाए जीं की छोरी हो .बड़ी नागी (खोटी) है ।

१३० वो चाए जीं को छोरो हो .बड़ो नागो (खोटो) है ।

१३१ सांज् कै बखत् (टेम्) जो जो आ जावै .सैं नै रोटी खुवा दिए (जिमा दिए) ।

१३२ चमारियां जो बरियां (जेबड़ियां) दे गी ही सब् (सारी, सगळी) टूट गी ।

१३३ जीं मैं हिम्मत् हो .सामनै आवै ।

१३४ जीं कनै हो .वो दे दे ।

१३५ कासण् मैं के धर्यो है ?

१३६ के सारा ढाण्डा खोल् दिया गा ?

१३७ बठै कुण्-कुण् है ?

१३८ बारणा (दरूजा) सूं नीसर् गा ?

१३९ धाड़ी कठिनैं भाज् गा ?

१४० देख् .वो कुण् जार्यो है ?

१४१ यैं कांकरी मेरी गोजी मैं कुण् गेरी ?

१४२ पांच् मण् जुवांर् कीं मै नावड़सी (आसी) ।

१४३ कीं पर् भरोसो करूं ! सारा (सगळा) ठग् हैं ।

१४४ इब् कोई न बी कोनी बुलास्यूं ।

१४५ मेरे कनै इब् कोई ना आवै ।

१४६ क्यूं चल्यो आर्यो है ?

१४७ बळदां नै होळा-होळा (धीरां-धीरां) क्यूं कोनी चलावै ।

१४८ कोई सूं किमि मता कइए (खइए) ।

१४९ बीं कै अठै कीं पै बैठ्सी ?

१५० ईं कनैं क्यां तांई (क्यांटै) जार्यो है ?

१५१ छोटणती पेटी मैं किमि बी कोनी ।

१५२ ल्यार् दे दे .देर् चल्यो जा ।

१५३ हांस् कै कुहाणो (खुवाणो) आच्छो कोनी ।

१५४ छात् हो निकल् (नीसर्) जा ।

१५५ जोडा कै पाळ् (किनारै) हांडबा (घम्बा) चाल्स्यां ।

१५६ लेर सम्हाळ् कर धर लिए ।

१५७ खुवा-पिया (ख्वा-प्या) कै बडो कर् देणो म्हारो फरज (धरम्) हो ।

१५८ खैर् (कैहर्) कुण् बुरो बणै ।

१५९ घणो के लिखूं थे जबाब जरूर् सूं दीयो (दीज्यो) ।

१६० तूं आ चाए मता आ .पण् मैं कोनी आस्यूं ।

१६१ म्हे मामा कै घर् कदै कोनी आस्यां ।

१६२ छोरी नै ल्याबा -खिनाबा म्हे जास्यां ।

१६३ खाता मैं ई बीं नै चिट्ठी मिली ही ।

१६४ .चाल्ती-चाल्ती वा भोत् आप्क्याई (हार गी, थकगी) ।

१६५ बा इसी आच्छी तरियां खेल् री ही ।

१६६ यँ आम् कई दिनां सूं धर्या हुया हा ।

१६७ दुकान् पर् वो यूं ई पड्यो रैह्या करै हो ।

१६८ आर् बाणिया के अठै सूं ले जायो (जाज्यो) ।

१६९ अठै लोदी बोळा बसै है ।

१७० यो ठाकरा को ढाणो (बस्ती) है ।

१७१ अठिनैं बामणां की ढाणियां (बस्तियां) बोळी है ।

१७२ छांट् पड्ता ई .सारा ढाण्डा खिण्ड गा (विखर् गा) ।

१७३ मेरै (मेरा) होता हुयां थे बेफिकर् (नचीत्) रहो (रवो) ।

१७४ तू तेरो नांव् (नाम्) बतासी ?

१७५ के तू तेरो नांव् (नाम्) बता सी ?

१७६ नौगांव कठिनै है ?

१७७ बळती आंच् (बास्तै, आग्)मैं बीं को पग् तिसल् (रपट) गो ।

१७८ पन्द्रा दिनां ताईं म्हानैं महाभारत बंचाणी है ।

१७९ जै तू जाणो चावै तो (जणां) तड़कै चल्यो जाए ।

१८० मैं ईं नैं ले जाऊं हूं ।

१८१ खाणो (रोटी) खा लेणो चाए ।

१८२ घोड़ा ताईं वो दुपैरी मैं राठ् पूंच्यो ।

१८३ मेरो काम् इतणी (इत्ती) चिड़ियां सूं कोनी चलै ।

१८४ इत्तो तो भोत् है .बस् .इब् किमि ना ।

१८५ जिसो बोसी उसो (बिसो) काट्सी ।

१८६ गंडक (कुत्तो) जइयां ई नीसर्यो (निकळ्यो) वो डंडो (लाठी) चलायो ।

१८७ तनै कितणी (कित्ती) चाए ।

१८८ तूं कुण् सी मैं पढै है ?

१८९ तूं कइयां इत्ता (इतणा) रिपिया सूं काम् चला लेवै है ?

१९० जरा (तेक) वठिनैं चल्यो जा .क्यूंक अठै चणा को बोरो रखणो (धरणो) है ।

१९१ ऊं दिन् की जइयां (तरियां) देरी मता करिए ।

१९२ वो कठै गयो हो ?

१९३ बीं की जइयाँ (तरियां) मैं वी गंगा जी न्हावा जास्यूं ।

१९४ बीं दिन् स्यात् वो बी आ जावै ।

१९५ तूं बी आयो .तो बी (जीं पर बी) काम् पूरो कोनी हुयो ।



नीमकाथाना (जिला सीकर)

१ बता मेरो नाम् काँई छै ?
२ मेरी कलम् कुण् चुराई ?
३ मैं सबनैं खुवा-प्या दियो ।
४ मेरी कमीचां नैं मूसा काट् गेरी ।
५ मेरो मंगर् सूज् रो छै ।
६ म्हारै ये लोग् कई दिनां सूं कोना आया ।
७ या चिट्ठी मेरा सूं कोना पढी जायगी ।
८ मनैं च्यार् पीसां को गुड़ चाए ।
९ मनैं घरां जाणो छै ।
१० मेरा आटै थोडी सी काळी माटी लेतो आजे ।
११ वो मर्यो -जठ्यां ताईं मेरै पर् विस्वास् राख्यो।
१२ मेरा मैं दो च्यार् खोटी बाण् आगी छै ।
१३ मेरी जगाँ जटोरो दो दिन् काम् कर् जायगो ।
१४ मेरो नोकर् बिना कह्याई भाग् गो ।
१५ मेरा खेताँ मैं भोत् सा मजूर् कामकरै छै ।
१६ म्हे थारी खातर् ठहर्या छां ।
१७ खाबा मैं म्हानैं कोई आंट् कोना ।
१८ म्हे ईसूं ज्यादा किऊँ ई कोन द्यांगा ।
१९ म्हारो चौक् थारा सूँ चौगणो छै ।
२० म्हारै ताईं दो छोटा प्याला लेतो आजे ।
२१ म्हारो गोज्यो बिल्कुल खाली छै ।
२२ दावा की मारी म्हारी सारी आंगळी ठिठुर् री छै ।
२३ म्हारी साथ् बद्रीनाथ चालोगा ।
२४ कचेड़ी मैं म्हे सांची कै चांगा ।
२५ म्हारै अठै पैल् की साल् भोत् भार्यो जल्सो हुयो छो ।
२६ म्हे आगली साल् नेरु जी नैं बुलावांगा ।
२७ दूद् काड्यो जा र्यो है ।
२८ दूद् काड्य ल्यो ।
२९ नोकर् कना सूं दूद् कड्या ल्यो ।

३० मैं कहूँ तो छूं मां सूं भी कह्वा द्यूँ ।
३१ चोको धुप् र्यो छै ।
३२ नाण धोरी छी ।
३३ बारनैं को कमरो नोकर कना धुपायो ।
३४ पाड़ोसन् पूड़ी दे री है ।
३५ तू या लिच्छमी दोनूं जणी पूड़ी दिवा द्यो ।
३६ सारा कपड़ा सिम् गा ।
३७ अरै-इत्ती जल्दी कुण् सीम्या ।
३८ वो बड़ी भाण कै ताईं च्यार कुर्ती सिमाई ।
३९ अब सबनैं एक् एक् सिमा (सिवां) द्यो ।
४० वा सैं सूं बात् करै छै तो करबा द्यो ।
४१ गाडी खाली नहीं छै तो अबी करबा देस्यूं ।
४२ मैं खुद् खाली कर् देस्यूं ।
४३ कुओ खुदगो .ईं नैं कुण् खुदायो ।
४४ खुदाबा मैं कित्तो खर्चो आयो ?
४५ यो ताळो ईं चाबी सूं खुल् जावैगो ।
४६ तू नहीं .मैं खोल् र्यू छूँ ।
४७ नोकर नैं खै कर् खुल्या द्यो ।
४८ सैत् खायो जा र्यो छै ।
४९ बो अर् मैं दोन्यूं खा र्या छां ।
५० बीं रोगी (बेमार्) नैं बी खुवा द्यो ।
५१ बैज्जी खुवा दींगा ।
५२ बठूया को रोळो भोत् दूर् ताईं सुणाई दे र्यो छै ।
५३ मां अर् चाची होर रामायण् सुणै छै ।
५४ तू कठ्या सूं आ गो ?
५५ तू काल् इस्कूल् मैं गयो छोक् कोन्या ।
५६ मां होरां नैं लेकर थे कद् आवोगा ?
५७ तू रोज् की लूण् मांगबा नैं आ जाय् छै ।
५८ तू काल् ताईं कानपुर पूंच् जाय्गो .परस्यूँ ओटो आ जाजे ।
५९ तू तेरा छोटा भाई नैं क्यूं मार्यो ?
६० थे लोग् आओ चाए मता आओ .मैं तो जरूर् जाऊंगो ।
६१ मैं आच्छी तरियां जाणूं छूं तेरा सूं यो बी कोन्या होगो ।
६२ तेरा सूं ईं घर् की छान्या भी कोना बंध सकी ।

६३ अबी तेरा में उठबा-बैठबा की ताकत कोना आई छै।
६४ तेरो नावं (नाम्) कांई छै तेगो बता।
६५ ईं गाम् में तेरी जात् का भेत् लोग् छै।
६६ यो खेत् तेरै नाम् लिख्योड़ो छै।
६७ तेरा डांडा बाड़ा (रबाद्-खाना) में बन्द छै।
६८ तेरी खाटाँ चौक् में पड़ी भीज् री छै।
६९ चोर् आधी रात् में तेरी बन्दूक् को तालो तोड़ गेयो।
७० तेरा कान्धा सूं लोई पड़ र्यो छै।
७१ तेरी आंख् में या ललाई कइयां छै ?
७२ आज्कल् थारै इतरा आद्मी पड़्या छै।
७३ थारी कोई सूं बी कोना बणै।
७४ तेरी खातर् चून् पीस्योड़ो छै।
७५ तनै तेरी साळाएली बुला री छै।
७६ तेरी अर् बै की क्यूं नहीं बणै।
७७ तेरी साइकिल् पंचर हो गी छै।
७८ तेरो ईसान (गुन) कदेई कोना भूल्यूं गो।
७९ तू कांई ठाल्योई बैठ्यो छै।
८० यो कोई बुरो काम् थोड़ोई छै।
८१ या छोरी कुण की छै ?
८२ यो छोरो कुन् को छै ?
८३ यै नोकर् कुन् का सेठ् का छै ?
८४ यै मजूरण् कुण् का खेत् में काम् कर् री छी ?
८५ यो काळी बोतियां अर् साड़ियां खरीदी छै।
८६ ईं नै यो लम्बो लम्बो कांई पड़्यो छै ?
८७ मैं ईं कै ताईं सब् किछं करवाटै त्यार् छूं।
८८ ईं पोती को कपड़ो तो खूब् गाडो छै।
८९ ईं को कपड़ो हळकोई छै।
९० ईं कना नूं परै बस्ता जाजो।
९१ यो न करैगो तो तू प्यास् सूं मरैगो।
९२ यै आज् अबी ताईं तारा ई सावा छै।
९३ यां सारी चीजां पर् सोना को पानी चढ़्यो रो छै।
९४ यां का जूता बिल्कुल् टूट् रा छै।
९५ यां लुगायां का आद्मी दस्सूं नूं कोना आया छै।

९६ ईं पर् चादरा अर् तकियो लगा ल्यो (द्यो)।
९७ ईं नै लातां अर् घूसां सूँ मार्यो।
९८ यां की काँई ताकत् छै जो अब् चमरौड़ा मैं बड़ै।
९९ या कुम्हारी दो मटका भेज्या छै।
१०० ईं की सारी आंगळी चिथ् गी।
१०१ यैं आपका सारा सगा-सोयां सूं बी धोको कर्यो।
१०२ या छोरियां का कैह्बा मैं आ गी।
१०३ ईं नै तड़कै पाछी खिना दीज्यो।
१०४ मेरो होण्डल् यो ई छै।
१०५ मेरी कलम् या ई छै।
१०६ वो इटावा को रैह्वाळो छै।
१०७ ईं रोजीना का टंटा सूं तो मर्बो ई चोखो छै।
१०८ खेलबा मैं काँई बी खै को मालिक् कोना।
१०९ खुवाबा मैं मैं काँई सूं बी कम् कोना।
११० टाबर् नैं खिलाबा (खुवाबा) मैं मनै भारी कुसी होवै छै।
१११ जो बचै बीं नै ढक् कर् मेल् द्यो।
११२ थम् ज्या .तनैं अबी देखूं छूं।
११३ मेरै कनै आओ .थानै एक् बात् खूं।
११४ थे काकी कनै गया छा।
११५ दो थपड़ाँ मैं थारो मुण्डो सीदो हो जागो।
११६ ब्या मैं थानै चाल्णो पड़ैगो।
११७ निमाइस् मैं आपाँ दोन्यूं ई चालांगा।
११८ अपणो कमळ् सम्बाळर् राख जे।
११९ थारी रजाई कठै भूल्यांया।
१२० छोटा भाई कै ब्या मैं म्हारी सारी थाळी खो गीं।
१२१ यैं हळ् तो आपणा ई छै।
१२२ जो घर् मैं पग् मेलैगो वोई मार्यो जावैगो।
१२३ जो घर् मैं बड़ैगो वोई मार्यो जावैगो।
१२४ जीं की अटकी होगी, वोई मेरै कनै आवैगो।
१२५ मेळा मैं आपां मां सूं कोई एक् जणो चल्यो जावैगो।
१२६ जो कोई सांची मानैं .वो आर् देख ले।
१२७ जो बळद् राठ् गयो छै .भोत् चारु छै।
१२८ जो चमारी काल् पीसबा नैं आई छी .बा तो भारी चोट्टी छी।

१२९ वा चाए जीं की छोरी हो .वड़ी नागी छै (भोत् खोटी छै) ।
१३० यो चाए जीं को छोरो हो .वड़ो नागो छै (भोत् खोटो छै) ।
१३१ साँज ताईं जो वी आ जाय् .वीं नै रोटी खुवा दीज्यो ।
१३२ चमारी जो वरियां देगी छीं .वैं सारी टूट् गी ।
१३३ जीं मैं जोर् हो .सो सामणै आवै ।
१३४ जीं कै मांगा वो दे दे ।
१३५ कासण् मै कांई छै ।
१३६ सारा ढाण्डां नैं खोल् दिया के ?
१३७ वठै कुण्-कुण् छैं ?
१३८ दर्वाजा मां सूं निकळ् गया ?
१३९ घाड़ी कठिनैं भाज् गया ?
१४० देख् .वो कुण् जा र्यो छै ?
१४१ यै कांकरां मेरी गोज् मैं कुण् गेर दिया ।
१४२ पांच् मण् जुवाँर् क्यां मैं आवैगी ?
१४३ कीं पर् भरोसो करूं .सव् झूठा छै।
१४४ इव् कहीं नैं वुलाऊं ना ।
१४५ मेरै कनै इव् कोई मत् अइयो (मता आयो) ।
१४६ क्यूं चल्यो आर्यो छै ।
१४७ के वळदां नैं होळी-होळी नहीं चलावै ?
१४८ कहीं नै किमि वी मत् कइए (मता कह्यो) ।
१४९ वठै कीं पर् वैठैगो ?
१५० ईं कै उरै क्यूं जा र्यो छै ?
१५१ छोटी सन्दूक् मैं कुछ् भी ना ।
१५२ ल्या कर् दे दे देकर् चल्यो ज्या ।
१५३ हँस् कर् वोल्णो ठीक कोना ?
१५४ छत् पर् सूं चल्यो जइए (जाए) ।
१५५ तळाव् कै किनारै घूमण (डोलण्) चलांगा ।
१५६ लेकर् सम्हाळ् कर् रख् लिये ।
१५७ खुवाय-पियाय कर् वड़ो कर् देणो म्हारो फर्ज छो ।
१५८ कैह् कर् कुण् वुरो वणै ।
१५९ घणी के लिखूं .थम् (थमी) जुवाव जरूर् दियो (दीज्यो) ।
१६० तू आ अर् मत् आ पण मैं तो आऊंगो ।
१६१ म्हे तो मामा कै घर् कदी आवां ना ।

१६२ छोरी नैं लेबा नैं म्हें जावांगा ।
१६३ खाता-खाता ही बीं नै चिट्ठी मिली छी ।
१६४ चाल्ती-चाल्ती वा भोत् थक् गी ।
१६५ वा इसी आच्छी तरियां खेल् री छी ।
१६६ यै आम् कई दिनां सूं पड्या छा ।
१६७ दुकान् पर वो यूं ई पड़्यो रैहतो (छो) ।
१६८ आकर् बाणिया कै उरै सूं ले जावो ।
१६९ अठै लोदी भोत् बसै छै ।
१७० यो ठाकराँ को पळियो छै ।
१७१ ईं कानी बामणाँ का पळिया भोत् छै ।
१७२ बूँदा-बाँदी होता ई ढाण्डा बिखर गया ।
१७३ मेरै होता हुयाँ थे बेफिकर (नचीत्) रहो ।
१७४ तू अपणो (तेरो) नाम बता ।
१७५ के तू तेरो नाम् बतावैगो ?
१७६ नोगाँव कठ्या नैं छै ?
१७७ बळती आँच् मैं बींको पग् रपट् पड़्यो ।
१७८ पन्द्रा दिनाँ कै ताईं म्हानैं महाभारत् बँचवाणी छै।
१७९ जैं तनैं जाणो होवै तो काल् चल्यो जाए ।
१८० मैं ईंनै लिए जाऊँ छूं ।
१८१ खाणो (रोटी) खा लेणो चाए ।
१८२ घोड़ा ताईं वो दोपैरी नैं राठ् पूँच्यो ।
१८३ मेरो काम् इतरी चिड़ियाँ सूँ कोना चालैगो ।
१८४ इतणो भोत् छै, बस इब कुछ नहीं ।
१८५ जिसो बोवोगा उसो (विसो) काटोगा ।
१८६ कुत्तो जइयाँ ई निकळ्यो, वो लाठी चलाई ।
१८७ तनैं कित्ती चाए ?
१८८ तू कुण सी मैं पढै छै ?
१८९ तू कइयाँ इत्ता रुपियाँ सूँ काम् चला लेवै छै ।
१९० जरा बठै सूँ परै हो ज्या, क्यूँक उरै चणा को बोरो रखणो छै ।
१९१ बीं दिन की तरियाँ देर् मत कर् (मताकर्) ।
१९२ वो कठै गयो छो ?
१९३ बीं की तरियाँ मैं बी गंगा जी न्हाण् ताईं जाऊँगो ।

१९४ वीं दिन स्यात वो वी आ जाय ।

१९५ तू वी आयो तो वी काम पूरो को हुयो ना ।

जयपुर नगर

१ वताओ, म्हारो नाम् कांई छै ?
२ म्हारी कलम कुण् चोरी ?
३ मैं सब नैं लुवा-प्या दिया ।
४ म्हारी कमीजां ऊंदरा काट् नार दी ।
५ म्हारी कमर् मैं सोई आ गी ।
६ म्हारै यै लोग बरसां सैं कोनै आया ।
७ यो कागज म्हारा बांचबा मैं कोनै आवै ।
८ मनै च्यार पीसां को गुड़ चायजे ।
९ मनैं घरां जाणो छै ।
१० म्हारै ताईं थोड़ी-सी काळी माटी लेता आयो ।
११ वो दम निकळवा तक म्हारै ऊपर भरोसो कर्यो ।
१२ म्हारै मैं दो-च्यार बुरी बाण पड़ गयी छै ।
१३ म्हारी ठोर जटोरो दो दिन काम कर जावैलो ।
१४ म्हारो नोकर कह्यां बिना ही भाग गयो ।
१५ म्हारा खेतां पर भोत-सा मजूर काम कर रह्या छै ।
१६ म्हे वां कै ताईं ठहर्यां छां ।
१७ खावा मैं म्हानैं कोई उजर कोनै ।
१८ म्हे ईं सैं बत्ती कांईं ही द्यां नैं ।
१९ म्हांको चौक थां सैं चोगणो छै ।
२० म्हां कै ताईं दो कचोळा लेता आ ज्यो ।
२१ म्हां की जेब नेठ मैं खाली छै ।
२२ सर्दी के मार्यां म्हाकी आंगळ्यां नेठ मैं ठिठुर गी ।
२३ म्हां की साथ बद्रीनाथ चालोला ?
२४ कचैड़ी मैं म्हे सब साफ-साफ कर द्यांला ।
२५ पैल की साल म्हांकै एक बडो जल्सो हुयो छो ।
२६ आइन्दा साल म्हे लोग पंडित नेहरू नैं बुलावां ला ।
२७ दूध दुह्यो जा रह्यो छै ।
२८ दूध दुह ल्यो ।
२९ नोकर सैं दूध दुह्वा ल्यो ।
३० मैं कहूँ छूंक्, मां सैं भी कह्‌वा (कह्वा) द्यूं ।

३१ धोबो धुप रह्यो छै।
३२ नायण धो रही छी।
३३ बार को कमरो नौकर भी धुपजायो।
३४ पाड़ौस की लुगायाँ पूरी दे रह्यो छै।
३५ खै तू खै लिकसी वाँ पूर्यां नैं दिवा दे।
३६ सब कपड़ा सीं गया।
३७ हैं, इतरी जल्दी कुण सींया।
३८ वो बड़ी मैंय कै च्यार कुर्त्यां सिवाई।
३९ अब सब नैं एक-एक सिवाँ द्यो।
४० वा सब सैं बात करै छै तो करबा द्यो।
४१ गाड़ी खाली कोनै तो अबार खाली करा धूंला।
४२ मैं खुद खाली कर धूँ छूँ।
४३ कुओ खुद गयो, कुण खुदायो ?
४४ खुदाबा मैं कित्तो खर्चो आयो ?
४५ ई कूँची सैं खुल जावलो यो तालो।
४६ तू नहीं, मैं खोल रह्यो छूँ।
४७ नोकर नैं कहर खुलवा द्यो।
४८ लहर खायो जा रह्यो छै।
४९ बोडर मैं दोन्यूं खावै छा।
५० ऊँ बेमार नैं भी खुवा द्यो।
५१ बैद वो खुवा देला।
५२ ढंडा को हल्लो भोत दूर तक सुणाई आवै छै।
५३ मांडर काको होर रामायण सुणै छै।
५४ तू कोड़ा सैं पाछो आ गो।
५५ तू काल रूदरसै गयो छोक कोनै ?
५६ मां होरां नैं लेर थे कद आओला।
५७ थे रोजीना लूण सांदबा आ जाओ छो।
५८ तू काल तक कानपुर पौहँच जावलो, परस्यूं पाछो आ जावे।
५९ तू थारा छोटा भाई नैं क्यूं लायो ?
६० थे लोग आओ चाय मत आओ, मैं जरूर जाऊंला।
६१ मैं नींका जाणूं छूं, थारा सैं यो भी कोनै व्है।
६२ थां सैं यो घर भी कोनै छाड्यो जाय।
६३ हाल थारा मैं उठबा-बैठबा की ताकत कोनै आई।

६४ थारो कांई नाम छै, जल्दी बता ।
६५ ईं गांव में थारी जाति का लोग भोत छै ।
६६ यो खेत थारै नाम मांड्यो छै ।
६७ थारा डांडा कांजी हाउस में बन्द छै ।
६८ थारी खाटां आगणै भीजै छै ।
६९ चोर आधी रात नैं थाका मंजूस को ताळो तोड़ नाख्यो ।
७० थांका कांधा सैं खून टपक रह्यो छै ।
७१ थांकी आंख में या लाली क्यूं छै ?
७२ आजकाल थांकै भोत लोग पड़्या छै ।
७३ यांलोगां की कोई सैं भी कोनै वणै ।
७४ यां कै ताईं चून पीस्योड़ो पड़्यो छै ।
७५ या नैं यांकी साळाहेली बुलारी छै ।
७६ थांकी अर ऊं कीं कांई वैठै कोनै ?
७७ थांकी साइकिलां पिंचर हो गी छै ।
७८ यां को ईसान कदे ही कोनै भूलूं ।
७९ थे कांई खाली वैठ्या छो ?
८० यो कोई बुरो काम कोनै ।
८१ या छोरी कुणकी छै ?
८२ यो छोरो कुणको छै ?
८३ यै नोकर किस्या सेठ का छै ?
८४ यै मजूर्यां किस्या खेत मैं काम करै छी ?
८५ या काळी धोत्यां अर् साड़्यां मोल ली छै ।
८६ ईं मैं लम्बो-लम्बो यो कांई पड़्यो छै ?
८७ मैं ईं कै ताईं सब क्यूं करवा नैं त्यार छूं ।
८८ ईं धोती को कपड़ो खूब मजबूत छै ।
८९ ईं को कपड़ो मजबूत कोनै ।
९० ईं कनैं सैं हट जाओ ।
९१ या न करोला तो थे प्यास सैं मरोला ।
९२ यै सारा आम हाल अध पक्या छै ।
९३ ईं सब पर सोना को पाणी चढ्यो हुयो छै ।
९४ यां का जूता नेठ मैं ही टूट गया ।
९५ यां लुगायां का आदमी परस्यूं सैं कोनै आया ।
९६ ईं पर चादर अर तकिया और लगा द्यो ।

९७ ईं नैं लाताँ अर् मुक्काँ सैं मार्या ।

९८ याँ को काँई वूतो ज्यो अब चमरौड़ा मैं घुसै ।

९९ या खुमारी दो घड़ा भेज्या छै।

१०० ईं की आंगळ्याँ कुचल गी ।

१०१ यै तो याँ का सगा सम्बन्ध्याँ नैं भी धोखो दे दियो।

१०२ या छोर्यां का कह्वा मैं आ गी ।

१०३ ईं नैं काल पाछो भेज दीजै ।

१०४ म्हारो होल्डर यो ही छै।

१०५ म्हारी कलम् याही छै।

१०६ वो इटावा को रह्वाळो छै।

१०७ रोज का ईं झगड़ा सैं तो मौत चोखी।

१०८ खेलबा मैं कुण कुणको मालिक ।

१०९ खुवावा मैं मैं काँई सैं कम कोनै।

११० बाळक नैं खिलावा मैं मनैं आनन्द आवै छै।

१११ ज्यो बचै ऊँ नैं ढकर मेल द्यो ।

११२ ऊवो रह, तनैं बार देखूँ छूँ ।

११३ सरको, कान मैं एक बात वताऊँला ।

११४ आप काकी कै गया छा ।

११५ दो थपड़ाँ मैं आपको मूँडो सीधो हो जावैलो ।

११६ व्याह मैं आपनैं चालणो पड़ैलो ।

११७ नुमाइस मैं थे-म्हे भी चालाँला ।

११८ आपणो कामळो सँभाळर राख जे ।

११९ आपणी रजाई कोड़ै भूल्याया ?

१२० छोटा भाई का व्याह मैं आपणी सब थाळ्याँ चोरी चली गी।

१२१ ये हळ आपणा ही छै ।

१२२ ज्यो घर मैं पग मेल्यो, वोही मार्यो जायलो ।

१२३ ज्यो घर मैं पग मेलैलो, वो ही मार्यो जायलो ।

१२४ जीं की अटकैली वो म्हारै कनै आयलो ।

१२५ मेळा मैं आपाँ मैं सैं कोई एक चल्यो जायलो ।

१२६ ज्यो कोई साँच समझै आर देख जाय ।

१२७ ज्यो बैल राठ गयो छै, वो भोत चरैलो ।

१२८ ज्यो चमारण काल पीसबा आई थी, वा वड़ी चोर निकळी ।

१२९ वा चाय जींकी वेटी हो, भोत ऊधमी छै ।

१३० यो चाय जींको छोरो हो, भौत ऊधमी छै।
१३१ साम नैं ज्यो-ज्यो आ जावै, सब नैं ब्यालू करा दीजे।
१३२ चमारण्यां जो रस्स्यां देगी छी, सब टूट गई।
१३३ जीं में ताकत हो, सामनैं आवै।
१३४ जीं कनैं हो, वो दे दे।
१३५ बर्तन में कांईं पड़्यो छै ?
१३६ कांईं सब ढांडां नैं छोड़ दिया ?
१३७ उंडै कुण-कुण छै ?
१३८ भारणा सैं कुण निकळ गया ?
१३९ डाकू कोड़ी कै निकळ भाग्या ?
१४० देखो, वो कुण जा रह्यो छै ?
१४१ म्हारी जेब में ये कांकर्यां कुण पटकी ?
१४२ पांच मण ज्वार कांईं में आवैली ?
१४३ कुण पै भरोसो करूं, सब धोखाबाज छै।
१४४ अब कोई नै भी कोनै बुलाऊंला।
१४५ म्हारै कनै अब कोई न आवै।
१४६ क्यूं चल्या आ रह्या छो ?
१४७ बैलां नैं धीरै-धीरै क्यूं नैं चलाओ ?
१४८ कोई सैं कांईं भी मत कहजे।
१४९ ऊंकै कांईं माळै बैठोला ?
१५० ईं कै कांईं वास्ते चाल रह्या छो ?
१५१ छोटा सन्दूक में कांईं भी कोनै।
१५२ ब्यार दे द्यो अर देर चल्या जाओ।
१५३ हूँनर कहवावो चोखो कोनै।
१५४ डांगलै ढ़ोर निकळ जाग्यो।
१५५ तळाब की पाळ पर घूमबा चालांला।
१५६ फेर संभाळ सैं बात कीजै।
१५७ खवा-प्यार बड़ी कर देवो म्हाँ को काम छै।
१५८ कहर कुण कुणे होवै।
१५९ ज्यादा काँईं लिखूं, आप जवाब जरूर दीज्यो।
१६० थे आओ [illegible], [illegible] मैं कोनै [illegible]।
१६१ म्हे मामा के घरै [illegible] कोनै [illegible]।
१६२ [illegible]

१६३ खाती टेम ऊँ नैं चिट्ठी मिली छी ।
१६४ चालताँ-चालताँ बा नेठ मैं हार गई ।
१६५ बा इसी चोखी तरह् खेलरी छी ।
१६६ ये आम कई दिनाँ सैं पड़्या हुया छा ।
१६७ दुकान माळै वो अइयाँ ही पड़्यो रह् छो ।
१६८ आर बाण्या का सैं ले जाओ ।
१६९ अंडै लोधी भोत बसै छै ।
१७० या ठाकुराँ की बस्ती छै ।
१७१ अंडी कै ब्राह्मणाँ की बस्त्याँ ज्यादा छै ।
१७२ छाँट पड़ता ही सब ढांढा बिखर गया ।
१७३ मैं छूँ जितै आप बेचिन्ता रहो ।
१७४ तू तेरो नाम बता ।
१७५ काँई तू तेरो नाम बतावैलो ?
१७६ नौगाँव कोड़ी कै छै ?
१७७ बळती आग मैं ऊँको पग फिसल गो ।
१७८ पन्द्रा दिन म्हाँनै महाभारत बँचवाणो छै ।
१७९ अगर थाँनै जाणो छै तो काल चल्या जाज्यो ।
१८० मैं ईं नैं ले जाऊँ छूँ ।
१८१ रोटी खालेणी चायजे ।
१८२ घोडा खातर वो दोपहरी मैं राठ पोंहच्यो ।
१८३ म्हारो काम इतरी चिड़्याँ सैं कोनै चालैलो ।
१८४ इतरो तो भोत, बस अब काँई कोनै ।
१८५ जस्यो बोवोला, वस्यो ही काटोला ।
१८६ कुत्तो जइयाँ ही निकळ्यो, वो लाठी बाई ।
१८७ थाँनैं कितरी चायजे ?
१८८ थे किस्या दर्जा मैं पढो छो ?
१८९ थे कैया इतरा रुप्या मैं काम चलाल्यो छो ?
१९० थोड़ा उंडी कै हट जाओ, अंडै चणा को वोरो मेलणो छै ।
१९१ ऊँ दिन की जइयाँ देर मत करो ।
१९२ वो कोड़ै गयो छो ?
१९३ ऊँकी जइयाँ मैं भी गंगा जी मैं न्हावा जाऊँला ।
१९४ ऊँ दिन स्यात वो भी आ जाय ।
१९५ तू भी आयो तो भी काम पूरो कोनै हुयो ।

नारनौल (हरियाना)

१ बता मेरो नाम् के है ?
२ मेरी कलम कोण चुरा ली ?
३ मैंने सबको खुवा-पिया दिया।
४ मेरी कमीचें मूसों ने काट् दी।
५ मेरी पीठ मांय सोई आ गई।
६ उरै लोग कई दिनां सैं नहीं आया।
७ या चिट्ठी मेरा सैं नहीं पढी जाएगी।
८ मुनैं चार पइसा को गुड़ चाये।
९ मुनैं घर जाणो हे।
१० मेरा ताईं थोड़ी सी काळी मिट्टी ले अइये।
११ वो मरता दम तक मेरा पै भरोसो कर्यो।
१२ मेरे मांय दो-चार बुरी आदत पड़ गई हे।
१३ मेरी जघाँ जटोरो दो दिन काम कर ले गो।
१४ मेरो नौकर बिना कह्यां भाग गयो।
१५ मेरा खेताँ मैं घणाई मजूर काम कर र्या है।
१६ हम थारे लिये रुर्याँ हाँ।
१७ खाण में म्हानैं कोई आंट नहीं है।
१८ हम ऐंसैं ज्यादा कुछ नहीं देखाँगा।
१९ म्हारो आँगण थारा सैं चौगणो है।
२० म्हारे ताईं दो कटोरा लेतो अइये।
२१ म्हारी गेज्~गोज् बिल्कुल खाली पड़ी है।
२२ जाडा की मारी म्हारी उंगली ठिर् गई।
२३ आप् म्हारे साथ बदरीनाथ चलोगा।
२४ कचेड़ी में हम सारी साफ-साफ कह् द्याँगा।
२५ म्हारे उरै गैलड़ी साल् एक बड़ो जल्सो हुयो थो।
२६ आगलीं साल हम पण्डत नेरू नैं बुलावाँगा।
२७ दूद निकाळ्यो जार्यो है।
२८ दूद निकाळ ले।
२९ नौकर सैं दूद निकळवाय ले।
३० मैं तो कै ही र्यो हूँ, माँ सैं बी कह्वाय् दूँ।

३१ चोको धुवै है ।
३२ नाण् धो रही (~री) है ।
३३ भाए को कमरो नौकर भी धुवायो ।
३४ पड़ोस की लुगइयाँ पूरी दे रही (~री) है ।
३५ या तो तू या लच्छमी विन् पूरियाँ नैं दुवा दो ।
३६ सारा कपड़ा सिम् गया ।
३७ भइ इतनी जल्दी कोण् सीम् दिया ।
३८ वां वड़ी भाण् नैं चार फिराक् सिमाय् दई ।
३९ इब सब नैं एक्-एक् सिमाय् दे ।
४० वा सब सैं बात् करै तो करण् दो ।
४१ गाडी खाली है, नहीं तो इबी खाली कराय दूंगा ।
४२ मैं आपी खाली कर दूं ।
४३ कुवो खुद गयो, कोण खुदायो ?
४४ खुदाण में के खर्चो आयो ?
४५ ऐं चाबी सैं यो ताळो खुल जायगो ।
४६ तू नहीं, मैं खोल रह्यो(~रयो) हूं ।
४७ नोकर् नैं कैह कर खुलाय दो ।
४८ सैहद खायो जार्यो (~जा रयो) है ।
४९ वो ओर मैं दोनूं खा रह्या था ।
५० वैं रोगी नैं भी खुवा दो ।
५१ वैज्जी खुवाय देगा ।
५२ वठा को रोळो भोत् दूर तक सुण रह्यो है ।
५३ माँ चाची होराँ रामायण सुणै है ।
५४ तू कित् सैं आ पड़्यो ?
५५ तू कल् इस्कूल गयो थोक् नहीं ?
५६ माँ होराँ नैं लेकर तुम कद आवोगा ?
५७ तू रोजीना निमक माँगण आय जावै है ।
५८ तू कल तक कानपुर पौंहच जावैगो, परसूं वापिस आ जइए ।
५९ तू अपणा छोटा भाई नैं क्यूं मार्यो ?
६० तुम आओ चाए मत आओ, मैं जरूर जाऊँगा ।
६१ मैं खूब जाणूं हूँ, तेरा सैं वो नहीं होयगो ।
६२ थारा सैं ऐं घर पर छायाँ वी नहीं करी जाय ।
६३ इवी तेरे माँय उठण-वैठण की हिम्मत नहीं आई ।

६४ तेरो नाम के है ? जल्दी से बता ।
६५ ऐं गाँव् में तेरी जात् का भोत् सा आदमी हैं ।
६६ यो खेत् तेरे नाम लिक्खो है ।
६७ तेरा ढोर काजीहौज में बन्द हैं ।
६८ तेरी खाट आंगण में भीज् रही है ।
६९ चोराँ आदी रात नैं थारी सन्दूक को ताळो तोड़ दियो ।
७० तेरा कन्धा सैं खून् पड़ रह्यो है ।
७१ तेरी आँख में या ललाई क्यूँ है ?
७२ आजकल थारै उरै भोत् गा आदमी पड़्या है ।
७३ थारी कैं सैंबी नहीं बणै ।
७४ थारै लिए पिसो हुयो आटो रख्यो है ।
७५ थानैं थारी साळाहेली बुला रही है ।
७६ के तेरी और बैंकी नहीं बणै ?
७७ थारी सायकिल पिंचर् हो गई ।
७८ थारो कियोड़ो कदी नहीं भूलूंगा ।
७९ तू के खाली बैठ्यो है ?
८० यो कोई बुरो काम नहीं है ।
८१ या छोरी कैं की है ?
८२ यो छोरो कैं को है ?
८३ यै नौकर कुणसा (कैं) सेठ का है ?
८४ यै मजूरणियां कैं खेत में काम् कर रही थी ।
८५ इण काळी धोतियाँ और साड़ियां खरीदी हैं ।
८६ ऐं में यो लम्बो-लम्बो के पड़्यो है ?
८७ मैं ऐं कै ताईं सब कुछ करण नैं त्यार (~तियार) हूँ ।
८८ ऐं धोती को कपड़ो खूब ठाड्डो है ।
८९ ऐं को कपड़ो ठाड्डो नहीं है ।
९० ऐं कना सैं हट जाओ ।
९१ यो नहीं करैगो तो प्यासो (पियासो) मरैगो ।
९२ ये सारा आम् इबी कच्चा ई है ।
९३ इण साराँ पर सोना को पाणी चढ़्यो हुयो है ।
९४ इणका मुड्डा बिलकुल् टूट गया ।
९५ इण लुगइयाँ का आदमी परसूँ सैं नहीं आया ।
९६ ऐं पर चदरा और तकियो लगाय दो ।

१३० वो नाए जैं को छोरी हो, वड़ो नागो है।
१३१ सांज नें जो-जो वी आवै, सव् नें रोटी खुवाय दिए।
१३२ चमारियां जो वरियां दे गई थी, सारी टूट गई।
१३३ जैं में ताकत हो, वो सामणै आ जाए।
१३४ जैं कनै हो, वो दे दे।
१३५ वर्तन में के धर्यो है ?
१३६ के सव डांड छोड़ दिया गया।
१३७ उत कोण-कोण है ?
१३८ दर्वाजा सैं कोण निकळ गया ?
१३९ धाड़ी कैं तरफ भाग् निकळ्या ?
१४० देख वो कोण जा रह्यो है।
१४१ ये कांकरी मेरी जेव में कोण डाल् दी ?
१४२ पांच मण ज्वांर कैसे आयगी ?
१४३ कैं पर भरोसो करूँ, सारा धोखावाज है।
१४४ इव कही नें न वुलाऊँगा।
१४५ मेरे कनै इव कोई न आय।
१४६ क्यूं चल्यो आ रह्यो है ?
१४७ वळदां नैं धीरे-धीरे क्यूं नहीं चलावै ?
१४८ कही सैं कुछ मत कहिए।
१४९ वैं कै उरै कैं पर वैठैगो ?
१५० ऐं कै उरै क्यूं जा रह्यो है ?
१५१ छोटी सन्दूक में कुछ वी नहीं है।
१५२ लाकर दे दो, देकर चल्यो जा।
१५३ हँसकर कुहाणो अच्छो नहीं है।
१५४ छात सै निकळ जाए।
१५५ तळाव कै किनारे घूमण चालांगा।
१५६ लेकर ठीक सै रख लिए।
१५७ खुवा-पिया कर वड़ो कर देणो म्हारो कर्तव थो।
१५८ कैह कर कोण वुरो होवै।
१५९ ज्यादा के लिखूँ, आप् (~थम्) जवाव् जरूर दियो।
१६० तुम आवो चाए ना आवो, पर मैं नहीं आऊँगा।
१६१ हम मामा के घर कदी नहीं आवांगा।
१६२ छोरी नैं ल्याण हम जावांगा।

ओळाई	चक्कर	कठै	कहाँ
ओटो	वापस	कल्डो	कठोर, सख्त
ओळो-सोळो	गोलमाल	कइयाँ	कैसे
ओगण	बुराई	कठिनैं	किधर
ओड़	अन्त	कद	कब
ओड	इतना (केवल-माप)	कनै	पास, समीप
ओलै	गुप्त	कदे-काऊ	कभी कभी
ओलो	दुराव	कस्टो	तंग (कपड़ा)
ओरूँ	फिर	काळ	मृत्यु
ओजूं	फिर	काठ	लकड़ी
ओजणो	डालना (तरलपदार्थ)	काछुवो	कछुवा
ओळुमो	उपालंभ	कागलो	कौवा
कंसळो	खजूर	कासण	बर्तन
कनागता	श्राद्ध पक्ष	कादो	कीचड़
कंगलो	भिखारी	कावो	तुतला
कमीच्	कमीज	कान्दो	प्याज
कवँर	दामाद	काणो	काना
कचोळी	कटोरी	काळजो	कलेजा
कह्वो	कंघा	काचर	एक फल विशेष
कतर्नी	कैंची	कागच्	कागज
कतियो	कैंची	काँपी	फल तरकारी का कटा हुआ एक छोटा टुकड़ा
कमतर	विशिष्ट कार्य		
कचेड़ी	कचहरी	कानी	तरफ
		कांगी	कंघी
कांगसियो	कंघा	कैर	एक विशेष पहाड़ी फल
काळो	काला	कोळो	कुम्हड़ा
काढणो	निकालना	कोथळी	थैली
किमि	कुछ	कोठो	पशुओं को पानी पिलाने का हौज, कमरा
कीकर	एक वृक्ष		
कुस्सो	वेलचा	कोठ्यार	विवाह के पक्वान का कमरा

कुण्डो	चीनी मिट्टी का बड़ा प्याला	कुसी	खुशी
		कुसामद	खुशामद
कुण्बो	परिवार	कुण	कौन
कुल्डो	कुल्ला	कुपातर	शैतान, शरारती
कुड्डो	ढेर	कुळनो	मवाद का दर्द करना
कुंजो	सुराही	कूड़	नकल(किसी व्यक्ति की)
कूणी	कोहनी	कूंट	कोना
कूकरो	कुत्ता	कूंगी	ऊंट के ऊपर रखने की कुर्सी जिस पर व्यक्ति बैठता है।
कूणो	कोना		
कूकड़ी	सूत की लच्छी		
के	क्या	कैरी	कच्चा आम, अम्बिया
कोचको	छेद	खई	जिद्द
खंडेरणो	बिखेरना	खाड	गड्ढा
खाती	बढ़ई	खातण	बढ़ई की स्त्री
खातर	आदर, वास्ते	खिलारो	खिलौना
खिलोचियो	मोजा	खिटणो	निमना
खिनाणो } खिदाँणो }	भेजना	खुरो	पत्थर का ऊंचा ढालू चबूतरा
खुड़को	आवाज	खेरीज	रेजगारी
खैबी	ऐबी.	खोड़लो	नालायक
खोसणो	छीनना	खोटो	बुरा
खोजो	आंख में अंगुली से लगी चोट	गत्तो	दफती
		गदेड़ो	घूंसा
गत	दशा	गंडो	गन्ना, ईख
गंडक	कुत्ता	गंजी	बनियाइन
गदरो	गद्दा	गर्दो	धूल
गदड़को	मुक्का	गमछो	अंगोछा
गाद	सिंघाड़ा	गाळ	गाली
गावो	कपड़ा (पुराना)	गाछ	वृक्ष
गिऊँ~ग्यूँ	गेहूँ	गादड़ो	गीदड़
गिण्डी	गेंद		
गीठी	अंगीठी	गींड	गेंद
गीगलो	बच्चा	गीगो	बच्चा

गीगली	वच्ची	गीगी	वच्ची
गुमान	घमण्ड	गुड़नो	लुढ़कना
गूठी	अंगूठी	गेरणो	गिराना
गैल	पीछे	गैलड़ी	पिछली
गैलड़ो	पिछला	गैलो	रास्ता
गोडो	टांग	गोठ	गोष्ठी
गोखो	गवाक्ष	गोदिम	फूट, झगड़ा
घड़ानो	सोने चांदी के आभूषण वनवाना	घणो	ज्यादा
घालणो	डालना	घासियो	टाट
घिरत्	घी	घीया	लौकी
घीसणो	घसीटना	घुर	जमीन में खुदा हुआ कुत्ते के वैठने का स्थान
घुड्डो	पु० गुड़िया		
घुड्डी	स्त्री० गुड़िया	घुच्चरियो	पिल्ला
घेरणो	दुत्कार देना	घुडाळियाँ	घुटने के वल चलने की क्रिया
चक	वड़ा वताशा	चम्पल	चप्पल
चर्चरी	चटपटी	चवोड़ा	हँसी-ठट्टा
चालणी	चलनी	चानणी	चांदनी
चाक	पहिया	चाळनो	छानना
चाम	खाल	चाँचरो	सिर
चानचक	अचानक	चासणो	प्रकाश, वत्ती जलाना
चिड़स	चरसा	चिर्चणो	चर्चित करना
चिलकणो	चमकना	चील्डो	कपड़े का टुकड़ा
चीलगाड़ी	वायुयान	चीथड़ो	रौंदना, दवाना
चेजारो	कारीगर (मकान वनाने वाला)	चेजो	भवन निर्माण का कार्य
चेपणो	चिपकाना	चेतणो	चेतावनी देना
चुग्गो	पक्षियों को खाने के लिये फेंके गये दाने	चूंखो	रुई का टुकड़ा
चूंखणो	चूसना	चोगरो	कमरा
चोमासो	वर्षाकाल	चोवारो	घर के ऊपर का कमरा

चोखो	अच्छा
चोरणो	चुराना
छाप	अंगूठी
छाजलो	सूप
छानो	छिपा
छूल्को	छिकला
छोरो	लड़का
छोह	क्षोभ
जमाँत	दावत में बैठे व्यक्तियोंकी पंक्ति
जक	चैन
जइयाँ	जैसे
जणा	तब
जामण	जामुन
जाडो	जाड़ा
जिको	जो
जीजी	बहिन
जुगतो	लायक
जेठ	रोटियों का ढेर
जोड़ो	कच्चा तालाब
झेरणो	मथानी
झूरखो	नाखून से नोचने की क्रिया
टाळ	स्थगन
टाबर	वच्चा
टाळो	वहाना
टीबो	टीला (बालू)
टेम	समय
टैणियो	विवाह में मिठाई आदि परसने का विशिष्ट वर्तन
टोपो	वूंद
ट़ोपियो	भगोना

चोणो	चौगुना
छन्नी	तस्तरी
छाँट	बूँद (पानी)
छावडो	टोकरा
छिद्दा-छिद्दा	दूर-दूर
छोरी	लड़की
छोडो	पेड़ की छाल
जनेत	बारात
जँगलो	खिड़की, रोशन-दान
जद	जब
जणनो	जन्म देना
जठिनैं	जिधर
जावतो	प्रबंध
जाणो	जन्म देना
जिनावर	जानवर
जीमणो	भोजन करना
जुगत	युक्ति
जेवड़ो	रस्सा
जोरामर्दी	जवर्दस्ती
झेद	पेट
झोटो	झूले का एक हलकोला
टाँट	सिर
टाँको	कढ़ाई-बुनाई
टिकस	टिकट
टेसण~ठेसण	स्टेशन
टैण	टीन
टोप	पीतल का वहुत वड़ा वर्तन (वड़ा भगोना)
टोपलो	वच्चों की टोपी
ट़ोटो	

टोकणो	धातु निर्मित विशेष प्रकार का घड़ा	टोलो	पेट
ठणकणो	वच्चों का रह-रह कर रोना	ठाडो	मजबूत
ठाँव	स्थान	ठाणो	उठाना
ठाली	खाली (केवल आदमी)	ठिरणो	ठिठुरना
ठीडो	अवधि	ठींचो	उत्सव
डर्पणो	भयभीत हो गया	डकारणो	हजम कर जाना
डस	रस्सी	डाटणो	रोकना, ठहराना
डाकण	चुड़ैल	डाकी	डाकू
डाँस	मच्छर	डाँसरख	एक विशिष्ट खट-मिट्ठा पहाड़ी फल
डील	शरीर	डुक	मुक्का
डुप्टो	दुपट्टा	डूँगर	पहाड़
डैकाणो	वहकाना	डोडो	वड़ी इलायची
डोळी	दीवार	डोलणो	फिरना
ढालो	लंगूरी वन्दर	ढाणी	छोटी वस्ती
ढाणो	गिराना (मकान आदि)	ढाण्डो	ढोर
ढुण्डो, ढूँडो	जीर्ण-शीर्ण मकान	ढोळनो	लुढ़काना (तरल पदार्थ)
ततइयो	वर्र (पीली)	तरेड़	दरार
तकरार	झड़प	तरियाँ	तरह
तड़कै	कल (भावी)	तळै	नीचे
ताप	वुखार	तावड़ो	धूप
तारणो	उतारना	तावळो	जल्दी
तातो	गरम	तिवारी	एक प्रकार की वैठक विशेष
तिसायो	प्यासा	तिसळनो	फिसलना
तिरणो	तैरना	तीस	प्यास
तूमड़ी	कैंडिल	तूमत	आफत
तेक	जरा	तोबा	हाहाकार
तोरूँ	तुरई	थ्यावस	धीरज
थळी	चोखट के पास ऊँचा स्थल	थामणो	रोकना

थे	आप, तुम-लोग	थेपड़ी	कंडा
थोबड़ो	मुँह (हीनता सूचक)	थोबो	थप्पड़
दहाड़ो	डाका	दरूजो	दरवाजा
दर्कार	जरूरत	दस्तूर	नेग
दबाबखाना	काजीहाउस	दाम	पसन्द
दायजो	दहेज	दाग	दाह संस्कार, धब्बा
दाँतण	दातुन	दाख	किसमिस
दाड़ू	अनार	दाफड़	छाला
दिसावर	परदेश	दिनगै	सुबह
दिन घालणो	दुख देना	दीदो	दृष्टि
देही	शरीर	दुरसीस	अभिशाप
दुभाँत	दुराव	दूणो	दुगुना
दोर्यो	कठिन, कष्टप्रद	ध्यात	देहात
धणी	पति, मालिक	धण	मालिकिन पत्नी
धमकाणो	डांटना	धाड़ो	डाका
धाड़ी	डाकू	धापणो	पेट भरना
धीणो	गाय भैंस पालकर	धुंद	कोहरा
	दूध वगैरह का	धुवारो	पीतल का छोटा मटका
	कार्य करना	धूम	भोड़ उधम
धुंदो	मन्द	धूण	आधमन
धूजणो	काँपना	धोळो	सफेद
नटणो	इंकार करना	नक्की	समाप्त
न्याऊ	घटिया	न्योळी	रकम
नपूतो	पुत्रहीन	नचीत	निश्चित
न्होरा	खुशामद	न्हाल	उपकृत
नाड़	गरदन	नार	शेर
नाण्	नाउन	नाज	अन्न
नागो	शैतान	नागी	शरारतिन
नारेळ् / नाळेर्	नारियल	नाँव्	नाम
नाको	किनारा	नावड़नो	समाना
निवाँच्	उष्णता	निमड़नो	समाप्त होना
निकासी	घुड़चढ़ी	निचल्लो	शांत

निपजणो	पैदा होना
नीसरणो	निकलना
नेग	हक, हिस्सा
नेप	नाप
नेवगण	नाउन
पंगत	पंक्ति
पण	किन्तु
परलै	प्रलय, उधर
प्याणो	पिलाना
पपोळनो	सहलाना
पावणो	जामाता
पाड़नो	उखाड़ना
पिरोत	पुरोहित
पिल्युरियो	पिल्ला
पीसो	पैसा
पीनणो	रुई धुनकना
पेड़ी	पोर
पैड़ी	जीने की सीढ़ी
पैलीपोत	सर्वप्रथम
पोट	गट्ठर
पोसाणो	पड़ता वैठना
फाँसो	फंदा
फाँसणो	कुएँ में रस्सी बाँध कर बाल्टी डालना
फेरा	भँवरी
वगाणो	फेंकना
वर्नी	इमरतवान
वनास्पती	नासपाती
वठै	वहाँ
वठिनैं	उधर
वरजणो	मना करना
वगणो	रास्ता चलना
नीड़ै	समीप
नूं	नाखून
नेम	नियम
नेवगी	नाई
नोसो	दुल्हा
पजामो	पैजामा
परै	दूर
परलै दिन	नरसो
पसरणो	फैलना लेटना
पाँख	पंख
पाँती	हिस्सा, साझा
पिछाण्	पहिचान
पिछताओ	पश्चाताप
पिलम्णो	पीछे लटकना
पीर	पीहर
पीलो	पीला, ओढ़नी
पेई	छोटी सन्दूक
पैड़ो	जीना
पून	पवन
पूंगो	नासमझ
पोणो	रोटी वेलना, पिरोना
फटफटियो	मोटर साइकिल
फालो	छाला
फूड़	मुँहफट
फोसरो	मुलायम
वळद	वैल
वरुओ	कुल्हड़
वधाऊ	वातूनी
वधणो	वढ़ना
वइयाँ	वैसे
वड़नो	घुसना
वळनो	जलना

बलाणो	बुलाना	बासण	बर्तन
बास्ते	आग	बाँस	दुर्गन्ध
बाँथ	गलबाँही	बार	देर, दिन
बाण	आदत	बाणच	फल
बाँदरो	बन्दर	बाई	बहिन
बावड़ी	वापिका	बाछो	बछड़ा
बादू	वावदूक, बकवादी	बाट	प्रतीक्षा
बापड़ो	वेचारा	बायदे	शायद, व्यर्थ
बावड़नो	वापस लौटना	बानगी	नमूना
बावलो	पागल	बाची	चुम्बन
बाणो	बाल सवाँरना	बाई	पलंग की पाटी
बाफण	पलक	बिलगणी	खूँटी
बिलाँद	बित्ता	बिट्टो / बीटो	बँधा हुआ बिस्तरा
बिँदारणो	काटना	बिसरणो	भूल जाना
बिरचणो	नाराज होना	बिदोड़नो	मुंह-बनाना
बींद	दुल्हा	बील	बेल (फल)
बीनणी	दुलहिन	बुताणो	बुझाना
बुरकाणो	छिड़कना	वेपार	व्यापार
वेमार	बीमार	बेरो	पता
वेसी	ज्यादा	बैरी	दुश्मन
वैदा	लड़ाई, मूर्ख	वैड	बकवादी
बैरिन्डो	बरामदा	बो, बा	वह (पुं० तथा स्त्री० रूप)
बोजो	वृक्ष	वोळो	बहुत
बोदो	कमजोर	वोर्लो	माथे का स्वर्णाभूषण
वोर्गत	कर्ज देने का कार्य	बोचणो	गोचना
वोबो	स्तन	बभूत	भस्म
भणोई	बहनोई	भरौटी	लकड़ी का बोझ
भाण	बहन	भाठो	पत्थर
भायलो	मित्र	भायली	मित्र (स्त्री०)
भागवान	धनी	भाजणो	भागना
भाण्डणो	सानना	भाणो	रुचिकर लगना
भारणो	बुहारना		

भिचकी	बिचका देने वाली बात	भिड़कणो	माँग-माँग कर खाना
भींजणो	भीगना	भींचणो	दबाना
भींट्णो	अछूत को छूना	भुवाणो	बहाना (किसी वस्तु को)
भुजगनो	मिटरना	भू	बहू
भुणी	गरारी	भूंरो	भंवरा
भेरी	दुंदुभि	भेलो	इकट्ठा
भेगो	भिगोना	भैम्	भ्रांति, वहम
भोत	बहुत	भोडळ	मैगनीज
म्हे	हम	मण	मन (तौल)
मंगर	पीठ	मसाण	श्मशान
मनस्या	इच्छा	मंगतो	भिखारी
मटो	यार	मटको	घड़ा
माटी	मिट्टी	मांगो	लघु घट
मतै	मनमाना	मावस	अमावस्या
माचो	पलंग	मान	बराबर
माळसो	घड़े का ढक्कन	माखी	मक्खी
मायनो	अर्थ	मासो	जरा
माड़ो	दुबला	माजणो	मान-प्रतिष्ठा
माचणो	क्रुद्ध हो जाना	मांडणो	लिखना
माकड़	लंगूरी बंदर	मिनख	आदमी
मिन्ट	मिनट	मिण्डी	शून्य
मिसिल	तजवीज	मीणो	चोर
मींडको	मेंढक	मुट्टो	तिलक
मुण्डो	मुंह	मूँ	मुख
मूँजी	कंजूस	मोरो	नाला
मोरी	नाली	मोट्यार	आदमी
मोडो	जोगी, साधू	मोदो	उल्टा, पट
मोसाखी	मधुमक्खी	मोकळो	ढीला
यो, या	यह	रड़कणो	आँख में कंकरी का गड़ना
राड़	लड़ाई	रांड	विधवा
रांद	बेगार	रासो	गड़बड़ी, झगड़ा
राछ	औजार	राफड़	रगड़ा

राखुंडो	बर्तन माँजने का स्थान	राँदणो	पकाना
रिपियो	रुपया	रीतो	खाली (बर्तन आदि)
रुपियो,	रुपया	रुत	ऋतु
रुळनो	बर्बाद होना	रूसणो	क्रुद्ध होना, रूठना
रूस्योड़ो	रुष्ट	रोज	रुदन
रोजीना	सदैव	रोळो	शोरगुल
ल्हादणो (ना)	खोई वस्तु का मिलना	ल्याणो	लाना
ल्हुकणो	छिपना	लफूसड़ो	तिनका
लड़नो	काटना (बर्र आदि)	लटूमणो	लटकना
लाड	प्यार	लाडो	दुलारी
लाडू	लड्डू	लाम	जल्दी
लीक	लाइन, रेखा	लीलगर	रंगरेज
लीचरो	जीर्ण-शीर्ण जूता	लीर	जीर्ण-शीर्ण कपड़ा
लीतरो	जीर्ण-शीर्ण जूता	लुगाई	औरत
लूंग	लौंग	लूमणो	लटकना
लूण	नमक	लूखो	रूखा
लैंर	पीछे	लैंगदो	लूमड़ (बड़े-लम्बे आदमी को)
लोई (लोय)	खून	लो	लोहा
लोटियो (लट्टू)	बल्ब	वो, वा	वह (पुं० तथा स्त्री० रूप)
स्याणफत	होशियारी	स्यारखो	सदृश
सतरंजी	दरी	सरदा	श्रद्धा, स्वस्थ होना
सल्डक	सड़क	सरनाम	प्रसिद्ध
सगारथ	सम्बन्ध	सल्ला-सूत	विचार-विमर्श
सरणो	काम चलना	सरूपोत	सर्व प्रथम
सगळो	सारा	सरूप	सुन्दर
सरू	शुरू	सबड़नो	चाटना (दाल, कढ़ी) आदि।
सहारणो	भूख से अधिक खा लेना	साँग	स्वांग
सासू	सास	सासरो	ससुराल
साबण	साबुन	साळ	कमरा (जिसमें घर गृहस्थी का सामान रखा जाता है)
सावळ	सुअवसर, अच्छे दिन		
सागी	सगा		
सावो	उत्सव	सामटणो	समेटना

साळाहेली	सरहज
सिल्ली	शिला
सिराणो	सिरहाना
सीत	मुफ्त
सीमट	सीमेण्ट
सीरो	हलुवा
सीळो	शीतल
सीमणो	सीना (क्रिया)
सुसरो	श्वसुर
सुदियाँ	जल्दी
सुगन	शकुन
सूँ	सौगन्ध
सूरमो	वीर
सूळ्याँ	भलीभाँति
सुनेड़	निर्जन स्थान
सोणो	सुन्दर
सोड़	रजाई
सोसणो	सोखना
सोगन	सौगन्ध
हल्लो	अफवाह; शोरगुल
हाजत	इच्छा (मलमूत्र की)
हाँडणो	घूमना-फिरना
हींडणो	झूला
हीयो	हृदय
हुणियारो	संस्कार
हेली	हवेली
हैण्ड	बेकार (अंग)
होळा	होला (हरे कच्चे चने)
सिगड़ी	अंगीठी
सिकोरो	मिट्टी की प्याली
सिरजणो	निर्माण करना
सीर	साझा
सीताफल	शरीफा
सीटो	भुट्टा
सीठणो	ताना, व्यंग्य
सीजणो	पकना
सुपातर	लायक
सुवाँर	हजामत
सुहाँखो	सनेत्र
सूर्	सूअर
सूगलो	गन्दा
सूंतणो	कसकर पोंछना
सैन्दो	मुँहलगा
सोई	सूजन
सोड़ियो	गद्दा
सोब्या	शोभा
हम्बै	हाँ
हामी	हाँ
हाट	बाजार
हिंडोळो	झूला
हीर	अहीर
हुंसेर	याद (माँ-बाप)
हेलो	आवाज, पुकार
हेकड़ी	अकड़
होळै	धीरे

सहायक ग्रन्थानुक्रमणिका

हिन्दी

१. अनन्त लाल मुखर्जी — राजपूताना व जयपुर राज्य का भूगोल, १९३७ ई० ।

२. डॉ० उदय नारायण तिवारी — हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, सं० २०१२ ।

३. पं० कामता प्रसाद गुरु — हिन्दी व्याकरण, संवत् २०१४ ।

४. पं० किशोरी दास वाजपेयी — हिन्दी शब्दानुशासन, १९५८ ई० ।

" " — भारतीय भाषाविज्ञान, १९६० ई० ।

" " — ब्रजभाषा व्याकरण, १९४३ ई० ।

५. डॉ० कृष्ण लाल हंस — निमाड़ी और उसका साहित्य, १९६० ई० ।

६. डॉ० गोलोक विहारी धल — ध्वनि-विज्ञान, १९५८ ई० ।

७. पं० गोविन्द नारायण मिश्र — विभक्ति-विचार, सं० १९६८ ।

८. डा० गौरी शंकर हीराचंद ओझा — राजपूताने का इतिहास, जिल्द १, सं० १९४३

" " " — " " , जिल्द ३, १९३६ ई०

" " " — " " , जिल्द ४, १९४१ ई०

९. चिन्तामणि विनायक वैद्य — महाभारत मीमांसा ।

१०. भिक्षु जगदीश काश्यप — पालि महाव्याकरण, १९४० ई० ।

११. जय चन्द्र विद्यालंकार — भारत भूमि और उसके निवासी, १९३० ई०

" " — भारतीय इतिहास की रूप-रेखा भाग १ तथा २

१२. जगदीश सिंह गहलोत — राजपूताने का इतिहास, सं० १९९४ ।

१३. जगदीश तर्कालंकार — शब्द-शक्ति-प्रकाशिका

१४. जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन — भारत का भाषा-सर्वेक्षण (अनुवाद), उत्तर प्रदेश, १९५९ ई० ।

१५. पं० झाबर मल शर्मा — आदर्श नरेश ।

" " — सीकर का इतिहास ।

१६. डॉ० तेस्सितोरी — पुरानी राजस्थानी, अनुवादक : डॉ० नामवर सिंह, सं० २०१२ ।

१७. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा — हिन्दी भाषा का इतिहास, १९५८ ई० ।

" " — ब्रजभाषा, १९५४ ई० ।

१८. प्रो० नरोत्तम स्वामी — राजस्थानी साहित्य एक परिचय, १९६० ई०

१९. डॉ० नामवर सिंह — हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग १९५४ ई० ।

२०. महामुनि पाणिनि — अष्टाध्यायी ।

२१. पं० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया — राजस्थानी भाषा की रूप-रेखा ।

२२. पृथ्वी सिंह मेहता — हमारा राजस्थान, १९५० ई० ।

२३. डॉ० प्रबोधवेचर दास पंडित — प्राकृत भाषा, १९५४ ई० ।

२४. डॉ० बाबू राम सक्सेना — सामान्य भाषाविज्ञान, १९५६ ई० ।

" " — संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका, १९५५ ई० ।

२५. भर्तृहरि — वाक्यपदीय ।

२६. डॉ० भोला शंकर व्यास — संस्कृत का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन, १९५७ई०

२७. डॉ० मोतीलाल मेनारिया — राजस्थानी भाषा और साहित्य, सं० २००६ ।

२८. डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल — बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, १९६३ई

२९. पं० रामचंद्र भगवती दत्त शास्त्री — शेखावाटी प्रकाश, १९४३ ई० ।

३० डॉ० सरयू प्रसाद अग्रवाल — प्राकृत-विमर्श, सं० २००९ ।

३१. डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी — राजस्थानी भाषा, १९४९ ई० ।

३२. डॉ० शंकर लाल यादव — हरियाना प्रदेश का लोक-साहित्य, सं० २०१७ ।

३३. शिवनाथ — हिन्दी कारकों का विकास, सं० २००५ ।

३४. डॉ० हीरालाल माहेश्वरी — राजस्थानी भाषा और साहित्य, १९६० ई० ।

३५. साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर — पृथ्वीराज रासो की विवेचना, सं० २०१५ ।

1. Angus McIntosh — An Introduction to a Survey of Scottish Dialects, 1961.

2. Archibald A. Hill — An Introduction to Linguistic Structures, 1957

3. A. M. Ghatage — Historical Linguistics And Indo-Aryan languages, 1962.

4. Babu Ram Saksena — Evolution of Avadhi, 1937.

5. Bernard Bloch & G.L. Trager — Outline of Linguistic Analysis, 1942

6. Bertil Malmberg — Phonetics, 1963.

7. Benjamin Elson & Velma Pickett. — An Introduction to Morphology And Syntax, 1962.

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	विकृत	मूल
७	२२	मारवाड़	मारवाड़ें
८	१	ा	की
२१	५	ो	जैं
३२	२६	वर्गी	वर्गो
३४	२२	खण्डेतर	खण्ड
६१	८	मतँ	मत्तँ
६४	१५	दरा	द्रा
६७	८	विवृत्ति	विवृति
६८	३	विवृत्ति	विवति
७५	३०	छूत्	छत्॰
७५	३१	भींत्	भीं त्
७६	३	बाण्	वण्
८०	५	लड्ड	लड्डू
८०	३१	दाड़	दाड़ू
८८	२८	न	नैं
९०	१	तेरो	तेरा
१०१	१	५.	६.
१०८	१	ह्रस्व	ह्लस्व
११४	५	ह्सक्	खसक्
११८	२३	ज	जा
११८	२३	।	स
१२१	२७	रचता	रचना
१२२	४	पुरूप	पुरुप
१३२	५	मख्यत:	मुख्यत:
१३६	३०	गणासी	गुणासी
१५३	१०	लड़ी	लकड़ी
१६४	१७	चुचुर	चुर
१७९	१	अवश्येव	अवश्यमे
१८८	२३	दोखै	दीखै
१९४	१	सधि	संधि
१९८	१३	| का |	का
१९९	९	| मूत् |	| मुत् |